दक्खिनी हिन्दी
और
उसके प्रेमाख्यान

लेखक—
डॉ० रहमत उल्लाह एम० ए० पी-एच० डी०
अध्यक्ष (हिंदी विभाग)
शिबली नेशनल महाविद्यालय, आजमगढ़

अनुभव प्रकाशन
१०८/७२७ श्रीनगर-कानपुर-१२

पूज्य गुरुवरों के सम्मान में जिनके आशीर्वाद से
लेखक को लेखन कला का सम्बल प्राप्त हुआ

१– मुंशी भगवान दास–मड़ियाहूँ–जौनपुर
२– स्व० श्री सत्यनारायण त्रिपाठी–मड़ियाहूँ–जौनपुर
३– स्व० श्री शिवाकान्त वर्मा–मड़ियाहूँ–जौनपुर
४– स्व० डॉ० शिवनारायण लाल श्रीवास्तव–आजमगढ़
५– प्रो० हृदयनारायण सिंह–जौनपुर
६– चि० डॉ० धीरेन्द्र वर्मा–इलाहाबाद
७– डॉ० रामकुमार वर्मा–इलाहाबाद
८– डॉ० धर्मवीर भारती–इलाहाबाद–बम्बई
९– डॉ० जगदीश गुप्त–इलाहाबाद
१०– श्री सैयद सबाहुद्दीन अब्दुल रहमान–आजमगढ़
११– श्री विश्वनाथ लाल शैदा–आजमगढ़
१२– डॉ० भगवती प्रसाद सिंह–गोरखपुर
१३– डॉ० मोहम्मद शरीफ हाशमी–वाराणसी

अपनी बात

प्राचीन भारतीय भाषाओ मे प्रेमाख्यानो का क्रमश विकास होता रहा है। उनमे मध्ययुगीन रोमाचक प्रेमाख्यानो की सख्या अपेक्षाकृत अधिक है। बाद मे हिन्दी सूफी कवियो से इस परम्परा को विशेष बल मिला। इन कवियो ने फारसी मसनवी परम्परा की विशेष प्रेरणा ग्रहण की और भारत मे प्रचलित लोक कथाओ, ऐतिहासिक अथवा अर्ध-ऐतिहासिक आख्यानों के माध्यम से अपने उद्देश्य की पूर्ति की। ससार के अन्य देशों के प्रेमाख्यानो से भी प्रेरणा ली गई। इन्ही विश्वविख्यात प्रेमाख्यानों मे यूसुफ-जुलेखा भी है।

यह ससार के सभी यहूदियो, ईसाइयो तथा मुसलमानो द्वारा परिचित है। इसीलिए इनके साहित्यो में इसके सूत्र बिखरे पड़े हैं। कोरान शरीफ मे सूरे यूसुफ मे इसका अवतरण हुआ है। अधिकांश कवियो ने इसी को अपना आधार बनाया है। फारसी कवियो ने इस सामी कथानक को लेकर एक लोकप्रिय प्रेमाख्यान बना दिया। भारत में सर्वप्रथम दक्खिनी हिन्दी के कवियो ने ही इसको काव्यबद्ध किया इनके द्वारा भारत मे इसका व्यापक प्रचार हुआ। सबसे पहले सैयद मीरा हाशमी ने सन् १६८७ ई० मे इसकी रचना की। इनके दस वर्ष बाद मोहम्मद अमीन गुजराती ने इसको काव्य बद्ध किया मानिक खाँ उमर मे बहुत बाद मे दक्खिनी हिन्दी मे लिखा इनकी रचनायें दक्षिण भारत मे बहुत ही लोकप्रिय हुई। यही कारण है कि दक्षिण भारत के विविध पुस्तकालयो में इसकी हस्तलिखित प्रतियाँ अधिक सख्या में विद्यमान हैं। प्रस्तुत पुस्तक में इन्ही कवियो और उनकी यूसुफ जुलेखा का अध्ययन किया गया है। रचना दक्खिनी हिन्दी में ही हुई है। अत सबसे पहले दक्खिनी हिन्दी का सामान्य परिचय दिया गया है। ग्रन्थ को छोटे-छोटे छ अध्यायो में विभाजित करके विषय को स्पष्ट करने की चेष्टा की गई है। पहले अध्याय में दक्खिनी हिन्दी का सामान्य परिचय देने के लिये उसके विविध नाम गिनाये गये हैं और कवियो की रचनाओ के उदाहरण भी दिये गए हैं। उसके जन्म तथा समकालीन ऐतिहासिक परिस्थितियों का सक्षिप्त परिचय दिया गया है। फिर उसकी भौगोलिक सीमा, उसका मूल आधार देते हुए उस पर पड़े हुए प्रभावो का आकलन किया गया है। उसके विभिन्न रूपों का विस्तार से परिचय भी दिया गया है। अध्याय के अन्त में उसकी सामान्य विशेषतायें बताते हुए कवियों एव रचनाओं की सूची प्रस्तुत की गई है।

दूसरे अध्याय में हिन्दी प्रेमाख्यानों की परम्परा का परिचय दिया गया है। इसमें आख्यान और प्रेमाख्यान का परस्पर सम्बन्ध स्थापित करते हुए, संस्कृत, फारसी, अवधी के सूफी तथा असूफी प्रेमाख्यानों एवं उनके रचनाकारों का परिचय प्रस्तुत किया गया है।

तीसरे अध्याय में दक्खिनी हिन्दी के अन्य प्रेमाख्यानों तथा रचनाकारों का परिचय देते हुए उनके कथानक के साथ साहित्यिक विशेषतायें भी प्रस्तुत की गई हैं। चौथे अध्याय में दक्खिनी हिन्दी के एक विशिष्ट प्रेमाख्यान यूसुफ-जुलेखा का परिचय कराने के लिए उनके रचनाकारों का विस्तार से जीवन परिचय, साहित्यिक विशिष्टतायें एवं जीवन दर्शन की व्याख्या की गई है। पांचवें अध्याय में यूसुफ-जुलेखा प्रेमाख्यान की हस्तलिखित पोथियों का विस्तार से परिचय देते हुये उनकी रचना-तिथि एवं प्रेरणा का भी उल्लेख किया गया है। इसमें प्रत्येक कवि की रचनाओं का अलग-अलग परिचय दिया गया है। छठवें अध्याय में आख्यान का कथानक विस्तार के साथ प्रस्तुत किया गया है।

दक्खिनी हिन्दी का यद्यपि भाषा वैज्ञानिक अध्ययन भी किया गया है और उसके प्रेमाख्यानों पर विस्तार से कार्य हुआ है। किन्तु किसी विशिष्ट प्रेमाख्यान को लेकर विस्तार से उस पर प्रकाश डालने का यह प्रथम प्रयास है। आशा है इससे शोध कार्य के दिशा निर्देशन में पर्याप्त सहायता मिलेगी और तभी यह कार्य सराहनीय माना जायगा।

अन्त में मैं अपने गुरुओं, अभिभावकों, परिवार के सदस्यों के प्रति आभार प्रकट करता हूँ जिनके प्रोत्साहन और निर्देशन से यह कार्य सम्पन्न हो सका है। अपने मित्र श्री सिद्धिनाथ पाण्डेय (प्रकाशक) जी को धन्यवाद देकर अपनी बात समाप्त करता हूँ और प्रेमाख्यानों के अध्येताओं को इस लघु कृति को सहर्ष समर्पित करता हूँ। आशा है इससे लोगों को पर्याप्त लाभ पहुँचेगा।

१५ अक्टूबर १९८३
शिबली नेशनल कालेज
आजमगढ़

रहमत उल्लाह

विषय-सूची

दक्खिनी हिन्दी का परिचय

दक्खिनी हिन्दी

हिन्दी साहित्य की प्राचीन परम्परा का विधिवत जानने के लिए उसके प्रारम्भिक भाषा विषयक रूप को समझना अत्यन्त आवश्यक है। दक्खिनी हिन्दी, *हिन्दी साहित्य एवं भाषा की एक आधारभूत कड़ी है।* हिन्दी साहित्य के विकास म इसका बहुत बड़ा योगदान रहा है। इस दृष्टि से दक्खिनी हिन्दी का विशेष महत्व है।

(१) दक्खिनी हिन्दी का जन्म एवं ऐतिहासिक विवरण

भारतीय आर्य भाषाओं का जन्म १००० ई० के आस पास माना जाता है। कुछ राजनीतिक कारणों से तत्कालीन भारतीय परिस्थितियाँ गम्भीर हो गई थीं। इसी समय स भारत म मुसलमानों का प्रवेश आरम्भ हो गया था। भाषाओं के जन्म-काल म ही इन विदेशी आक्रमणों, उनकी भाषाओं एव साहित्यिक परम्पराओं का प्रभाव भारतीय भाषाओं एव साहित्यो पर नियमित रूप से पड़ने लगा था। यह प्रभाव अस्वाभाविक होते हुए भी आवश्यकता स अधिक था।

भारत पर मुसलमानों के आक्रमण और देश म उनके प्रवेश का क्रम सन् १३ और २३ हि० में हजरत उमर अ० के समय स ही आरम्भ हो गया था। इसके पश्चात मोहम्मद बिन कासिम का अधिकार सिन्ध पर शीघ्र ही हो गया। उन्होंने मुल्तान तक अपना राज्य स्थापित कर लिया। अरबी इतिहासकारों ने भी इसका उल्लेख किया है। अब्बासी खलीफाओं के समय भारत म अरबी राज्यपाल नियुक्त किये गये थे। भारत और अरब का प्राचीन काल से व्यापारिक सम्बन्ध स्थापित हो गया था। अरब के व्यापारिक जत्थे भारत के दक्षिणी पश्चिमी समुद्र तट पर आया करते थे। केरल के समुद्री तट पर अरब की एक जाति मोपाला आज भी निवास करती है जो वर्तमान मालापुरम जनपद मे केन्द्रित है।

भारत में मुसलमानों के आगमन के पश्चात भाषाओं में आदान-प्रदान भी आरम्भ हुआ क्योंकि भाषा ही दो सजातीय अथवा विजातीय समुदायों म परस्पर

विचार विनिमय का प्रधान साधन होती है। मुसलमानो एव भारतीयों के सगम के समय मे ही एक नवीन भाषा का जन्म हुआ जिसका धीरे-धीरे विकास होता रहा। इन्ही दोनो की भाषाओं के सयोग से दक्खिनी हिन्दी का जन्म हुआ। इस भाषा के विविध नामकरण हुए जिसके सम्बन्ध मे आगे विचार किया जायगा।

भारत म प्राचीन काल स ही विभिन्न जातियो का आगमन होता रहा है। उत्तर भारत की जातिया प्रागैतिहासिक युग से दक्षिण मे प्रवेश करती रही हैं। इस प्रकार उत्तर और दक्षिण का राजनीतिक एव सास्कृतिक सघर्ष निरन्तर होता रहा भारत मे मुसलमानो के आक्रमण के बाद तेरहवी शताब्दी ईस्वी म जब अलाउद्दीन-खिलजी ने दक्षिण भारत के कुछ भागो पर अपना अधिकार स्थापित कर लिया तब स यह परम्परा समाप्त हो गई।[1] अलाउद्दीन के अतिरिक्त अनेक परवर्ती मुसलमान बादशाहो का दक्षिण भारत की गरिमा प्रभावित करती रही। सन १३२६-२७ ई० मे मोहम्मद तुगलक ने दक्षिण म देवगिरि को अपनी राजधानी बनाने की योजना से व्यापक अभियान आरम्भ किया। इसके बाद सन १३४७ मे अलाउद्दीन बहमन ने स्वतन्त्र बहमनी राज्य की घोषणा की। इससे दक्षिण के इतिहास मे एक नया परिवर्तन आया। इसके पूर्व ही विजयनगर मे स्वतन्त्र हिन्दू राज्य की स्थापना हो चुकी थी और इसमे दक्षिण का कुछ भाग सम्मिलित भी हो गया था। फीरोज-शाह तुगलक के शासन काल म पूरा दक्षिण भारत दिल्ली के अधिकार के बाहर हो गया। बहमनी राज्य के छिन्न-भिन्न हो जाने पर दक्षिण मे अनेक छोटे-छोटे राज्यों की स्थापना हो गई। बीजापुर म आदिलशाही, गोलकुण्डा मे कुतुबशाही, बीदर म बरीदशाही, बरार म एमादशाही और अहमद नगर मे निजामशाही अथवा आसिफ-शाही सलतनतो का निर्माण हुआ।[2]

मुसलमानो द्वारा राज्यसंस्थापना के लिए दक्षिण अभियान मे प्राय. अभि-जात्य कुल के मुसलमानों का ही बहुमत था जो अपने को दक्खिनी कहते थे। इनमे से कुछ अफगानिस्तान से होते हुए दर्रा खैबर के मार्ग से आकर कुछ दिनो तक पजाब मे तथा दिल्ली के आस-पास रह चुके थे। उनकी भाषा अरबी, फारसी तथा तुर्की थी। दिल्ली के आस-पास बोली जाने वाली खड़ी बोली के सयोग से एक नवीन भाषा का जन्म हो चुका था। नवागन्तुक मुसलमान इसी नवीन भाषा का महल के बाहर प्रयोग करते रहे। इनके दैनिक जीवन एव भाषा पर भारतीय जीवन और भाषा का प्रभाव भी अपेक्षाकृत अधिक था।

इनके अतिरिक्त समुद्र के मार्ग से कुछ मुसलमान दक्षिण भारत मे आ चुके

१. दक्खिनी हिन्दी का उद्भव और विकास-पृष्ठ ६
२. दक्खिनी हिन्दी-पृष्ठ १६

थे जो अपने को आफाकी कहते थे।[1] ये लोग अरबी, फारसी अधिक थे भारतीय कम। ये अपने को विदेशी मुसलमान मानते थे। उत्तर के मुसलमानों को भारतीय मुसलमान कहा जाता था तथा इनको दक्षिण के कुलीन हिन्दुओं का समर्थन प्राप्त था। उत्तर के इन आगन्तुकों में अनेक हिन्दू परिवार भी थे जो सेना एवं शासन की सेवा और सहायता के लिए आये हुए थे।[2] कुछ मुसलमान ऐसे भी थे जो हिन्दू से मुसलमान हुए थे जिनकी भाषा एवं रहन-सहन बिलकुल भारतीय था। भारतीय एवं अभारतीय मुसलमानों में भाषा सम्बन्धी सांस्कृतिक एवं स्वाभिमान का संघर्ष बराबर होता रहा। इस संघर्ष के फलस्वरूप एक नई भाषा का जन्म हुआ।

राजधानी परिवर्तन में मुहम्मद तुगलक के अभियान के सम्बन्ध में हजारों परिवारों का भी स्थानान्तरण हुआ। अनेक परिवार स्थायी रूप से दक्षिण में बस गये थे। इन परिवारों ने भाषा के निर्माण एवं विकास में विशेष योग दिया। भाषा के जन्म के सम्बन्ध में स्थानीय जनता का विशेष योग नहीं था।[3]

इस नवीन भाषा के जन्म में केवल राजन्यवर्ग, अभिजात्य परिवारों, सैनिकों एवं सैनिक अधिकारियों का ही विशेष हाथ नहीं था बल्कि कतिपय सूफी सन्तों एवं धर्म प्रचारकों का भी योगदान था, अलाउद्दीन खिलजी एवं मलिक काफूर के विजय के पूर्व ही अनेक सूफी फकीर दक्षिण के विभिन्न भागों में बस गये थे और अपने अलौकिक एवं पवित्र व्यक्तित्व तथा जीवन के कारण वहाँ वे हिन्दुओं में विशेष लोकप्रिय हो गये थे। वे इस्लाम का निमन्त्रण सर्वसाधारण को दे रहे थे। इन सूफी फकीरों में हाजी रूमी मतूफी ५१५ हि०-११६० ई० सैयद बादशाह मामिन आरिफुल्लाह (५९७ हि०-१२०० ई०), शाह जलालुद्दीन गन्ज खाँ (६४८ हि०-१२४६ ई०), सैयद अहमद कबीर जहाँ कलन्दरी मतूफी (६५६ हि०-१२६० ई०), शाह अली पहलवान मतूफी (६७२ हि०-१२७३ ई०), सूफी सरमन मतूफी (६८० हि०-१२८१ ई०), बाबा शर्फुद्दीन मतूफी (६८७ हि०-१२८१ ई०), बाबा शहाबुद्दीन मतूफी (६९१ हि०-१२९१ ई०), सैयद एजाजुद्दीन हुसैनी मतूफी (६९४ हि०-१२९४ ई०) तथा अनेक अन्य सूफियों ने वहाँ निवास किया।[4] राज्य स्थापित करके शासन किया, व्यापार किया, धर्म प्रचार किया, शिक्षा दी, वहाँ के निवासियों के साथ रहन-सहन था। ऐसी स्थिति में विचार विनिमय के लिए एक नवीन भाषा का विकास हुआ। यही भाषा परवर्ती काल में विशेष रूप में प्रयुक्त हुई। इस भाषा को विविध नाम दिये गये। उन्हीं में एक नाम दक्खिनी भी है।

---

१. दक्खिनी हिन्दी का उद्भव और विकास-पृष्ठ ९
२. दक्खिनी का पद्य और गद्य-पृष्ठ २३
३. दक्खिनी हिन्दी-पृष्ठ २१
४. दकन में उर्दू-पृष्ठ १०

दक्खिनी का नामकरण

यह निर्विवाद सिद्ध हो गया है कि भारत मे मुसलमानों के आगमन के बाद एक नवीन भाषा का जन्म हुआ था। यह नवनिर्मित भाषा भारतीय भाषाओं विशेष रूप से खड़ी बोली पंजाबी तथा अरबी, फारसी, तुर्की आदि अभारतीय भाषा के मिश्रण से बनी थी और जिनका प्रयोग पहले बहुत सैनिक शिविरों में होता था। इस नवीन भाषा को भिन्न भिन्न नाम प्रदान किये गये।

पहले इसको हिन्दी कहा गया क्योंकि वह हिन्द की भाषा थी सैनिक शिविरों से विशेष सम्बन्ध होने के कारण इसको उर्दू भी कहा गया किन्तु यह नाम बहुत बाद मे प्रयोग मे आया। विशेष तथा मर्त एवं रागिनियों से सम्बन्ध होने के कारण इसे रेख्ता भी कहा गया। भाषा का उर्दू नाम अठारहवीं शताब्दी ई० के अन्त में ही प्रचलित हुआ था।[1] इसके पहले इसको हिन्दुई भी कहा जाता था। हिन्दी उर्दू का पुराना नाम है अनेक दक्खिनी और उत्तरी कवियों ने इसको हिन्दी भी कहा है। इसकी पुष्टि के लिए कतिपय कवियों का कथन निम्नलिखित है।

(१) दक्खिनी के प्रसिद्ध कवि वजही ने अपनी रचना सबरस की भाषा को हिन्दी कहा है। हिन्दोस्तान म, हिन्दी जबान सू इस लताफत, इस छन्दोसू नजम होर नसर मिलाकर गुलाकर यू नयी बोल।[2]

(२) शाह बुरहानुद्दीन जानम ने भी अपनी भाषा को हिन्दी कहा है। यह सब बेलू हिन्दी बोल, पुन तू एन्हो सेती घोल।[3]

(३) नवाबिदा अली खां शैदा हैदराबाद (१७१४ ई०) ने अपनी भाषा को हिन्दी होने की घोषणा की है-

> किताब इश्क तू बना हिन्दी जबां सू
> अखिया अलम की कर अब खाब से ज्यू।

(४) हजरत शाह मीरां जी शम्शुल इशाक (९०२ हि०-१४९६ ई०) कहते हैं-

> है अरबी बोल के रे-और फारसी बहुतेरे
> यह हिन्दी बोलो सब-इस आरतू मके सबब[4]

(५) आगाह मतनूफी ने व्यक्त किया है-

---

१. उर्दू साहित्य का इतिहास-सैयद एहत शाम हुसेन-पृष्ठ २४, २५
२. सबरस-वजही-पृष्ठ १०
३. दक्खिनी हिन्दी-पृष्ठ १४
४. दक्खिनी का पद्य और गद्य-पृष्ठ १८८६
५. पंजाब म उर्दू-पृष्ठ १३

न ले बाज मारो का इमाद हुआ
सो हिन्दी जबां यह् रिसाला हुआ[1]

(६) बहरी ने अपनी पुस्तक मन्त्र लगन में लिखा है–
हिन्दी तो जबान है हमारी
कहन लगी हमन को भारी[2]

(७) एक अन्य बुलबुल उपनाम धारी दक्खिनी कवि चन्दरबदन महियार में कहता है–
हुआ बुलबुल ऊपर इस ते जरूरत
दिखाना फर्स को हिन्दी में सूरत[3]

(८) उर्दू कवि फ़िगार ने भी अपनी मसनवी यूसुफ जुलेखा में अपनी भाषा को हिन्दी में कहा है ।[4]
कि हिन्दी कीजिये यह् रंगी कहानी
जहां में छोडिये अपनी निशानी

हिन्दी का पुराना नाम हिन्दुई था। कुछ भारतीय तथा ग्रियर्सन आदि विदेशी विद्वानों ने इसका नाम 'हिन्दुई ही माना है। डॉ० लक्ष्मी सागर वार्ष्णेय ने 'गार्सां द तासी' के फरेन्च इतिहास का अनुवाद हिन्दुई साहित्य का इतिहास, नाम से ही लिखा है। शेख असरफ ने नौसरहार में अपनी भाषा को हिन्दुई ही माना है।

बाजा कैता हिन्दवी में– किस्सयं मकूतल शाह हुवे[5]

आइन अकबरी में भी प्रांतीय भाषा के रूप में हिन्दुई शब्द का ही प्रयोग हुआ है।[6] क्योंकि हिन्दी या हिन्दुई समस्त मुगल बादशाहों की चहेती भाषा मानी जाती थी।[7]

इस भाषा का एक प्रचलित नाम दक्खिनी भी है। यह नाम दक्खिनी राज्यों से सम्बन्ध के कारण ही है।[8] दक्खिनी भारतीय मुसलमानों की भाषा में स्वभावत अरबी, फारसी तथा तुर्की के शब्द अपेक्षाकृत अधिक थे। किन्तु उन लोगों ने स्वाभिमान पूर्वक अपनी भाषा को दक्खिनी या दक्खिनी हिन्दी ही कहा है। किसी

१. दकन में उर्दू-पृष्ठ १४
२. दक्खिनी हिन्दी का उद्‌भव और विकास पृष्ठ २
३. दक्खिनी हिन्दी-पृष्ठ १४
४. यूसुफ जुलेखा फिगार-पृष्ठ ४
५. दक्खिनी हिन्दी-पृष्ठ १४
६. उर्दू साहित्य का इतिहास-पृष्ठ २४
७. मुगल बादशाहों की हिन्दी-पृष्ठ ७१
८. दक्खिनी हिन्दी-पृष्ठ १७

दक्खिनी मुसलमान कवि ने उसका नामकरण उर्दू नहीं किया है।[1] दक्खिनी हिन्दी कहने वाले कतिपय उक्तियाँ निम्नलिखित हैं–

१- वजही ने अपनी मसनवी कुतुब मुश्तरी में अपनी भाषा को बड़े गर्व से दक्खिनी कहा है–

दक्न मे वो दक्खिनी मीठी बात का
अदा नई किया कोई इस घात का[2]

२- अब्दुल समद ने अपनी गद्य रचना तफसील बहावी में लिखा है–
'इस वास्ते सब मर्दा और औरतों को कुराने मजीद के मानी मालूम होकर आलम को फायदा होने के वास्ते दखनी जबान मे बनाया हूँ।'[3]

३- इब्न निशाती अपनी मसनवी फलूबन में कहता है–
इसे हर कस के तईं समझा का तूँ बाल
दक्खिनी के बाता सारया को खोल[4]

४- इसी प्रकार रुस्तमी अपने खाविरनामा में व्यक्त करता है–
किया तर्जुमा दक्खिनी होर दिल पजीर
बोल्या मोज्जह यू कमाल खाँ दबीर[5]

५- नुसरती ने अपनी मसनवी गुलशने इश्क में लिखा है–
सफाई की सूरत की है आरसी
दखनी का किया शायर हू फारसी[6]

मीरा हाशमी ने अपनी रचना को दक्खिनी हिन्दीमें लिखा है वह दक्खिनी का प्रसिद्ध तथा सिद्ध कवि था। उसके मुर्शिद सैयद शाह हाशिम ने भी उनकी भाषा की प्रशंसा की थी। इसका उल्लेख हाशमी ने स्वयं कर दिया है–[7]

हर एक कवि बोले अच्छे पुरहुनर–हुनर मन्द खुशनूद है हम ऊपर
तेरे शेर दकनी का है जग मे नाव–न का मौत कर दूसरों बोल मिलाव
क्तिक शेर दकनी है शव अपना नाम–यूँ यहाँ वहाँ के बोलो मिलावे तमाम
तुने चार क्या किसी के चार अपन्न बोल–तेरा शेर दकनी है दकनी व बोल

१. खड़ी बोली का आन्दोलन – पृष्ठ – ६२
२ कुतुब मुश्तरी वजही – पृष्ठ – २२९
३. दक्खिनी का पद्य और गद्य पृष्ठ – ४१८
४. यूरोप में दकनी मखतूतता – पृष्ठ – ५
५ दक्खिनी हिन्दी – पृष्ठ – १५
६. दकन में उर्दू छपा – पृष्ठ १४
७. मीरा हाशमी (सालार जंग हैदराबाद की पोथी सख्या १९–पृष्ठ–३००)

दक्खिन के अतिरिक्त भारत के अन्य भागो मे इसको क्षेत्रीय नामो से पुकारा जाता था। दिल्ली मे इसको देहलवी नाम भी दिया गया था। वहा क शेह बाजन मनूफी न (८१२ हि० - १५०५ ई०) म इसको देहलवी भाषा कहा है।[1] इसके अतिरिक्त अब्दुन ने अपनी पुस्तक इबराहिम नामा मे व्यक्त किया है।[2]

बबा हिन्दी मुक सूहौर देहलवी
ना जानू अरब और अजम मसनवी

पजाब मे इसे पजाबी तथा गुजरात मे गुजराती अथवा गुजरी भी कहा गया है। पडित परशुराम चतुर्वेदी जी ने भी इसका समर्थन किया है। अमीन गुजराती न अपनी भाषा को प्रारम्भ मे ही गुजरी कहा है।[3]

सुनो मतलब अहे अब यों अमी का
लिखी गुजरी मनें युसफ जुलेखा
हर एक जाग हैं किस्सा फारसी मे
अमीन इसको उतारी गुजरी मे

कि बुझे है कदाम उसकी हकीकत – बडी है गुजरी जग बीच न्यामत
अमी ने गुजरी कैती सो यू कर – कै आये नही रहे दुनिया के भीतर
इलाही ते मुझे तौफीक जो दी तो – मैं भी फरसी से गुजरी की
मेरा मतलब है यू सब कोई जानें – हकीकत उसकी सब कोई पहचाने
मैं इसके वासते कैनी ए गुजरी – हकीकत सब अयां होवे उनू की

इससे स्पष्ट है कि यह गुजरी भाषा सामान्य जनता की भाषा थी। अत. यह कहा जा सकता है कि अमीन को भाषा भी साधारण है। विषय तथा व्यक्तित्व के अनुरूप भाषा का प्रयोग भी किया गया है। साहित्यिक कलात्मकता की दृष्टि से भाषा को विशेष महत्व प्राप्त नही है।

इस प्रकार दक्खिनी के प्राय अधिकांश पुरान लेखको ने अपनी भाषा को गुजरी कहा है।[4] गुजरात के अन्य दक्खिनी कवियो न इसको गुजरी या गुजराती कहा है। यह नाम अधिक दिनो तक नही रह सका लेकिन इसन अपना प्रभाव दक्नी पर स्थायी रूप से डाला।

उक्त प्रधान नाम करण के साथ कुछ नाम इसके स्वरूप के आधार पर दिये गये है। ये नाम दक्खिन के अहिन्दी भाषी लोगो न दिया है। यह निश्चित है कि

१. पजाब मे उर्दू – पृष्ठ – २१
२. दक्खिनी हिन्दी का उद्भव और विकास – पृष्ठ – २१
३ अमीम गुजराती – पृष्ठ – ११ तथा भूमिका (सपादित डॉ० मोहम्मद अब्दुल हमीद फारुकी – पृष्ठ – ११४
४ राष्ट्रभाषा पर विचार – पृष्ठ – ११

इस नव विकसित भाषा का सम्बन्ध किसी भी दक्खिनी आर्य अथवा द्रविड भाषा से नही है।[1] अतः वहाँ यह भाषा कदाचित हेय दृष्टि से देखी जाती रही होगी क्योंकि वहाँ सामान्य जनता की भाषा भिन्न थी। तेलगू भाषा को तुर्क की बान और संस्कृत, ब्रज, अवधी मिश्रित हिन्दुओं की भाषा को बाशा कहते थे।[2]

महाराष्ट्र मे जब कोई व्यक्ति अशुद्ध हिन्दी बोलता है तब उसको डेड गुजरी कह कर व्यग करते हैं।[3] कुछ लोग इसे दक्षिणी भी कह दिया करते हैं। इसमे दक्षिण की द्रविड भाषाओं का भ्रम हो जाता है। अतः इस भाषा का उपयुक्त एव अर्थपूर्ण नाम दक्खिनी ही प्रतीत होता है। दक्खिनी कहने से दक्खिन भारत का भी बोध हो सकता है। किन्तु यह शब्द भाषा के लिए ही रूढ हो गया है। इस नवीन भाषा को उर्दू नाम देने के पश्चात इसमे महान परिवर्तन आ गया है। प्रायः लोग इसे दक्खिनी हिन्दी ही कहते हैं। इसका प्रयोग डॉ० बाबूराम सक्सेना तथा डॉ श्रीराम शर्मा जी ने भी किया है किन्तु शर्मा जी केवल दक्खिनी ही कहने के पक्ष मे है। अत आज कल यह भाषा दक्खिनी अथवा दक्खिनी हिन्दी के ही नाम से प्रयुक्त होती है और इसी का विशेष प्रचार है।

दक्खिनी हिन्दी की भौगोलिक सीमा एवं इसका विस्तार

दक्खिनी हिन्दी का सम्बन्ध विशेष रूप से दक्खिनी राज्यो से था जिसके अन्तर्गत बीजापुर, गोलकुण्डा, अहमद नगर मुख्य थी। इसी आधार पर इसका नाम दक्खिनी पड़ा है।[4] इस भाषा को उत्तर के शासक, सैनिक तथा सूफी फकीर ही विशेष रूप से बोलते थे। इसके अतिरिक्त इन क्षेत्रो मे दक्षिण भारत की द्रविड भाषायें भी बोली जाती थी।[5]

इस भाषा का क्षेत्र समय-समय पर परिवर्तित होता रहा है। सामान्य रूप से यह दकन की भाषा कही जाती है। अत दकन की सीमा ही इस भाषा की सीमा मानी जा सकती है। प्राय. लोग दकन को दक्षिण कह दिया करते हैं। इसकी भौगोलिक सीमा लगभग चौदह उत्तरी अक्षांश से कर्क रेखा तक है। प्राचीन ग्रन्थों के अनुसार इसमे भारत का दक्षिणी त्रिभुजाकार प्रायद्वीप सम्मिलित है जो नर्मदा नदी अथवा विन्ध्याचल पर्वत के दक्षिण में स्थित है। कुछ विद्वान इनमे महाराष्ट्र को भी सम्मिलित करते हैं और कुछ लोग इसकी सीमा कुमारी अन्तरीप तक मानते हैं।[6]

---

१. दक्खिनी हिन्दी-पृष्ठ १५
२. दक्खिनी का पद्य और गद्य-पृष्ठ ३२
३. वही-पृष्ठ ३३
४. दक्खिनी हिन्दी-पृष्ठ १७
५. हिन्दी साहित्य कोश-पृष्ठ ३३३
६. हिन्दी विश्व कोश खड ५-पृष्ठ ४९२

दक्षिण भारत को समय समय पर नष्ट भ्रष्ट करने अथवा वहाँ परिवर्तन लाने मे केवल मानवीय शक्तियों ने ही नहीं विभिन्न प्राकृतिक शक्तियो ने भी महत्वपूर्ण भूमिका निभायी है। इसी प्रश्न के कारण इस क्षेत्र मे अनेक दर्रों एव घाटियो का निर्माण होता रहा है जिनमे कालान्तर म विभिन्न स्वतन्त्र राज्यो की स्थापना हुई है। आज भी घिसे पिटे पर्वत एव उनकी श्रृखला अवशिष्ट दिखायी पडती है।

वर्तमान दकन प्राचीन भारतीय धर्मग्रन्थो का दक्षिण पथ ही है, और इसी को दक्षिण देश कहा जाता था। पाली प्राकृत मे इस दक्खिणपथ और दक्खिन कह जाता था।[1] इस दक्षिण देश की सीमा मे परिवर्तन होता रहा है। कभी नर्मदा और विन्ध्य के दक्षिण का मध्य भाग, कभी नर्मदा और ताप्ती के दक्षिण भाग से सुदूर नीचे भाग तक इसम सम्मिलित था। आजकल विन्ध्य से कृष्णा व उत्तरी किनारे तक पश्चिम म पश्चिमी घाट तक और पूर्व म आन्ध्र के उत्तरी पश्चिमी जनपदो तक ही सीमित है। इसका अधिकाश भाग महाराष्ट्र मे मिल गया है किन्तु इसमे सुदूर दक्षिण सम्मिलित नहीं किया जाता है।

उत्तरी भारत की आर्य जातियो ने दक्षिण पथ होते हुये दक्षिण मे आकर अपनी सभ्यता एव सस्कृत का प्रचार किया था। चन्द्रवशी राजाओ म कौरवों पाण्डवो अगस्त्य, सुतीक्षण शरभग आदि अग्रदूतो, सूर्यवशी रामचन्द्र आदि के दक्षिण म अभियान का पर्याप्त प्रमाण मिलता है।[2] दक्षिण भारतीयो का भी उत्तर में शासन स्थापित हुआ था। आन्ध्र के सातवाहनों ने उत्तर म कुछ समय तक राज्य किया था। उत्तर भारत की जातियों से उनका भयकर सघर्ष हुआ था। इस प्रकार उत्तर एव दक्षिण के पालो, प्रतिहारो तथा राष्ट्रकूटो म निरन्तर अधिकार के लिए सघर्ष होता रहा है। मुसलमानो का भारत मे अधिकार हो जाने के पश्चात यह परम्परा समाप्त हो गई।[3]

मुसलमानो में सर्वप्रथम अलाउद्दीन खिलजी ने सन १२९७ ई० म गुजरात पर अधिकार किया। उसके सेनापति मलिक काफूर न १३०४ ई० मे महाराष्ट्र और १३०७ ई० म आन्ध्र और १३०८ ई० मे कर्नाटक पर विजय प्राप्त की। इस के बाद ये क्षेत्र दिल्ली शासन के अग माने जाने लगे।[4] उस समय तक यही भाग दक्कन कहा जाता था। बाद मे मोहम्मद तुगलक ने दौलताबाद को अपनी राजधानी

---

१. वही-पृष्ठ ४९४

२. हिन्दी विश्वकोश भाग ५-पृष्ठ ४६४

३. वही-पृष्ठ ४६२

४. दक्खिनी हिन्दी-पृष्ठ २१

बनानी चाही। सन १३४७ ई० में दक्षिण में एक नया परिवर्तन हुआ। फीरोज-शाह तुगलक के शक्तिहीन हो जाने पर दक्खिन स्वतन्त्र हो गया। वहाँ हसन गंगो बहमनी ने गुलबर्गा में बहमनी राज्य की स्थापना की। गुजरात भी स्वतन्त्र हो गया। सन १३३६ में विजय नगर राज्य की स्थापना हुई। आगे चल कर बहमनी राज्य कई भागों में विभाजित हो गया। बीजापुर, गोलकुण्डा, बरार, अहमदनगर बीदर पाँच स्वतन्त्र मुसलमानी राज्यों की स्थापना हुई।

अनेक मुगल सम्राटों ने उन्हें समाप्त करना चाहा था किन्तु अन्त में औरंग-जेब ही उसमें सफल हो सका। उसकी मृत्यु के बाद वे सब पुनः स्वतन्त्र हो गयीं। भारतीय स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात भाषा के आधार पर राज्यों का पुनः संगठन हुआ है दक्षिण में गुजरात, महाराष्ट्र, आन्ध्र, कन्नड, तमिलनाडु, केरल की रचना हुई है। इस प्रकार दकन सीमा में निरन्तर परिवर्तन होता रहा है।

डॉ० ग्रियर्सन ने व्यक्त किया है कि यद्यपि कोई निश्चित सीमा नहीं खींची जा सकती फिर भी सतपुड़ा की श्रृंखलाओं और उससे सम्बन्धित पहाड़ियों को परि-निष्ठत हिन्दुस्तानी और दक्खिनी की सीमा मान सकते हैं। उनके अनुसार उसकी दक्षिणी और पश्चिमी सीमा समुद्रतट तक मानी जा सकती है। यह सीमा बम्बई और मद्रास तक चली गई है।[1]

दक्खिनी आज भी आंशिक रूप से गुजरात, महाराष्ट्र और आन्ध्र में उत्तर भारत से आये हुये मुसलमानों और हिन्दुओं के बोल चाल की भाषा है।

दक्खिनी हिन्दी का मूल आधार

भारत की वर्तमान आर्य भाषायें विभिन्न अपभ्रंशों से उत्पन्न हुई हैं। सभी की एक आधार पर मूल बोली और भाषा है। शौरसेनी अपभ्रंश से पश्चिमी हिन्दी, राजस्थानी, गुजराती का जन्म माना जाता है। पश्चिमी हिन्दी की खड़ी बोली, ब्रज, बांगरू, बुन्देली और कन्नौजी पाँच बोलियां हैं। दक्खिनी के विकास में दिल्ली, मेरठ और बिजनौर के आस पास बोली जाने वाली खड़ी बोली का मुख्य हाथ है। इसी में अपनी अरबी, फारसी के शब्द मिलाकर इस नई भाषा का जन्म हुआ था।

अतः यह कहा जा सकता है कि दक्खिनी मूलतः हरियानी अथवा बांगरू तथा कौरवी या हिन्दवी बोली थी। जो मुसलिम विजेताओं और सूफियों के साथ दक्खिन में गई थी। बहुत दिनों तक यह भाषा मौखिक परम्परा में रही होगी क्योंकि यह कुछ दरबारी व्यक्तियों तक ही सीमित थी।[2] बाद में इसको लिखित रूप दिया गया और धीरे-धीरे साहित्यिक महत्व भी प्राप्त हो गया।

१. दक्खिनी हिन्दी का उद्भव और विकास-पृष्ठ ११
२. हिन्दी साहित्य का बृहत इतिहास भाग ४-पृष्ठ ३६७

आचार्य चन्द्र बली पाण्डेय का विचार है कि दक्खिनी के विकास में टक्क अपभ्रंश का भी योगदान है क्योंकि श्री मार्कण्डेय ने द्रविड भाषाओं का सम्बन्ध टक्क अपभ्रंश से स्थापित किया है।[1] ऐसी स्थिति में दक्खिन में विकसित होने वाली दक्खिनी के विकास में टक्क अपभ्रंश का योग अवश्य रहा होगा। यह विचार तर्क संगत नहीं लगता। द्रविड भाषाओं का प्रभाव दक्खिनी पर स्वीकार किया जा सकता है किन्तु उनको आधार नहीं माना जा सकता है क्योंकि दक्खिनी का जन्म उत्तर भारत में हो चुका था। मुसलमानों के दक्षिण आगमन के बाद ही उसको सांस्कृतिक एवं साहित्यिक महत्व प्राप्त हुआ था।[2]

डॉ० शिवकंठ मिश्र ने भी स्पष्ट रूप से व्यक्त किया है इस तरह दक्षिण में सन्तों और मुसलमानों के सम्मिलित प्रभाव स्वरूप एक मिली जुली भाषा का प्रचार हुआ जिसे बाद में दक्खिनी के नाम से साहित्यिक भाषा का गौरव प्राप्त हुआ।[3] इसी प्रकार धीरे-धीरे प्रयोग के बाद दक्खिनी का साहित्यिक एवं परिष्कृत रूप निर्धारित हो गया क्योंकि कवि उसकी साहित्यिकता एवं परिष्कार का विशेष ध्यान रखते थे।[4]

दक्खिनी हिन्दी पर विभिन्न भाषाओं का प्रभाव एवं मिश्रण

भाषा दो व्यक्तियों अथवा दो समुदायों के परस्पर विचार विनिमय का प्रधान साधन होती है। ऐसी स्थिति में एक भाषा में दो या अनेक भाषाओं के शब्दों का आ जाना स्वाभाविक है यदि कोई भाषा दो भिन्न जलवायु के भागों में बोली जाती है, अथवा उसके बोलने वाले विभिन्न राजनैतिक विचार धारा अथवा शासन प्रणाली से सम्बन्ध रखते हैं तब उसमें मिश्रण होना स्वाभाविक है और यह मिश्रण उनके सांस्कृतिक, साहित्यिक तथा आर्थिक संस्कारों के अनुपात में होगा। विभिन्न भौगोलिक परिस्थितियों में प्रयुक्त होने अथवा यात्रा करने के कारण उसमें अनेक भाषा वैज्ञानिक विशेषतायें एवं विभिन्नतायें उत्पन्न हो जायगी।[5]

भाषाओं में मिश्रण का एक प्रधान कारण यह था कि मुसलमान सेना एवं सैनिक अपने सैनिक अभियान के सिलसिले में एक स्थान पर केन्द्रित न रह करके भारत के विभिन्न भागों में भ्रमण किया करते थे। मुसलमान सैनिक और शासक प्राय: उत्तर भारत से आये थे। अत: वहाँ मेरठ, दिल्ली के आसपास की खड़ी

१. राष्ट्रभाषा पर विचार-पृष्ठ ११

२. दक्खिनी हिन्दी का उद्भव और विकास-पृष्ठ २१

३. खड़ी बोली का आन्दोलन-पृष्ठ २७

४. दक्खिनी हिन्दी का उद्भव और विकास-पृष्ठ २१

५. हिन्दुस्तानी लिसानियात (उर्दू)-पृष्ठ १०५

बोली और हरियानी का रूप भी उनको दक्खिनी में सुरक्षित रहा होगा। इस भाषा में खड़ी बोली के साथ-साथ अरबी, फारसी शब्दों का भी बाहुल्य था क्योंकि जो भी ग्रन्थ १७ वीं शताब्दी तक दक्खिनी हिन्दी के मिलते हैं वे सभी मुसलमान कवियों एवं रचनाकारों के ही हैं और कोई भी हिन्दू कलाकार इसके रचनाकारों में नहीं उपलब्ध होता है।[१] यद्यपि डॉ॰ श्रीराम शर्मा ने अपनी पुस्तक 'दक्खिनी का पद्य और गद्य' में कतिपय हिन्दू दक्खिनी कवियों का भी उल्लेख किया है।

दक्खिनी मुसलमान शासकों एवं आभिजात्यकुल के लोगों की भाषा फारसी अरबी, तुर्की अथवा पश्तो थी। नवीन भारतीय मुसलमानों, हिन्दू सेवकों एवं श्रमिकों के द्वारा इस भाषा का समझना कठिन था। इनमें से अधिकांश भारत के भिन्न-भिन्न भागों अवध, बिहार, राजस्थान से आए हुए थे। अतः इस नवीन भाषा पर इन क्षेत्रीय भाषाओं का व्यापक प्रभाव पड़ना स्वाभाविक था।[२]

मुसलमान शासकों की यह शासन नीति थी कि वे भारतीय तथा अभारतीय मुसलमान कर्मचारियों एवं सैनिकों का कभी हिन्दी भाषा क्षेत्रों में और कभी अहिन्दी भाषा अथवा भिन्न भाषा-भाषी प्रदेशों में स्थानान्तरित करते रहते थे। इसी नीति से कभी उन्हें मराठी क्षेत्रों में, कभी तेलगू, कभी कर्नाटक क्षेत्र में रखा जाता था। ऐसी स्थिति में इन भाषाओं के शब्दों का मिश्रण स्वाभाविक हो जाता था। इसी रूप में दक्खिनी पर स्थानीय बोलियों का प्रभाव पड़ा। मुसलमानों का सर्वप्रथम आगमन देवगिरि पर ही हुआ था। यह मराठी भाषा क्षेत्र था जो प्राचीनकाल से विद्या एवं कला का केन्द्र भी था। अतः खड़ी बोली दक्खिनी पर मराठी का व्यापक प्रभाव पड़ा। यह दोनों भाषायें आर्य भाषायें थी, इनका यह सगम सजातीय एवं स्वाभाविक भी था। मराठी की लयात्मकता का प्रभाव दक्खिनी पर विशेष रूप से पड़ा। इसके बाद बीजापुर में शासन स्थापित होने पर मराठी भाषी लोग वहाँ नियुक्त भी किए गये थे। इसी प्रकार कन्नड़ एवं तेलगू का भी प्रभाव दक्खिनी पर पड़ा।

गुजरात पर मुसलमानों का आक्रमण पाँचवीं शताब्दी में ही प्रारम्भ हो गया था और सुल्तान महमूद गजनवी ने इसको कई बार पदाक्रान्त किया था। तत्कालीन एवं परवर्ती इतिहासकारों ने व्यक्त किया है कि गुजरात के विभिन्न कवि एवं साहित्यकार बीजापुर आया करते थे। इब्राहिम, आदिलशाह ने उनको शरण दी थी[३]। अनेक सूफी भी वहाँ आ गये थे। गुजरात के इन प्रवासियों के कारण बीजापुर गोलकुण्डा आदि की दक्खिनी में गुजराती के पर्याप्त शब्द आ गये थे।

१. दक्खिनी हिन्दी-पृष्ठ २२
२- दक्खिनी हिन्दी का उद्भव और विकास पृष्ठ १९
३- उर्दू शहपारे भाग १ पृष्ठ १२

मुसलमानों के अतिरिक्त अनेक हिन्दू जातियाँ विभिन्न क्षेत्रों से व्यापार तथा नौकरी के लिए दक्खिन में जाया करती थीं। बंगाल, महाराष्ट्र, उत्तर प्रदेश से लोग निरंतर दक्खिन में जाते रहे और इन सभी आगंतुकों ने दक्खिनी के विकास में योग दिया। इसी प्रकार ब्रज, अवधी बिहारी आदि के शब्द इसमें मिल गये थे। इनके अतिरिक्त दक्षिण की द्रविड भाषाओं का भी मिश्रण इसमें हुआ।

इस स्थानान्तरण की प्रक्रिया में अरबी, फारसी, तुर्की, पश्तो आदि विदेशी खडी बोली, ब्रज, अवधी, हरियानी आदि उत्तरी बोलियाँ, मराठी, गुजराती, पश्चिमी हिन्दी, पूर्वी हिन्दी, राजस्थानी आदि आर्य भाषाओं तथा तामिल, तेलगू, कन्नड आदि अनार्य भाषाओं के उपयुक्त, उपयोगी तथा प्रचलित शब्दों के मिश्रण से दक्खिनी हिन्दी का शब्द समूह निर्मित हुआ और सभी का सामान्य प्रभाव इस पर पडा। इसके निर्माण में भारतीय तथा अभारतीय मुसलमान जनता, शासकों, सैनिकों, भारतीय हिन्दू सैनिकों, कर्मचारियों, श्रमिकों, व्यापारियों तथा बनजारों पारधी, लोवा आदि प्राचीन आदिम जातियों ने भी योग दिया। आज भी दक्खिन के अनेक क्षेत्रों में दक्खिनी बोली जाती है और उसमें पर्याप्त लोक साहित्य विद्यमान है। कुछ फकीर, बाजीगर, भिक्षुक तथा साधारण गायक दक्खिनी के गीत गाते सुनाई पडते हैं।[1]

हैदराबाद में भ्रमण के समय लेखक ने एक कवि सम्मेलन में भाग लिया था वहाँ दकनी भाषा में अनेक कवितायें सुनायी गई। वर्तमान कवियों में (दहुवानी) दुहवानी साहब सर्वाधिक लोकप्रिय हैं। इससे मालूम हुआ कि आज भी लोग उसमें कविता करते हैं।

दक्खिनी हिन्दी के विभिन्न रूप :

प्रत्येक भाषा की अपनी सीमा होती है और यह सीमा सामान्यतया ५०० मील मानी जाती है। इस सीमा के बाद उसके रूप में परिवर्तन एवं अन्तर आ जाता है। विस्तृत क्षेत्र में बोली जाने वाली भाषा के विविधरूप विकसित हो जाया करते हैं और यह विविधता बिलकुल स्वाभाविक भी है प्रमुखतया प्रत्येक भाषा को दो रूपों में प्रयुक्त किया जाता है। प्राचीन काल से ही सभी भाषाओं के दो रूप देखने को मिलते हैं। यही कारण है कि दक्खिनी के भी दो रूप प्राप्त होते हैं।

(क) बोलचाल का घरेलू रूप :– बोलचाल की भाषा का कोई निश्चित रूप नहीं प्राप्त होता है। स्थानीय कारणों से उसमें परिवर्तन आता रहता है। डाक्टर श्री राम शर्मा ने बातचीत की दक्खिनी को विन्ध्य से समुद्रतट तक दो सौ रूपों में स्वीकार किया है।

१– दक्खिनी का पद्य और गद्य पृष्ठ १०

(१) कुछ लोग कई पीढ़ियों से दक्खिन में रहते हैं। इनकी भाषा हिन्दी है। इन लोगों की बोलचाल पर उत्तरीय अपभ्रंश अधिक है।

(२) दक्खिन के कुछ मूल निवासियों की भाषा तामिल, तेलगू आदि है। इन लोगों की भाषा पर द्रविड़ी प्रभाव है।

(ख) साहित्यिक दक्खिनी :— दक्खिनी का विकास मुख्य रूप से बीजापुर और गोलकुण्डा की मुसलमानी रियासतों में हुआ था। इसके तीन रूप प्राप्त होते हैं। (१) उसके प्रारम्भिक रूप पर अपभ्रंश का प्रभाव है क्योंकि अपभ्रंशों से ही इन आर्य भाषाओं का विकास हुआ था और प्रायः सभी भाषाओं पर उसका प्रभाव परिलक्षित होता है। (२) अवधी व्रज के साहित्यिक रूप ने दक्खिनी को विशेष प्रभावित किया। दक्खिनी लेखकों की भाषा पर यह प्रभाव अपेक्षाकृत अधिक है।[1] (३) द्रविड़ वर्ग के लोगों की भाषा का प्रभाव दक्खिनी के इस नवीन रूप पर पड़ा तथा उनकी साहित्यिक परम्परा को इन लोगों ने भी अपनाया अनेक हिन्दू दक्षिणी सन्तों नामदेव, एकनाथ, तुकाराम, केशवस्वामी आदि ने इसमें कविता की।[2] इस प्रकार उसका रूप साहित्यिक होता गया। आगे चलकर वली औरंगाबादी ने इसको उर्दू नाम दिया। अब वली को ही दक्खिनी का अन्तिम कवि और उर्दू का पहला कवि माना जाता है।[3] यद्यपि श्रीराम शर्मा जी इससे सहमत नहीं है।[4] और इन्हें दक्खिनी का ही कवि मानते हैं।[5] वली को ही नहीं उनके शिष्य उमर को भी दकनी का कवि कहा जाता है क्योंकि उसने इसी भाषा में यूसुफ-जुलेखा काव्य की रचना की थी किन्तु वली और उमर में दकनी भाषा उर्दू की ओर इतनी अधिक झुक गई थी कि वली को उर्दू का पहला कवि मान लिया जाता है।

दक्खिनी हिन्दी की कुछ प्रमुख विशेषतायें

कुछ भाषाओं की लोकप्रियता का कारण उनका सामान्य आकर्षण है। दक्खिनी हिन्दी नवनिर्मित भाषा थी। फिर भी चार-पाँच शताब्दी तक यह सामान्य बोल चाल की तथा साहित्य की भाषा मानी जाती रही। उसका लोक तथा शिष्ट दोनों साहित्य पर्याप्त समृद्ध हैं। यह दक्षिण में बनी ही लोकप्रिय भाषा रही। उसकी इस लोकप्रियता के प्रमुख कारण निम्नलिखित हैं —

(क) सामान्य आकर्षण:—दक्खिनी हिन्दी मुसलमान शासक वर्ग की भाषा थी और इसका प्रयोग स्वयं सुलतान दरबारी कवि भी करता था। अतः

१. दक्खिनी हिन्दी का उद्भव और विकास-पृष्ठ २१
२. दक्खिनी का पद्य और गद्य-पृष्ठ-२९
३. हिन्दी साहित्य कोश-पृष्ठ ३३३
४. दक्खिनी का पद्य और गद्य-पृष्ठ ३०
५. दक्खिनी का उद्भव और विकास-पृष्ठ २४

राज्य व्यवस्था के लिए इसका विशेष महत्व था। दक्खिनी के विशेष जानकार एवं कवि को राज्याश्रय अथवा राजकीय सहायता प्राप्त होती थी। अत. जनता में इसको पढ़ने की विशेष रुचि उत्पन्न हुई। राज दरबार में प्रवेश के उद्देश्य से प्राय इसकी ओर लोग आकर्षित हुए होंगे। यही कारण है कि दक्खिनी की विभिन्न मुसलिम तथा अमुसलिम रियासतों में इसका सामान्य प्रचार हो गया। इसमें किसी भी अन्य भाषा के शब्दों को अपना लेने की अद्भुत क्षमता थी। अत अन्य भाषा-भाषी लोग साधारण परिवर्तन से दक्खिनी का निर्माण कर लेते थे। इस प्रकार इसको सीखने में उनको किसी प्रकार की कठिनाई नहीं हुई। इसी विशेषता के कारण उसको सरकारी भाषा का पद भी प्राप्त था।[1] डा० शिवकंठ मिश्र के शब्दों में *दक्खिनी हिन्दी में बड़ी मिठास, बड़ा प्रवाह तथा घरेलूपन है।*[2] दक्खिनी को अरबी, फारसी, तामिल, तेलगु, कन्नड, मराठी की समृद्ध साहित्यिक परम्परा भी प्राप्त थी। अत साहित्यिक परम्परा की दृष्टि से भी दक्खिनी को सौभाग्य प्राप्त हुआ और हाशमी अमीन गुजराती आदि ने इसको पूर्ण रूप से कलात्मक बना दिया उमर के बाद से वह बिलकुल उर्दू ही बन गई।

(ख) भाषा-वैज्ञानिक विशेषतायें—दक्खिनी की भाषा वैज्ञानिकता *अथवा रचना विधि पर विविध विद्वानों ने विचार किया है। सर्वप्रथम डा० मोही-*उद्दीन कादरी 'ज़ार' ने 'हिन्दुस्तानी लिसानियात' लिखकर इस पर प्रकाश डाला। इंगलैंड में उनके डाक्टरेट का यह प्रबन्ध था। इस दृष्टि से इसका विशेष महत्व है क्योंकि इसके द्वारा दक्खिनी हिन्दी का परिचय पश्चिमी विद्वानों एवं संस्थाओं को हुआ था। इसके बाद डाक्टर बाबूराम सक्सेना ने *'दक्खिनी हिन्दी'* लिखकर इसका भाषा सर्वांगीण विवेचना किया। अब इसके उद्भव एवं विकास पर डाक्टर श्रीराम शर्मा का प्रबन्ध 'दक्खिनी हिन्दी का उद्भव और विकास' प्रकाशित हो गया है और इसका उपयोग लेखकों ने भी किया। इसमें इसके उच्चारण, शब्द समूह, संज्ञा रूप, सर्वनामों, विशेषणों, क्रियाओं, अव्यय आदि अंगों पर वैज्ञानिक *विचार किया गया है।* उसके स्वरों, व्यञ्जनों के उच्चारण, छन्द-की नियमों पर भी विचार हुआ है। इस प्रसंग में अन्य भाषाओं की ध्वनियों से तुलना आदि भी की गई है। ऐसी स्थिति में इस पर विचार करना अप्रासंगिक होगा।

प्रमुख कवि—इस लोक प्रिय भाषा के कवियों की संख्या बहुत अधिक है। अत. दरबार के अनुसार उसके प्रमुख कवियों के नाम निम्नलिखित हैं:—

---

१. दक्खिनी हिन्दी-पृष्ठ ३४

२. खड़ी बोली का आन्दोलन-पृष्ठ ६४

(क) बहमनी रियासत के कवि– सैयद मुहम्मद हुसैनी, सैयद मुहम्मद अकबर हुसैनी, शाह, मीरा जी, आवरी।

(ख) कुतुबशाही दरबार के कवि—फिरोज, महमूद खयाली, वजही, सुलतान, मुहम्मद कुली कुतुब शाह, गव्वासी आबिज, इब्न निशाती, तबई, ताना शाह, गुलाम अली, असबल, नूरी।

(ग) आदिल शाही कवि— बुरहानुद्दीन जानम, इबराहिम आदिल शाह, आतशी, सनअती, मलिक खुशनूद, रुस्तमी, अली आदिलशाह, नुसरती अमीन, खाशमी, कुदरती।

(घ) निजाम शाही कवि— अशरफ, आफ्ताबी।

(ङ) बरीदशाही कवि— कुरैशी, गव्वासी, सुलतान अब्दुलशाह, मुकीमी

(च) मुगल दरबारी कवि— वली विल्लौरी मुहम्मद अमीन, फतह, राजी, तौराब, रूही, बहारा आदि।

दक्खिनी की प्रमुख रचनायें

दक्खिनी भाषा में रचनाओं की विविधता रही है। पद्य और गद्य दोनों पर्याप्त मात्रा में लिखा गया है। वजही का सबरस तत्कालीन गद्य का श्रेष्ठतम उदाहरण है। कविता में भी विविध प्रकार की पुस्तकें लिखी गई। मरसिया अथवा शोक गीत, गीतों और मसनवियों की प्रधानता थी। मसनवियों का प्रमुख विषय प्रेम सूफी विचारधारा धर्म विभिन्न ऐतिहासिक घटनायें, सामान्य ज्ञान की वस्तुयें अलौकिक घटनायें, नैतिकता ही थी।

****

अध्याय २

हिन्दी प्रेमाख्यानों की परम्परा

आख्यान :

आख्यान के अर्थ और उसकी प्रकृति के सम्बन्ध मे विविध विद्वानो ने अनेक प्रकार से विवेचना की है। डॉक्टर धीरेन्द्र वर्मा ने इसके दो अर्थों का विवरण दिया है[1]।

सामान्य अर्थ में उन्होंने कथन, निवेदन, *कथा कहानी*, प्रतिवचन अथवा उत्तर का उल्लेख किया है। इसके कुछ विशेष अर्थ हैं। अष्टाध्यायी में यह शब्द भेदक के अर्थ में और किसी भी पुरावृत्त कथन अथवा ऐतिहासिक एवं पौराणिक *कथा के अर्थ में प्रयुक्त है। व्यापक रूप में इसका अर्थ कथा कहानी के लिए किया* जाता है किन्तु सीमित अर्थ मे यह शब्द ऐतिहासिक या पूर्ववृत्त कथन के रूप मे रूढ हो गया है। कथा, कथानक, आख्यायिक वृत्तान्त आदि इसके अन्य पर्याय हैं। किन्तु आधुनिक विद्वान आख्यान को इतिहासमूलक कथानक के लिए ही प्रयुक्त करते हैं[2]। भगवान वेदव्यास ने भी महाभारत मे लिखा है कि धर्म, अर्थ, काम, और मोक्ष के उपदेश सहित तथा प्राचीन चरितो से युक्त ग्रन्थ ही इतिहास कहे जाते हैं[3]। श्रीधराचार्य ने विष्णुपुराण की टीका करते हुए एक श्लोक उद्धृत किया है। जिसका यह अर्थ है कि ऋषियों द्वारा कहे गए नाना उपदेश, देवता तथा ऋषियो के चरित तथा अद्भुत धर्म कथाओं वाला ग्रन्थ इतिहास कहलाता है[4]। प्राय. आधुनिक शिक्षा प्राप्त विद्वान इन इतिहास मूलक कथाओं को कवि सुलभ भाषा मे वर्णित होने के कारण कल्पित तथा कूटार्थ कथा मानकर रूपक या उपमिति कथा कह दिया करते हैं। विद्वानों का यह प्रयास उनके ऐतिहासिक तथा सामाजिक तत्व और महत्व को कम कर देता है।

१– हिन्दी साहित्य कोश–पृष्ठ ८८

२– हिन्दी विश्व कोश खण्ड १–पृष्ठ ११२

३– धर्मार्थ काम मोक्षणा उपदेश समान्वितम, पूर्ववृत्त कथा युक्त मितिहास प्रचक्षते।

४– आर्षादि बहुव्याख्यान देवर्षि चरिताश्रयम इतिहास मिति प्रोक्त भविष्यादि भूत धर्मयुक्त

प्रेमाख्यान :

प्रेम एक नैसर्गिक मानवीय प्रवृत्ति है और इसका सम्बन्ध मस्तिष्क और हृदय से होता है। यह ऐसा सम्बन्ध तन्तु है जो समस्त सृष्टि को परस्पर सजोये हुये है। स्वयं परमात्मा भी इस सम्बन्ध रज्जु से आकर्षित होकर अवतरित हो जाता है। इसकी उत्पत्ति भी मानव की आदिम प्रवृत्तियों के साथ ही हुआ है। और इसका क्षेत्र अत्यन्त व्यापक है। मानव जब अपनी प्रेमाभिव्यक्ति को कल्पित अथवा इतिहास मूलक आख्यानों के माध्यम से प्रकट करता है। तभी प्रेमाख्यानों का उदय होता है और यह अभिव्यक्ति सृष्टि से आदिकाल से ही हो रही है। मानव मन की सभी वासनाओं में कामवासना के प्रमुख होने के कारण विश्व साहित्य में प्राप्त आख्यानों में प्रेमाख्यानों की बहुलता है। मानविकी तथा सामाजिकी के विद्वानों के अनुसार संसार में साहित्य का उदय कथाओं और आख्यानों में ही हुआ है।[1] यही कारण है कि विश्व की प्राचीनतम पुस्तक ऋग्वेद में अनेक कथाओं और आख्यानों के अविकसित तत्व मिलते हैं। उपनिषदों में भी अनेक आख्यान आये हैं। ये ही कथायें तथा उपाख्यान आगे चलकर बारहों पुराणों तथा संस्कृत साहित्य में सुविकसित हुये।

प्रेमाख्यानों का वर्गीकरण :

प्रेमाख्यानों के उदय और उसकी प्रवृत्तियों में विविधता के ही दर्शन होते हैं और उसको जीवन के विविध क्षेत्रों में अपनाया गया है। इसलिए उसके वर्गीकरण की समस्या भी बड़ी जटिल है। कथा और आख्यानों का उद्देश्य प्रारम्भ में धर्म से दीक्षित करना तथा उससे नैतिकता की शिक्षा देना था और उनसे संस्कृति के प्रचार और प्रसार में सहायता ली जाती थी। किन्तु आदर्शच्युत, धर्मविमुख प्रवृत्तियों में ऐसी कथायें भी प्रचलित थीं जिसका मूल प्रयोजन भोगों का अनुसरण ही है इस आधार पर धार्मिक तथा लौकिक आख्यानों का दो वर्गीकरण सहज हो किया जा सकता है किन्तु आज के वैज्ञानिक युग में इस प्रकार का विभाजन व्यावहारिक नहीं होगा।

पाश्चात्य विद्वानों ने कथाओं का वर्गीकरण किंचित उपर्युक्त आधार पर करते हुए ही प्रोफेन, इनशियेटिक तथा सर्ज कथाओं का नाम लिया है। ईरानी विद्वान श्री जलाल सत्तारी ने फारसी की पत्रिका हुनर व मर्दुम में कई लेख इस सम्बन्ध में लिखा है। उनका कहना है कि प्रोफेन कथाओं का आधार और उद्देश्य लौकिक होता है। इनशियेटिक का उद्देश्य मानव को दीक्षित करना और सर्ज का

१. हिन्दी विश्वकोश भाग २-पृष्ठ ६२

सम्बन्ध परलोक से होता है ।[1]

मानव कल्पना ने ऐतिहासिक या कल्पित कथाओं को मनोरंजक तथा आकर्षक बनाने के लिए ऐसे अवयवों का प्रयोग किया है जिनके पीछे चमत्कार के प्राण डोलते हैं। पशुओं का मानव के समान वार्तालाप करना, आकाश से देवी देवताओं का उतरना, गन्धर्व, अप्सरा, भूत, वैताल का मानव के व्यापारों में भाग लेना तथा उन्हें प्रभावित करना इसी चमत्कार के अंग अंश है। इसी आधार पर कुछ पाश्चात्य विद्वानों ने फेयरी टेल्स तथा बीस्ट्स जन्तु कथा का वर्गीकरण किया है।

डॉक्टर हरिकान्त श्रीवास्तव ने अपने प्रबन्ध भारतीय प्रेमाख्यान काव्य में प्रेमाख्यान को [क] शुद्ध प्रेमाख्यान [ख] अन्यापदेशिक काव्य [ग] नीति प्रधान प्रेम काव्य तीन वर्गों में विभाजित किया है।[2]

अत प्रेमाख्यानों का सामान्य विकास निम्नलिखित शीर्षकों में करना अपेक्षाकृत अधिक उपयुक्त है-

[क] हिन्दी के पूर्व संस्कृत तथा वैदिक एवं पौराणिक साहित्य के प्रेमाख्यान।

[ख] फारसी के प्रेमाख्यान (१) फारसी कवियों के (२) भारतीय कवियों के।

[ग] हिन्दी के असूफी प्रेमाख्यान।

[घ] हिन्दी के सूफी प्रेमाख्यान।

हिन्दी के पूर्व संस्कृत तथा वैदिक एवं पौराणिक साहित्य के प्रेमाख्यान-

ऋग्वेद भारत का ही नहीं संसार का भी प्राचीनतम साहित्य है। इसमें अनेक कथाओं का उल्लेख हुआ है जिसमें कुछ का नाम— (१) शुनःशेप (२) अगस्त्य व लोपामुद्रा (३) गृत्समद (४) वशिष्ठ विश्वामित्र (५) सोम का अवतरण (६) अरुण और वृषजान (७) अग्निजन्म (८) श्यावाश्व (९) बृहस्पति का जन्म (१०) राजा सुदास (११) नहुष (१२) अपाला आत्रेयी (१३) नाभानेदिष्ट (१४) वृषाकपि (१५) उर्वशी पुरुरवा (१६) सरमा और पणि (१७) देवापि शान्तनु (१८) नचिकेता।[3]

१-हुनर व मर्दुम – पृष्ठ – ४२ – वरदादमाह १३३० पीरजे अहमद गुमारे सद व पैंतालिस

२-भारतीय प्रेमाख्यान काव्य – पृष्ठ – १६३

३-हिन्दी विश्वकोश – भाग १ –पृष्ठ ३३२

ऋग्वेद धार्मिक पुस्तक है अतएव उपर्युक्त सभी आख्यानों की प्रकृति मूलत. धार्मिक है धर्म का उद्देश्य लोक में अभ्युदय तथा परलोक में परम कल्याण की प्राप्ति है। धार्मिक ग्रन्थों का अवतरण मानव मन में धार्मिक आस्था उत्पन्न करने के लिए हुआ है। मानव विवेकपूर्ण प्राणी है। इन्द्रियों का भोग तो उसे अन्य जन्म में भी मिल सकता है। किन्तु मनुष्य शरीर सबसे विलक्षण है। अत. विषय भोग मानव जीवन का उद्देश्य निश्चित नहीं किया गया। श्रेय और प्रेय दोनों ही मनुष्य के सामने आते हैं किन्तु बुद्धिमान मनुष्य उन दोनों के स्वरूप पर भली-भाँति विचार करके उनको पृथक्-पृथक् समझ लेता है। धीर पुरुष श्रेय को ही प्रेय की अपेक्षा श्रेष्ठ समझकर ग्रहण करता है। मन्द बुद्धि वाला मनुष्य लौकिक योग क्षेम की इच्छा से प्रेय को ही अपनाता है।[1]

मानव जीवात्मा बुद्धि और इन्द्रियों का समन्विष्ट रूप है। जब बुद्धि रूपी सारथि असावधान हो जाता है तब वह मनरूपी लगाम को इन्द्रियों के दुष्ट घोड़ों की इच्छा पर छोड़ देता है और वह पथभ्रष्ट हो जाता है। बुद्धि को नियमित रखने के लिए विवेक और संयम की आवश्यकता है। इस विवेक का जागरण आध्यात्मिकता से होता है। आध्यात्मिकता धर्म का प्राण है। यही आध्यात्मिकता, विवेक बुद्धि अथवा धर्म भावना को जगाने के लिए ही धर्म ग्रन्थों में कथाओं तथा आख्यानों को समाविष्ट किया गया है। लोक-गाथाओं की सृष्टि भी प्राय. मानव तथा मानवसमाज को संयमित रखने के लिए ही हुई है।

उक्त सत्य को स्वीकार करते हुए सिन्धी जैन ग्रन्थ माला के भाग १७ पृष्ठ ११ पर लिखा गया है[2] मानव प्रबल प्राणी है। उससे भूलचूक होना स्वाभाविक है। वह बाह्य और आन्तरिक शक्तियों की खींचा-तानी में विभिन्न प्रकार से आचरण करता है। उसे यथार्थ ज्ञान तथा उचित आचरण की शिक्षा मिलनी चाहिए। इस उद्देश्य की पूर्ति अधिक सीमा तक दृष्टान्त रूप कथाओं से ही हो सकती है। इन कथाओं में पशु-पक्षी को नाटक के पात्र रूप मन्च पर लाया गया है।

उपर्युक्त विवेचन से यह निश्चित हो जाता है कि कथाओं और आख्यानों का उद्देश्य प्रारम्भ में धर्म में दीक्षित करना तथा उसे नैतिकता की शिक्षा देना था।

ऋग्वेद की भाँति पञ्चतन्त्र आदि प्राचीन पुस्तकों में भी उक्त आधार पर ही कथाओं की रचना हुई है। हितोपदेश, बैताल पचीसी, सिंहासन बत्तीसी, शुक सप्तति में भी उक्त तत्व ही समाविष्ट हैं। इनमें चमत्कार के साथ ही साथ अलौकिकता का भी पुट विद्यमान है। कर्म तथा वासना के आधार पर फल भोग-आयु की मीमान्सा के बल पर पुनर्जन्म तथा लख चौरासी भ्रमण की बात है।

१. कठोपनिषद-पृष्ठ २१४

२. भारतीय प्रेमाख्यान काव्य-पृष्ठ १०

ऋग्वेदीय नासदीय सूत्र में सृष्टि रचना का कारण काम वासना बनाया गया है और भूतसर्ग के बाद ही देवगण पैदा हुए हैं।[1] इसके साथ पृथवी सूत्र में गन्धर्व, अप्सरा, दानव, राक्षस, भूत, पिशाच योनियों का भी उल्लेख हुआ है।[2] अतएव भारतीय आख्यानों में इनका अवतरण चमत्कार नहीं कहा जा सकता है। मनुस्मृति के अनुसार परमात्मा के दो विभागों से ही स्त्री पुरुष का जन्म हुआ था।

स्त्री पुरुष के पारस्परिक राग का भारतीय मनीषियों ने काम की संज्ञा दी। इसका सम्बन्ध मन से होता है। काम से युक्त मन मन्युभाव ग्रहण करता है। इसी मन्युभाव को संयमित करने के लिए जाया की आवश्यकता होती है। जाया से विमुक्त होकर मन्यु रुद्ररूप धारण करके संहार का कारण बनता है। प्रकृति के विधान में स्त्री पुरुष के संयोग की आवश्यकता होती है और इसी से मनीषियों ने अर्धनारीश्वर की कल्पना की।

आधुनिक मनोविज्ञान के अनुसार भी प्रत्येक पुरुष में आदर्श सुन्दरी स्त्री बसती है जिसे अनिमा कहते हैं और प्रत्येक स्त्री के मन में एक आदर्श पुरुष रहता है जिसे अनिमस कहते हैं। इसी प्रकार काम रूपी वासनाओं को मूल भूत वासना है। मैथुन जीव कर्म है काम भारतीय मान्यताओं के अनुसार एक पुरुषार्थ है। धर्म से अर्थ और काम दोनों सिद्ध होते हैं। इसीलिए श्रीकृष्ण जी ने काम को अपना एक रूप माना है। भगवान राम ने भी धर्म को अर्थ और काम का नियामक माना है। हिन्दू विचार पद्धति की नींव कदाचित इन्हीं सिद्धान्तों पर पड़ी है। अतः भारतीय धर्म आख्यानों में भी इसी विचारधारा की अभिव्यक्ति की गई है।

इन वैदिक आख्यानों में भी कई प्रेम परक आख्यान मिलते हैं इनमें से पुरुरवा-उर्वशी, यमयमी, श्यावाश्व पर साहित्य मनीषी आचार्य पंडित परशुराम चतुर्वेदी जी ने और डा० हरिकान्त श्रीवास्तव ने भी विवेचनात्मक दृष्टि डाली है। यद्यपि ऋग्वेदीय प्रेमाख्यानों का विवेचन एक स्वतन्त्र अध्ययन की अपेक्षा रखता है। इन वैदिक आख्यानों में नारी-नर संयोग के विविध रूप मिलते हैं।

यम-यमी के सम्बन्ध में डा० हरिकान्त श्रीवास्तव जी लिखते हैं मानुत्व की अभिलाषा अपने तोष के लिए किसी बन्धन को स्वीकार नहीं करती, वह मातृत्व की कठोर दीवार को भी तोड़-फोड़ कर आगे बढ़ने में हिचकिचाहट का अनुभव नहीं करती।[3] इस कथन से सर्वदा सहमत नहीं हुआ जा सकता है। इसी प्रकार इसके सम्बन्ध में प० परशुराम चतुर्वेदी जी भी कहते हैं कि सामाजिक नियन्त्रणों के

---

१. कल्याण-हिन्दू संस्कृति अंक-पृष्ठ १

२. वही-पृष्ठ ६

३. भारतीय प्रेमाख्यान काव्य पृष्ठ ७ (डा० हरिकान्त श्रीवास्तव)

क्रमिक विकास द्वारा इसका कथानक अधिकाधिक हेय कहलाता चला गया होगा और इसकी पूरी उपेक्षा कर दी गयी होगी।[1] इसमें भी उक्त विचारधारा की ओर ही संकेत किया गया है। मेरा तो दृढ़ विश्वास है कि यम यमी सम्वाद का मूल तत्व यम के इस उत्तर में निहित है "ऐसा करना शाश्वत नियमों के विरुद्ध है। देवताओं ने भी इसका निषेध किया है। जाओ तुम भी अन्य पुरुष का आलिंगन करो।" संसार के प्रायः सभी सम्प्रदायों में रक्त सम्बन्ध विवाह में बाधक माना जाता है। यम यमी की आख्यायिका उक्त विधि की प्रथम अभिव्यक्ति है और इसके लिए समस्त धर्मों तथा विधिशास्त्रों को ऋग्वेद का कृतज्ञ होना चाहिए। इस आख्यायिका में एक बात और स्पष्ट है कि स्त्री में संयमित काम का विवेक पुरुष की अपेक्षा कम होता है।

आख्यान से स्पष्ट है कि मैथुन जीव धर्म है। इसकी कामना स्वाभाविक है। किन्तु विवेकपूर्ण मानव इसमें संयम से काम लेता है। काम सम्बन्धी सामाजिक मर्यादाओं की नींव-के अभिचिन्तनों द्वारा पड़ी थी।

ऋग्वेद की दूसरी प्रेम कहानी 'श्यावाश्व' की है। इसके सम्बन्ध में भी व्यक्त की गई विद्वानों की विविध धारणायें भी सर्वथा स्वीकार्य नहीं है श्यावाश्व के पिता ने राजा रथवीति से उसकी सुन्दरी कन्या मनोरमा को अपनी पुत्रवधू बनाने के लिए मांगा किन्तु राजा के स्वीकार करने पर भी रानी सहमत नहीं हुई क्योंकि श्यावाश्व में ऋषि के गुण नहीं थे। श्यावाश्व ने तप करके ऋषि के गुण प्राप्त कर लिये तभी दोनों का विवाह हुआ।

उपर्युक्त आख्यायिका योग्य वर को कन्या देने पर बल देती है और कहती है कि विवाहित दम्पति को तप युक्त होना चाहिए।

ऋग्वेद की अन्य प्रेमाख्यान उर्वशी पुरुरवा है जो संसार के प्राचीनतम आख्यानों में से है और प० परशुराम चतुर्वेदी जी ने इस पर विस्तार से प्रकाश डाला है।[2] इसका सुविकसित रूप विष्णुपुराण में भी मिलता है। यहीं से यह आख्यान लोकप्रिय होता हुआ कालिदास के विक्रमोर्वशी नाटक में भी आया है। उसके क्रमिक विकास का वर्णन भी चतुर्वेदी जी ने किया है। विरहपीर से चर्चित यह प्रेमाख्यान भारतीय वाङ्मय का एक चिर नवीन प्रेमाख्यान है। इसमें गम्भीर प्रेमभाव के साथ ही साथ प्रतीकात्मकता के भी दर्शन होते हैं। यौन सम्बन्ध के पूर्व अनुबन्धों की योजना इसमें स्वीकार की गई है। इसी को हिन्दू विवाह में प्रचलित वचन बद्धता का प्रथम रूप माना जा सकता है। इसी आख्यान को लेकर अन्य धर्म ग्रन्थों में धर्म और शिष्टाचार के अन्य पक्ष पर प्रकाश डाला गया है। पुराणों में

१ भारतीय प्रेमाख्यान की परम्परा (प० प० च०)-पृष्ठ ७
२. भारतीय प्रेमाख्यान की परम्परा-पृष्ठ १ से १२ तक

व्यक्त किया गया है कि वियोगी तप और धर्माचरण द्वारा अपनी प्रेयसी को प्राप्त कर सकता है। शतपथ ब्राह्मण में उसके द्वारा स्त्रियों का हृदय भेड़िये की भाँति क्रूर दिखाया गया है। इस प्रकार यह कहानी बड़ी लोकप्रिय हुई और इसका प्रयोग विविध उद्देश्यों के लिए हुआ है।

वेदों के पश्चात् उपनिषदों, ब्राह्मण ग्रन्थों में भी प्रेमाख्यान मिलते हैं। पुराणों में अनेक प्रेम परक प्रेमाख्यान मिलते हैं। महाभारत में तो इनकी बहुलता मिलती है। मदालसा, मोहिनी, कामदेव दमयन्ती यानी नलदम्पति, शकुन्तलादुष्यन्त, ऊषा, अनिरुद्ध, कृष्ण रुकमिणी, प्रद्युम्न मायावती, अर्जुन सुभद्रा, भीम हिडिम्बा आदि का नाम लिया जा सकता है। महाभारत का नलोपाख्यान तो एक अमर प्रेमाख्यान है। इसी में गुण श्रवण से प्रेम के विकास का आरम्भ माना जा सकता है। दुष्यन्त शकुन्तला को गान्धर्व विवाह का प्रथम उदाहरण कहा जा सकता है। कालिदास ने इसको मनोग्राही रूप देकर इसको विश्व साहित्य की अमूल्य निधि बना दिया है।

इसी प्रकार ऊषा-अनिरुद्ध का प्रेमाख्यान अनेक पुराणों में आया है। इसने सूफी प्रेमाख्यानों को भी प्रभावित किया है। इसमें पूर्वानुराग के लिए स्वप्नदर्शन और चित्रदर्शन का उपयोग किया है। विष्णुपुराण में कृष्ण रुकमिणी की कथा आई है। इसी प्रकार प्रद्युम्न मायावती की कथा श्रीमद् भागवत, हरिवंश पुराण तथा विष्णु पुराण में आई है। इस पर विचार करते हुए प० परशुराम जी ने परस्पर प्रीति को जन्मान्तरीय सम्बन्ध माना है।[1] महाभारत में अर्जुन सुभद्रा की कथा आई है जिसमें प्रेमासक्त होकर अर्जुन सुभद्रा का हरण करते हैं। विष्णु पुराण में दो प्रेमाख्यान बहुत ही महत्वपूर्ण हैं जो कथा शिल्प की दृष्टि से बहुत ही महत्वपूर्ण हैं। इनका उल्लेख भारतीय प्रेमाख्यान की परम्परा सम्बन्धी पुस्तकों में नहीं हुआ है। इसमें एक कथा विष्णु पुराण के चतुर्थ अंश के दूसरे अध्याय में है। इसमें वृद्ध सौभरि नामक महर्षि ने १२ वर्ष तक जल में निवास करते हुए परिवार सहित मत्स्यों को देखकर परिवार की कामना की थी और मान्धाता से कन्यादान का निवेदन किया। उनकी पचासों कन्याओं ने उनका वरण किया। इस प्रकार उनके १५० पुत्र पौत्रादि हुए। बाद में वे पुनः जीवन से विरक्त हो गए और वानप्रस्थ लेकर वन में चले गए और तपस्यारत हो गए।[2] यह आख्यायिका ब्रह्मचर्य, गार्हस्थ्य, वानप्रस्थ और सन्यास चारों आश्रमों तथा चारों पुरुषार्थ से पूर्ण है।

विष्णु पुराण के प्रथम अंश के पन्द्रहवें अध्याय में भी कण्डु नामक मुनीश्वर

---

1. भारतीय प्रेमाख्यान की परम्परा–पृष्ठ २०
2. विष्णु पुराण, चतुर्थ अंश, अध्याय २–पृष्ठ २८०, २८१

की कथा आई है। गोमती के तट पर उनकी घोर तपस्या को भंग करने के लिए प्रम्लोचा नामक अप्सरा आई। उसके मोह में ऋषि बहुत दिनों तक लीन रहे, इसमें कामजन्य मोह के प्रति मर्मस्पर्शी चित्र हैं। इस मोह में पड़ा मानव सहस्र वर्ष की अवधि को केवल दिन भर का समय मानता है। इसी प्रकार शिव पार्वती की प्रेम कहानी भारतीय प्रेमाख्यानों में महत्वपूर्ण है। इसमें पार्वती अपनी कठिन तपस्या से योगीश्वर शिव को भी अपने वश में कर लेती हैं और शंकर उसकी आज्ञा पालन करने के लिए तैयार हो जाते हैं।[1] पार्वती कहती हैं मेरा मनोरथ पूरा हुआ। मन तो प्रथम ही आपको समर्पण कर चुकी हूँ। किन्तु यह शरीर माता पिता का है। आप उनसे ही दान स्वरूप लेकर उनका सम्मान और इष्टरूपा संस्कृति की रक्षा करें।[2]

आध्यात्मिकता को विरला बल देने वाली प्रेमाख्यिका मदालसा की भी प्राप्ति होती है जिसमें भवसागर में डूबते हुए पुरुष को स्त्री बचा लेती है। शतपथ ब्राह्मण की श्रद्धा नामक आख्यायिका में भी उक्त दृष्टिकोण की पुष्टि हुई है।

वैदिक तथा पौराणिक प्रेमाख्यानों पर समीक्षात्मक दृष्टि डालने से यह स्पष्ट हो जाता है कि इसमें नारी-नर सम्बन्ध पर बल देते हुए कामवृत्ति के मानव में कुत्सित तथा विकृत रूप धारण की ओर भी संकेत दिया गया है। इसको पवित्र बनाने के लिए संयम, नियम तप और समाधि की आवश्यकता है। कतिपय ऋषियों की चारित्रिक त्रुटियों अनैतिक आचरणों का वर्णन भी इन आख्यानों में हुआ है। जिसका उद्देश्य मानव का चरित्र निर्माण ही है। ब्रह्मदेव, गन्धर्व आदि अलौकिक तत्वों की भी नर-नारी के सम्बन्ध में व्याख्या मिलती है।

भारतीय वाङ्मय में काम को देवता का सम्मानित पद प्राप्त है। रति इसकी सहजा शक्ति है। कहीं कहीं काम की दो स्त्रियों रति और प्रीति का भी उल्लेख हुआ है। काम को पुष्पधन्वा और पंचबाण भी कहते हैं बसन्त उसका सखा है। रक्तकमल अशोक, आम्रमंजरी, नवमल्लिका तथा नीलोत्पल अथवा सम्मोहन उन्मादन, शोषण, तापन स्तम्भन उसके पंच बाण हैं।[3] रति से शारीरिक तोष तथा प्रीति से मानसिक असन्तोष होता है।

१-हिन्दी विश्व कल्याण हिन्दू संस्कृति अंक-पृष्ठ ६२१

२-स्कन्द पुराण

३-हिन्दी विश्वकोश भाग २ पृष्ठ ४२५

धाम का अविरुद्ध रूप ही काम्य है। भारतीय समाज व्यवस्था में गृहस्थ जीवन को समुचित स्थान प्राप्त है किन्तु उसका आग्रह है कि गृहस्थ धर्म को अनुज्ञा से भोगासक्त न होते हुए भी भोगों का भोग करे। क्योंकि मानव जीवन का परम लक्ष्य भी यही है कि वैराग्य द्वारा ही मोक्ष की प्राप्ति हो। यह शरीर प्रायः सम्पूर्ण रूप से तामसिक है। इसमे प्राणों के पीछे राजस की क्रान्ति होती है। सत्व आछन्न रहता है। इसी सत्व को सुप्रकाश्य बनाने की साधना ही भाव का विकास है जिसकी अन्तिम परिणति प्रेम में होती है। यह प्रेम वास्तव में काम ही है। यह प्रेम उत्सर्ग शीला सात्विकी वृत्तियों से उद्भूत होता है। यही प्रेम जब ईश्वराभिमुख हो जाता है तब परमप्रेम कहा जाता है। उसको मानव व्यापारों से उसे समझने समझाने का प्रयास किया है। प्रेमाख्यान उसी प्रयास की एक विधा विशेष है।

बौद्धकालीन भारत अपने उक्त वैदिक आदर्शों से च्युत हो गया है। आजीवन अविवाहित तथा अविवाहिता भिक्षु भिक्षुणी का समुदाय बनने लगा। सांस्कृतिक रूप यौवन विराग के हाथों तिरस्कृत होने लगा। कोरी गाथा में शुभा ने रूप लोलुप युवक के इस प्रस्ताव को कि अरे युवती स्त्री तुम अपने पीले वस्त्र फेंक दो और मेरे साथ चलकर भोग विलास करो और इस प्रकार जीवन का आनन्द लूटो, ठुकरा देती है और शरीर को क्षणिक बताते हुए अपनी आँखें अपने हाथों निकाल कर उस युवक को दे देती है।[1] इस प्रकार बौद्ध तथा जैन साहित्य मे प्रेमाख्यानों का अस्तित्व मिलता है अपभ्रंश साहित्य मे भी प्रेमाख्यानो की कमी नही है। इन पर प० परशुराम चतुर्वेदी जी ने विचार किया है।[2] लौकिक संस्कृत साहित्य मे तथा आधुनिक भाषाओं मे अनेक प्रकार के प्रेमाख्यान मिलते हैं। इनका हिन्दी प्रेमाख्यानों पर प्रभाव भी पड़ा है।

फारसी के सूफी प्रेमाख्यान :

फारसी के प्रेमाख्यान मसनवी परम्परा मे लिखे गये हैं। मसनवी का आरम्भ ईरान मे कब हुआ यह बताना बहुत कठिन है। अरब में रजज को मसनवी कहा जाता है। फारसी के मसनवियों के लिए यही आदर्श भी हो सकती है। यद्यपि अरब की मसनवियाँ कलात्मक रूप मे नही लिखी जाती थी। किन्तु ईरान मे हजारों मसनवियाँ विद्यमान थी। अत. अरबी रजज को फारसी मसनवियों का स्रोत नहीं माना जा सकता।

रूदकी को फारसी कविता का आदम माना जाता है। इस आधार पर इसी को प्रथम मसनवी प्रणेता कहा जा सकता है किन्तु रूदकी की मसनवी आज प्राप्त नहीं

१. भारतीय प्रेमाख्यान की परम्परा-पृष्ठ २७, २८
२ वही-पृष्ठ १५, १६

है। केवल उसके उदाहरण यत्र-तत्र सुरक्षित हैं।[1] फिरदौसी के पूर्व अनेक मसनवियाँ लिखी गई थीं। अरूदी ने अपने नात में लबेवी अबू शकूर, तैयान, अन्सारी आदि की मसनवियों का उल्लेख किया है।[2] इनमें अधिकांश व्यंग्यात्मक आख्यान ही ही मुख्य है।

फिरदौसी ने शाहनामा जैसे महान व्यंग्यात्मक काव्य के अतिरिक्त यूसुफ जुलेखा नामक प्रेमाख्यान की रचना की थी।[3] स्वयं शाहनामा में अनेक मनोरंजक प्रेमाख्यानों की रचना की गई है। इनमें 'जाल और खुदाबा' शहजादी की प्रेम कहानी बड़ी प्रसिद्ध और लोकप्रिय मानी जाती है। इन्हीं कहानियों से प्रेरणा लेकर ही फिरदौसी तथा अन्य कवियों ने स्वतन्त्र रूप से प्रेमाख्यानों की रचना मसनवी पद्धति में किया था। इनके पहले भी बख्तियारी बहदरी तथा अब्दुल मोहम्मद बलखी ने यूसुफ जुलेखा प्रेमाख्यान लिखा था। इस प्रकार प्रेमाख्यानों का प्रारम्भ फारसी कविता में बहुत पहले ही हो चुका था। किन्तु निजामी की मसनवियों और प्रेमाख्यानों से वह स्वयं अमर हो गया और प्रेमाख्यानों की एक स्वस्थ परम्परा भी चल पड़ी। इनके खमसा या पचगंज लिखा था जो मसनवी शैली में है। इनमें लगभग २८ हजार शेर हैं।[4] इनमें पहली मसनवी मखजनुलअसरार है। अन्य चार मसनवियाँ आख्यान हैं। इनके नाम खुसरू, शीरीं, लैलामजनू, हफ्त पैकर और सिकन्दर नामा हैं।

खुसरू, शीरीं और लैला-मजनू प्रेमाख्यान हैं। इन्हीं से प्रेमाख्यानों की परम्परा चली आई। परवर्ती कवियों ने इन्हीं को आधार बनाया। खुसरू शीरीं प्रेमाख्यान में सासानी युग की एक प्रेम कहानी का वर्णन है और इसमें कुल ६ हजार शेर हैं। कवि ने अपने समय के प्रसिद्ध अमीरों का विवरण भी इसमें दिया है। डा० रजा जादा शफक का विचार है कि इस प्रेमाख्यान को सर्वप्रथम फिरदौसी ने काव्यबद्ध किया था।[5] अतः निजामी ने इसी से लिया होगा। डा० श्याममनोहर पाण्डेय ने ए हिस्ट्री आफ आटोमन पोइट्री का सन्दर्भ देते हुए तबेरी से संकलित करने का उल्लेख किया है।[6] ब्राउनजी ने स्पष्ट शब्दों में व्यक्त किया है कि

---

१. शेरुल अजम भाग ४-पृष्ठ २०७
२. वही-पृष्ठ २०८
३. ए लिट्रेरी हिस्टरी आफ परशिया भाग २-पृष्ठ १३१
४. तारीख अदबियात ईरान-पृष्ठ १८८
५. तारीख अदबियात ईरान-पृष्ठ २८९
६. मध्ययुगीन प्रेमाख्यान-पृष्ठ २६

सनाई की अपेक्षा इस कहानी को फिरदोसी से लिया गया है। इसमें सासानी बादशाह खुसरो परवज की शीरी के साथ प्रेम, उसको प्राप्त करने मे उसका पराक्रम, प्रति नायक प्रेमी फरहाद की एक निष्ठा तथा दोनों प्रेमियों की गम्भीरता का वर्णन है।[1] कवि ने इसमें दो प्रकार के प्रेमियों की विषमता और प्रकृति का वर्णन किया है। फरहाद अपने नि स्वार्थ प्रेम के लिए प्रसिद्ध और प्रेमियो मे अमर है।

निजामी का दूसरा प्रेमाख्यान लैला-मजनू है। शेरवानी बादशाह म मनोहर खाकानी बहुत ही कलाप्रिय एव कवियो का सरक्षक था। उसने अपनी ख्याति के लिए निजामी को लैला-मजनू का प्रेमाख्यान काव्यबद्ध करने का आग्रह किया था। इसके पूर्व किसी न इस पर काव्य के रूप म लेखनी नहीं उठायी थी। प्रथम काव्य प्रणेता होने के मोह मे निजामी ने इसको लगभग चार महीने मे सन् ५८४ हि० मे पूर्ण किया।[2] यह प्रेमाख्यान किसी समय निजामी का सर्वाधिक लोकप्रिय आख्यान था। पूर्व, ईरान और तुर्की मे यह बहुत ही लोकप्रिय थी। बगदाद मे फुजूल ने इस करुण कहानी को नये ढग से लिखा था। अरब में प्रेम कविताओ का एक सग्रह प्राप्त हुआ है जिसमे अनक काल्पनिक तथा धार्मिक विश्वासो पर आधारित प्रेम कहानियां लिखी गई थी। अरब म इन प्रेमी युग्मों को शाही परिवार का नही माना गया है बल्कि वे अरब मरुस्थल के सामान्य नायक नायिका थे।[3] अरब मे यह सामान्य प्रथा रही है कि प्रेमी प्रेमिकाओ को विवाह के बन्धन मे नही बांधा जा सकता है। इतना निश्चित है कि यह पुरानी अरबी कहानी है किन्तु निजामी की काव्य प्रतिभा ने इसको विशेष लोकप्रियता प्रदान की।

लैला मजनू मे प्रेम का उदय साहचर्य से हुआ है और इन दोनों का मिलन विद्यालय मे हुआ था। कैस लैला के प्रेम मे दीवाना हो गया था। इसीलिए उसे मजनू कहा करते थे। कठोर बन्धनो के बाद भी लैला अपने प्रियतम के लिए बताब रही। लैला के पिता ने उसका विवाह इब्ने सलाम से कर दिया। माता-पिता तथा पति की मृत्यु के बाद ही लैला अपने भटकते हुए प्रेमी से मिल पाती है। लैला की मृत्यु के बाद मजनू भी एक सच्चे प्रेमी की भांति अपनी जीवनलीला बद कर समाप्त कर लेता है। दोनों प्रेमी एक दूसरे से स्वर्ग मे ही मिलते हैं। इस प्रकार दोनों का मिलन कराकर यह सिद्ध कर दिया गया है कि वास्तविक प्रेमी किसी आध्यात्मिक प्रेरणा से सयुक्त अवश्य हो जाते हैं। इससे योरोपीय अन्ध विश्वास को भी ठेस लगती है।

---

१. ए लिटरेरी हिस्ट्री आव परशिया भाग २-पृष्ठ ४०४

२. दोरम अजम भाग १-पृष्ठ २६१

३. ए लिटरेरी हिस्ट्री आव परशिया भाग २-पृष्ठ ४०६

लैला मजनू सूफी विचारधारा से ओत प्रोत है। इस लौकिक प्रेम कहानी के द्वारा अलौकिक प्रेम को स्पष्ट करने की चेष्टा की गई है। दोनों प्रेमी वासना से रहित रहते हैं। प्रेम की एकनिष्ठता और आत्म समर्पण का भाव इस आख्यान की मूलभूत विशेषता है। प्रेम निरन्तर काम रहित होता है। इस प्रकार ४००० शब्दों में इसप्रसिद्ध काव्य की रचना की गई है।

फारसी प्रेमाख्यानों की परम्परा में 'जामी' और 'नाजिम हर्वी' की यूसुफ जुलेखा का भी महत्वपूर्ण स्थान है। 'जामी' इसी काव्य से अमर भी हो गया है। जामी ने भी शीरीं फरहाद और लैला मजनू के प्रेम की गम्भीरता का उल्लेख किया है और उनसे प्रेरणा ली है। वह निजामी को अपना आदर्श मानता है। इस महत्वपूर्ण काव्य का वर्णन विस्तार से हो चुका है। जामी ने लैला मजनू, सुलेमान व बिलकीस नामक प्रेमाख्यानों की रचना भी की थी।

इन फारसी के प्रधान प्रेमाख्यानों के बाद भारतीय फारसी कवियों द्वारा रचित प्रेमाख्यानों का भी महत्वपूर्ण स्थान है। भारतीय कवि अमीर खुशरू ने फारसी कवि निजामी से प्रेरणा लेकर अपना खम्सा लिखा था। खुशरू एक भारतीय कवि थे। अत भारतीय वातावरण का प्रभाव अपेक्षाकृत उनमें अधिक है। साथ ही उन्होंने अरबी तथा फारसी परम्पराओं का भी निर्वाह किया है। उसने भी खुशरू शीरीं लैला मजनू तथा हस्त पैकर नामक प्रेमाख्यान लिखा है। सभी में प्रेमी व प्रेमिकाओं का विवाह न कराकर अरबी और फारसी परम्परा का निर्वाह किया गया है। इससे लौकिक प्रेम के माध्यम से अलौकिक प्रेम की पुष्टि की गई है। भारतीय कवियों से प्रेरणा लेकर ही खुशरू ने भी सम्भोग शृंगार की व्यञ्जना की है। जामी आदि ने भी सम्भोग का वर्णन किया है। किन्तु खुशरू ने भारतीय प्रभाव से ऐसा किया है। इसके अतिरिक्त अमीर खुशरू ने दूवलरानी प्रेम कहानी लिखी है। इसमें अलाउद्दीन के पुत्र खिज्र खाँ और गुजरात की राजकुमारी दूवलरानी की दुखान्त प्रेम कहानी का वर्णन है। भारतीय फारसी प्रेमाख्यानों में फैजी का नल दमन भी है। यह मूलतः भारतीय आख्यान है। इस कथानक को लेकर संस्कृत तथा अन्य भारतीय भाषाओं में काव्य रचे गये हैं। महाभारत के नलोपाख्यान ही विकसित होकर विविध रूपों में व्यक्त हुआ है। फैजी मुगलकालीन फारसी कवि हैं। इसमें नल और दमयन्ती के प्रणय और मिलन की कथा का विस्तार से वर्णन है। इसमें प्रेम का आरम्भ गुण श्रवण से हुआ है। वर्णन में गम्भीरता का अभाव है।

सम्राट अकबर के युग में ही मुल्ला नोवई खावूशानी ने सन् १६०६ में फारसी में 'मसनवी सोज व गुदाद' की रचना की थी जो उस समय का प्रसिद्ध तथा लोकप्रिय प्रेमाख्यान है। यह अब प्रकाशित हो गया है और इसकी एक प्रति दारुल-

मुसफ्फोन एव शिबली अकादमी के प्रसिद्ध पुस्तकालय मे भी है। इसमें दो हिन्दू प्रेमी प्रेमिकाओ का वर्णन है। इसका नायक प्रेम विह्वलता म मजनू से भी बढ़कर बताया जाता है। इसमे नायिका की मृत्यु के बाद नायक भी मरम होकर अपना करुण अन्त कर देना है। नायक की ओर से अनन्य प्रेम की गम्भीरता का परिचय इसम दिया गया है। इसका आनन्दकुमार स्वामी ने १९१२ मे अग्रेजी में अनुवाद किया था।

इसके बाद जहाँगीर के युग म हयाती गिलानी न खुशरू शीरी के छन्द मे हो सुलेमान बिलकीस नामक प्रेमाख्यान लिखकर जहाँगीर का सेवा मे प्रस्तुत किया था। इस प्रेम कहानी से सम्राट बहुत प्रसन्न हुआ था और काव्य को तौलवा कर उसके बराबर सोना पारितोषिक दिया था।[1] इसक अतिरिक्त अमीर हसन सिज्जी ने 'इश्क नामा' नाम से एक प्रेमाख्यान लिखा था जो उनके कुल्लियात हसन सिज्जी मे सग्रहीत है।[2] इसमें भी हिन्दू प्रेमी प्रेमिका का वर्णन है।

इन मौलिक प्रेमाख्यानो क अतिरिक्त कुछ महत्वपूर्ण आख्यानो का फारसी मे अनुवाद भी हुआ था। मधुमालती का फारसी मे अनुवाद आकिल खाँ राजी ने मधुमालती और मनोहर नाम से सन् १६५४ ई० म किया था। इसी कवि ने जायसी के पद्मावत का शमा परवाना नाम स फारसी म सन् १६५८ ई० मे अनुवाद किया। मुहम्मद मुराद ने कामरूप और कोमलता का फारसी म अनुवाद किया था।[3] बैयानी ने सन् १६९४ ई० मे चन्दर बदन महियार दकनी प्रेमाख्यान का 'इश्क नामा' नाम से फारसी में सफल अनुवाद किया था।[4]

इस प्रकार सूफी प्रेमाख्यान काव्य परम्परा ने हिन्दी की प्रेम गाथाओं को प्रभावित किया है। दक्खिनी हिन्दी मे लिखी गई प्रेम गाथाय तो फारसी की मसनवी परम्परा के बहुत निकट हैं और उन पर भारतीय काव्य परम्परा का प्रभाव नाम मात्र का है। किसी किसी में भारतीय वातावरण के दर्शन होते हैं। अवधी मे लिखी गई प्रेम गाथाओं पर फारसी के प्रभाव के साथ ही साथ भारतीय प्रबन्ध काव्यों का भी प्रभाव लक्षित किया जा सकता है। हिन्दी सूफी प्रेमाख्यानों के ऊपर फारसी मसनवी परम्परा की अमिट छाप है।

हिन्दी के असूफी प्रेमाख्यान :

हिन्दी के प्रथम इतिहास प्रणेता विद्वान गार्सा द तासी ने अपने इतिहास में

---

१. बज्म तैमूरिया पृष्ठ–१२६
२ कुल्लियात हसन सिज्जी – पृष्ठ २९०–३२३
३. स्प्रेंगर का कैटलाग – पृष्ठ ५४३
४. ब्रिटिश म्यूजियम कैटलाग भाग २– पृष्ठ ६९७

हिन्दी प्रेमाख्यानकार जायसी का संक्षिप्त परिचयात्मक विवरण देकर विद्वानों का ध्यान इस ओर आकर्षित किया था।[1] इसके बाद खोज में कोई महत्वपूर्ण विवरण प्राप्त नहीं हुआ। अंग्रेजी में लिखित अपने इतिहास में डॉ० ग्रियर्सन ने भी इसका परिचय दिया था[2] किन्तु इसकी परम्परा का संक्षिप्त परिचय बाबू जगमोहन ने चित्रावली की भूमिका में प्रस्तुत किया।[3] यह लेखकों का परिचयात्मक उल्लेख ही था। हिन्दी प्रेमाख्यानक काव्य में आलोचना और अनुसन्धान को सम्यक् रूप से प्रोत्साहन देने वाले आचार्य प० रामचन्द्र जी शुक्ल ही हैं। सन १९२१ ई० में लाल जीवन वर्मा जी ने 'आख्यानक काव्य' नाम से एक निबन्ध नागरी प्रचारिणी पत्रिका में प्रकाशित किया था और २० ज्ञात प्रेमाख्यानों एवं कवियों का परिचय दिया था।[4] डॉ० कमल कुलश्रेष्ठ ने हिन्दी प्रेमाख्यानक काव्यों पर अनुसन्धानात्मक प्रकाश डाला है।[5]

परवर्तीकालों में हिन्दी के प्रेमाख्यानों पर विशेष कार्य हुआ। अनेक विश्व-विद्यालयों में इस विषय पर शोध कार्य भी हुआ। डॉ० श्याममनोहर पाण्डेय ने सूफी तथा असूफी प्रेमाख्यानों पर जो जो कार्य किया है सभी का विवरण अपने प्रबन्ध के निवेदन में दिया है।

हिन्दी में सूफी धारा से भिन्न भारतीय पद्धति पर प्रेमाख्यानक काव्यों की एक धारा बहुत पहले से बह रही थी।[6] इसके प्रमाण अनेक उपलब्ध प्रकाशित तथा अप्रकाशित पोथियों से प्राप्त होते हैं। इन असूफी प्रेमाख्यानों की उपलब्ध सामग्री का परिचय डॉ० श्याममनोहर पाण्डेय ने दिया है। इस प्रकार के आख्यानों पर डा० रामकुमार वर्मा, डा० माता प्रसाद गुप्त, डा० श्याम मनोहर पाण्डेय, डा० हरिकान्त श्रीवास्तव, आचार्य प० परशुराम, आदि का कार्य हमारे लिए प्रेरणा का स्रोत रहा है। डा० श्याममनोहर पाण्डेय ने अपने प्रकाशित प्रबन्ध मध्य-युगीन प्रेमाख्यान में सूफी और असूफी प्रेमाख्यानों का तुलनात्मक एवं आलोचनात्मक अध्याय प्रस्तुत किया है।[7]

---

१. हिन्दुई साहित्य का इतिहास – पृष्ठ ८३
२. हिन्दी साहित्य का प्रथम इतिहास – पृष्ठ ८३–९७
३. चित्रावली की भूमिका – पृष्ठ – ३–९
४. नागरी प्र० पत्रिका स० २०१६ अंक ३-४ – पृष्ठ १९०
५. हिन्दी प्रेमाख्यानक काव्य – पृष्ठ १२-१७
६. ना० प्र० पत्रिका स० २०१३ अंक १ – पृष्ठ १६९
७. मध्य युगीन प्रेमाख्यान – पृष्ठ १६५–२२६

हिन्दी में इसके जन्म से लेकर अगणित असूफी प्रेमाख्यान लिखे गये हैं। इन सभी का पृथक-पृथक परिचय अनेक पुस्तकों में दिया जा चुका है। उनके वर्गीकरण के विविध प्रयास भी किये गये हैं। उनके उद्देश्य को लेकर डा० हरिकान्त श्रीवास्तव ने इनको तीन वर्गों में विभाजित किया है। इन्होंने (क) शुद्ध प्रेमाख्यान (ख) अन्यापदेशिक काव्य (ग) नीति प्रधान प्रेम काव्य के रूप में वर्गीकृत किया है।[1] इनके अतिरिक्त डा० श्याम मनोहर पाण्डेय ने असूफी प्रेमाख्यानों में प्रेम का स्वरूप निर्धारित करके उन्हीं की प्रवृत्तियों के आधार पर प्रेमाख्यानों को चार वर्गों में विभाजित किया है।[2] (१) दाम्पत्य परक प्रेमाख्यान (२) काम परक प्रेमाख्यान (३) सत परक प्रेमाख्यान (४) अध्यात्म परक प्रेमाख्यान।

१– दाम्पत्य परक प्रेमाख्यान :

इनमें दाम्पत्य प्रेम को ही प्रधानता दी गई है। इसमें प्रेम का आरम्भ विवाह का सम्बन्ध स्थापित हो जाने के बाद ही आरम्भ होता है। कहीं-कहीं प्रेम उदय के बाद ही दाम्पत्य जीवन का आरम्भ होता है। वैसे तो दाम्पत्य प्रेम का रूप प्राय. सभी प्रकार के प्रेमाख्यानों में पाया जाता है। इन रचनाओं में सबसे प्राचीन आख्यान *ढोलामारु है। यह नागरी प्रचारिणी सभा से प्रकाशित हो गया है।* इसकी रचना सम्वत् १००० वि० के लगभग मानी जाती है। राजस्थान में इसका विशेष प्रचार बताया जाता है। यद्यपि यह आख्यान ऐतिहासिक है। किन्तु इसकी सभी घटनायें ऐतिहासिक नहीं कही जा सकती हैं। इसमें नायिका का प्रेम अपने पति के प्रति और नायक का प्रेम अपनी पत्नी के प्रति समान रूप से था। दोनों का गम्भीर प्रेम सुखी दाम्पत्य जीवन में ही पुष्ट हो रहा था।

इस प्रकार का दूसरा प्रेमाख्यान नरपति नाल्हकृत बीसलदेव रास है। इसमें बीसल देव सम्भार और मालवा के राजा भोज परमार की पुत्री राजमती के दाम्पत्य प्रेम की कहानी कही गई है। इसकी रचना तिथि के सम्बन्ध में मतभेद पाया जाता है। ग्रन्थ में आये बारह से बहोत्तरा मझारि की भिन्न-भिन्न प्रकार से व्याख्या की गई है। इसमें सवत १२१२ वि. को शुक्ल जी आदि अधिकांश लोग सत्य मानते हैं। यह एक शुद्ध प्रेमाख्यान ही है। अत: इसको रासो ग्रन्थों की श्रेणी में नहीं रखा जा सकता है। इन दोनों में विवाह के बाद प्रेम का उदय हुआ था। विवाह के पूर्व प्रेम उत्पन्न होने के बन्धन में बधने वाले प्रेमियों का आख्यान लखमसेन पद्मावती में दिया गया है। दोनों में समान रूप से प्रेम की और विरह

१. हिन्दी प्रेमाख्यानक काव्य-पृष्ठ १६१
२. मध्ययुगीन प्रेमाख्यान- पृष्ठ १४०

की गम्भीरता व्यक्त की गई है।[1] इनके अतिरिक्त प्रेम, विलास, प्रेमलता कथा चन्द्रकुंवरि की बात, राजा चित्रमुकुट रानी चन्द्रकिरन की कथा, उषा की कथा, ऊषाचरित नलदमयन्ती कथा आदि भी शुद्ध प्रेमाख्यान हैं। इनमें भी दाम्पत्य प्रेम की झलक दी गई है।

२– काम परक प्रेमाख्यान :

इस प्रकार के प्रेमाख्यानों में काम भावना की प्रधानता रहती है। इनमें अधिकांश रूप से परकीया प्रेम की तीव्रता का दिग्दर्शन कराया गया है। माधवानल 'काम कन्दला' का प्रेमाख्यान काम परक सूचनाओं से विशेष लोकप्रिय है। इस प्रेमाख्यान को लेकर बोधा, गणपति, दामोदर, राजकवि कुशल लाभ आनन्दधर तथा आलम आदि ने काव्य की रचना की है। विविध कवियों की काम कन्दला को लेकर शोध कार्य भी किया गया है। काम कन्दला विक्रमादित्य के परिवार की एक राज-नर्तकी थी उसके सुन्दर रूप पर माधव आकृष्ट होता है। पूर्व जन्म के दोनों काम-रति के रूप मे पति पत्नी रह चुके हैं। अन्त मे दोनों को दाम्पत्य बन्धन में बाँध दिया गया है। कवियों ने परम्परागत आख्यायिका के साथ अपनी कल्पना का भी सहारा लिया है। कल्पना के आधार पर ही कामकन्दला जैसी नर्तकी को कामरति से पवित्र दिखाने की चेष्टा की गई है।

इस प्रकार का दूसरा प्रेमाख्यान 'मधुमालती' है। इसके रचयिता चतुरभुज दास हैं। इसमें भी मधु और मालती को काम और रति का अवतार मानकर दोनों को सौन्दर्य का प्रतीक कहा है। सामान्य नायक का प्रेम एक राजकुमारी से विकसित किया गया है। यह कहानी भी बड़ी लोकप्रिय रही है। फारसी, दक्नी हिन्दी म तथा अवधी में अन्य कवियों ने भी इसी कहानी को लेकर अपने प्रेमाख्यानों की रचना की है। मझन की मधुमालती में सूफी तत्वों का समावेश किया गया है। किन्तु चतुर्भुज दास की मधुमालती असूफी प्रेमाख्यानों में महत्वपूर्ण स्थान रखती है तीसरा कामपरक प्रेमाख्यान पुहकरकृत इसरतन है। इस पर सूफी प्रेमाख्यानों का कुछ प्रभाव स्वीकार किया जाता है। किन्तु कवि का उद्देश्य जीवन में काम की महत्ता ही स्थापित करना है।[2] इसमें यूसुफ जुलेखा की भाँति नायिका राजकुमारी रम्भा के प्रेम का उदय स्वप्न दर्शन से ही हुआ था। वह जुलेखा की भाँति उद्विग्न हो जाती है और दासी से अपने प्रेम का रहस्य बता देती है। दोनों एक दूसरे के चित्र को देखकर प्रसन्न होते हैं और स्वयंवर में दोनों का मिलन हो जाता है। इस

१. मध्ययुगीन प्रेमाख्यान – पृष्ठ १४३
२. मध्ययुगीन प्रेमाख्यान – पृष्ठ १११

काव्य की प्रेम पद्धति कुछ अंशों में यूसुफ जुलेखा से मिलती जुलती है। इसी आधार पर उसको सूफी भावों से प्रभावित बताया गया है किन्तु यही प्रेम सूफी रचना के लिए अनिवार्य नहीं होता है।

सारंगा सदावृज की कथा भी काम परक कही जाती है। यह प्रेमाख्यान 'सदयवत्स सावलिंगा' के नाम से भी मिलती है। इसका राजस्थान ही नहीं बल्कि अनेक लोकाख्यानों में भी प्रचार है। मैंने व्यक्तिगत रूप से रानी सारंगा और सदावृज की कहानी गाते हुए कई स्थानों पर सुना है। यह प्रेम कथा जायसी के पदमावत की भाँति बतायी जाती है जो पदमावत के पूर्व ११वी शताब्दी के आरम्भ काल में भी प्रचलित रही और इसका प्रचार गुजरात, राजस्थान, पंजाब की ओर रहा।[१] इन भाषाओं में इसकी रचना भी हुई है। इसमें भी काम नीति की प्रधानता दी गई है और प्रकृत सुरति क्रीडा के अनेक सुन्दर चित्र दिए गए हैं।[२]

३—सतपरक प्रेमाख्यान :

इसमें नायिका के सतीत्व पर विशेष ध्यान रखा जाता है। इसमें नायिका का व्यक्तित्व प्रधान होता है। सूफी काव्यों के नायक की भाँति इसमें नायिका विविध बाधाओं का निराकरण करती है। सभी स्थितियों में उसका चरित्र पवित्र प्रेम संवेदनशील और विरह गम्भीर रहता है। इस प्रकार के काव्य में नारायणदास रचित 'छिताई वार्ता' का महत्वपूर्ण स्थान है। परम सुन्दरी छिताई के रूप पर लोलुप अलाउद्दीन रीझ जाता है और उसका बल से अपहरण कर लेता है। किन्तु वह अनेक प्रयास करने पर भी विचलित नहीं होती और अपने पति सोरसी के ही एकनिष्ठ प्रेम में लीन रहती है।[३] यह आख्यान डा० माताप्रसाद जी गुप्त द्वारा प्रकाशित भी हो चुका है। इसके अतिरिक्त रतनजी ने भी छिताई चरित नाम से अपने प्रेमाख्यान की रचना की है। जिसमें इसी कथानक को अपनाया गया है।[४]

मैनासत इस प्रकार का दूसरा प्रेमाख्यान है। इसमें सोरिक की विवाहिता पत्नी मैना के एकनिष्ठ प्रेम और सतीत्व का परिचय दिया गया है। कुटनी आदि के प्रयासों का भी उसके ऊपर प्रभाव नहीं पड़ा था। साधन कृत इस प्रेमाख्यान की कथा चन्दायन की कथा से मिलती जुलती है। बंगाली कवि दौलत काजी ने भी इस

---

१. भारतीय प्रेमाख्यान की परम्परा – पृष्ठ ७४
२. मध्ययुगीन प्रेमाख्यान – पृष्ठ १४७
३. मध्य युगीन प्रेमाख्यान – पृष्ठ १४७
४. ना० प्र० प०-प्राचीन हस्तलिखित ग्रंथों की खोज,ख० १००१ अंक १-पृ० १६८

कथा पर एक प्रेमाख्यान बगला मे लिखा था।[1] इसी को लेकर हैदराबाद मे दक्खिनी हिन्दी मे मसनवी किस्सा 'मैना सतवन्ती' लिखा गया था। जिसका सम्पादन डा० श्रीराम शर्मा ने कर लिया है। निकट भविष्य मे यह प्रकाशित भी हो जायगा। इसका विस्तार से वर्णन दक्खिनी हिन्दी के प्रेमाख्यान शीर्षक मे इसी अध्याय में किया गया है।

नायिका दमयन्ती के सतीत्व का चित्रण करने वाला प्रेमाख्यान सूरदास का नलदमन है। इसका आधार भी पौराणिक है और कथा महाभारत से ली गई है। यह आख्यान भी लोकप्रिय है और फारसी म भी फैजी ने इसकी रचना की थी।

४–अध्यात्म परक प्रेमाख्यान :

इस प्रकार के प्रेमाख्यानों मे प्रेम के अध्यात्मिक पक्ष पर विशेष ध्यान रखा जाता है। इसके अतिरिक्त इस स्वभाव से प्रेरित सन्त कवियो द्वारा रचे गये प्रेमाख्यानो मे भी इसी प्रकार का वातावरण छाया हुआ रहता है। इसमे नायक एव नायिका आत्मा एव परमात्मा के प्रतीक माने गये हैं। धर्म भावना की प्रधानता के कारण रहस्यात्मकता एव प्रतीकात्मकता से ओतप्रोत भी रहते हैं।

आध्यात्म परक प्रेमाख्यान अधिक सख्या म लिखे गये हैं किन्तु परिचय के लिए कुछ प्रसिद्ध रचनाओं का ही उल्लेख यहाँ सम्भव होगा। नन्ददास रचित रूप मन्जरी इसी प्रकार का काव्य है। अष्टछाप के कवि नन्ददास के रूप मञ्जरी की कथा का नाम २५२ वैष्णवों की वार्ता मे आया है और प्राय लोग इसको कवि के व्यक्तिगत जीवन से सम्बन्धित मानते हैं।[2] यह हिन्दू कवि का प्रेमाख्यान है और इसके नायक लीला पुरुषोत्तम श्रीकृष्ण हैं। इसमे सनातन धर्म के विश्वासों की प्रधानता है। इसमे सूफियो की भाँति लौकिक प्रेम अलौकिक प्रेम मे परिणत हो गया है। इसमे भी स्वप्न मे मिलन का वर्णन है और सम्भोग सुख का उल्लेख किया गया है।[3]

महाराज पृथ्वीराज कृत 'वेलिकृष्ण रुकमिणी री' इस प्रकार का अन्य महत्वपूर्ण काव्य है। इसमे रुकमिणी का प्रेम कृष्ण के प्रति है। यह प्रेम दिव्य और अलौकिक कहा गया है। इसकी रचना स० १६४७ ई० में हुई थी। यह भी प्रसिद्ध आख्यान माना जाता है। इसी से मिलता जुलता आख्यान रघुराज सिंह का रुकमिणी परिणय भी है। इसकी रचना स० १९०७ ई० मे की गई थी। पुहुपावली एक आध्यात्मिक प्रेमाख्यान है। इसके रचयिता दुखहरन दास हैं। यह भी सन्त भावो

१. हिन्दी के सूफी प्रेमाख्यान – पृष्ठ ३४, ३५
२. भारतीय प्रेमाख्यान काव्य-पृष्ठ ४२९
३. मध्य युगीन प्रेमाख्यान-पृष्ठ १५०

से ओत-प्रोत है। इस पर भी सूफी विचारों का प्रभाव है। लौकिक और अलौकिक प्रेम के स्वरूप पर प्रकाश डाला गया है। इसम तीन नायिकाओं का उल्लेख है किन्तु नायक का एकनिष्ट प्रेम पुहुपावली की ही ओर रहता है। इसम प्रत्यक्ष दर्शन से नायिका और गुण श्रवण से नायक को प्रभावित दिखाया गया है।[1] इसी सन्त परम्परा का अन्य आध्यात्मिक प्रेमाख्यान धरणीकृत 'प्रेम प्रगास' भी है। इसम भी नायिका परमात्मा का प्रतीक मानी गई है और नायक को साधक के रूप में देखा गया है। नायक मे ही सर्वप्रथम प्रेम का उदय होता है और सूफी काव्यों की भाँति नायक जोगी बनकर निकल पडता है।[2] इसकी घटनायें जटिल नहीं हैं किन्तु कहीं-कहीं रूपकात्मक प्रसग भी आये हैं। स्थान वाची शब्द अपना विशेष रहस्यात्मक अर्थ रखते हैं।[3] इस प्रकार यह भी एक महत्वपूर्ण काव्य है। हिन्दी में अन्य प्रकार के असूफी प्रेमाख्यानों या सूफी विचारों से कुछ प्रभावित काव्यों पर अन्य विद्वानों ने विस्तार से विचार किया है। अत यहाँ इतने से ही सन्तोष करना आवश्यक है।

अवधी के सूफी प्रेमाख्यान :

इन आख्यानों की रचना मुख्य रूप से मुसलमान कवियों द्वारा हुई थी। इस प्रकार की रचनाओं का आरम्भ भारत म मुसलमान आक्रमणकारियों से पूर्व सूफी साधकों द्वारा हुआ था। किन्तु सूफियों, फकीरों द्वारा रची गई रचनाओं का पता आज नहीं चलता है। इन रचनाओं का उद्देश्य चाहे जो भी रहा हो किन्तु इनसे इस्लाम के प्रचार प्रसार मे विशेष सहायता मिली थी। डा॰ कमल कुलश्रेष्ठ ने इन प्रेमाख्यानक काव्यों का लक्ष्य उपदेश देना स्वीकार किया है और यह उपदेश तीन वर्गों में विभाजित किया है।[4] इनमें प्रेम पन्थ का निरूपण करना, इस्लाम का व्यापक और सरलस्वरूप सामने रखना ही मुख्य था। इसके पूर्व अनेक ईरानी तथा भारतीय फारसी कवि सूफी तथा असूफी रचनाओं की रचना भी कर चुके थे। भारत मे भी असूफी काव्यों की प्रेमगाथायें बहुत पहले से प्रचलित थी। इस पूर्व कालिक परम्परा से भी मुसलमान सूफी कवियों को प्रेरणा मिली और समृद्ध सूफी प्रेमाख्यान कथाओं की रचना की गई। इन रचनाओं पर पर्याप्त अध्ययन हो चुका है किन्तु अभी तक का सारा कार्य पर्याप्त नहीं कहा जा सकता है। फिर भी उन सूफी प्रेमाख्यानों का संक्षिप्त परिचय देना अनिवार्य है।

चन्दायन— इसके रचयिता डलमऊ के निवासी मुल्ला दाउद हैं। काव्य मे

१. भारतीय प्रेमाख्यान की परम्परा-पृष्ठ १२४
२. मध्य युगीन प्रेमाख्यान-पृष्ठ १२१
३. भारतीय प्रेमाख्यान की परम्परा-पृष्ठ ११८
४. हिन्दी प्रेमाख्यानक काव्य-पृष्ठ २०१

इसका रचनाकाल सन् १३८० ई० दिया हुआ है। डा० परमेश्वरी लाल गुप्त ने इसका सम्पादन कर दिया है और यह काव्य अब प्रकाशित भी हो चुका है। यह लोक प्रचलित कथानक है। इसमें लोरक चन्दा का प्रेम सम्भोग परकीयत्व से सम्बन्धित है। लोरक और मैना का प्रेम सत्य परक है। इसमें एक महत्वपूर्ण तथ्य यह प्रदर्शित किया गया है कि कमीव की स्त्री में परकीयत्व का आना स्वाभाविक है। इसके साथ मन्दिरों, मठों, योगियों में प्रचलित बुराइयों की ओर भी ध्यान दिया गया है। प्रेम की पुकार, विरह व्याकुलता, आत्म समर्पण का आग्रह, प्रिय के लिए सर्वस्व त्याग के भावों को प्रधानता है। पूर्वानुराग के लिए स्वप्न एवं प्रत्यक्ष दर्शन का प्रयोग किया गया है। काव्य की रचना फारसी की मसनवी पद्धति पर हुई है और प्रायः सभी परम्पराओं का पालन किया गया है। अन्य सूफी तत्वों का अभाव मिलता है केवल प्रेम की साधना और उसकी आनन्दता पर बल दिया गया है। अन्य आलोचकों ने इस पर विचार किया है और स्वयं डा० परमेश्वरी लाल गुप्त जी ने इसकी विस्तृत भूमिका देकर इसके विविध पक्ष पर विचार किया है।

मृगावती–यह सूफी प्रेमाख्यानों में उपलब्ध द्वितीय महत्वपूर्ण रचना है। इसके रचयिता शेख कुतबन हैं। इसकी रचना १५०४ ई० में हुई थी। जौनपुर के निवासी सोहरवर्दिया सम्प्रदाय के पीर बूढन बुजुर्ग ही कुतबन गुरु या पीर थे। इस आख्यान में चन्द्रगिरि के राजकुमार राजु वर तथा कचन नगर के राजा रूप मुरारी की पुत्री मृगावती के प्रेम का वर्णन किया गया है। यह पूर्वानुराग प्रत्यक्षदर्शन से विकसित हुआ है। इसमें अनेक अलौकिक घटनाओं का भी वर्णन किया गया है। हिरनी का अदृश्य हो जाना, मृगावती तथा अन्य सखियों का उड़ने की कला में पारगत होना इसी प्रकार की घटनायें हैं। यह बातें सामान्य लौकिक जीवन से परे की हैं। इस प्रकार नायिका को अभिलषित रूप धारण करने की कला में निपुण दिखाकर आख्यान में कौतूहल उत्पन्न करने की चेष्टा की गई है।

आख्यान में योग, वियोग, विरह पीर और प्रेम की महत्ता पर विशेष बल दिया गया है। अनेक लोकविश्वासों का भी समावेश इसमें किया गया है। आख्यान का आरम्भ परम्परागत फारसी मसनवी परम्परा में ही किया गया है। किन्तु इसका सारा वातावरण भारतीय ही रखा गया है। कवि ने स्वयं कथा की मौलिकता और उसके प्रधान तत्वों की ओर संकेत कर दिया है।

पदमावती-सूफी प्रेमाख्यानक काव्यों का प्रतिनिधि काव्य मलिक मोहम्मद जायसी कृत 'पदमावत' ही है। इसका विशेष अध्ययन हो चुका है। गार्सा द तासी ने अपने हिन्दी साहित्य के फ्रेंच भाषा में लिखे गए इतिहास में सर्वप्रथम इसका परिचय दिया था। इसमें चितौड़ के राजा रत्नसेन और सिंहल की राजकुमारी पद्मावती की

प्रम कथा है। काव्य के दो भाग हैं। प्रथम भाग काव्यचित्र और दूसरा भाग ऐतिहासिक कहा जाता है। जायसी ने इसकी काव्य कथा का सक्षिप्त रूप छन्द २४ मे स्वय दे दिया है और काव्यान्त मे सारी कथा को उपमिति कह दिया है जिसको प्राय प्रक्षिप्त होने का अनुमान लगाया जाता है। यह हिन्दी का श्रेष्ठ काव्य माना जाता है।

जायसी का एक दूसरा काव्य चित्ररेखा है। किन्तु डा॰ श्याम मनोहर पाण्डेय इसको प्रेम काव्य कहने के पक्ष मे नही हैं। क्योकि इसका कथानक विशेष सगठित नही है और न इसमे प्रेम की ही विशेष महत्ता है।[1]

मधुमालती–इसके रचयिता मझन हैं इसकी रचना सन १५४५ई.मे हुई थी। इसमे कनैगिरि के राजा सूरजभान के पुत्र राजकुमार मनोहर और महारस नगर के राजा विक्रमराय की कन्या राजकुमारी मधुमालती की प्रेम कहानी कही गई है। बारह वर्षीय राजकुमार को चारपाई को सोते हुए परियो ने उठाकर राजकुमारी के बगल मे लिटा दिया था। जागने पर दोनो ने एक दूसरे को देखा प्रत्यक्ष दर्शन से दोनो मे प्रेम हो गया। पुन सोते मे दोनो को पृथक कर दिया गया। राजकुमार अनेक बाधाओं के पश्चात प्रेमिका को प्राप्त करने मे सफल हो जाता है।

इसकी रचना फारसी मसनवी पद्धति पर हुई है किन्तु 'पद्मावत' एव 'मृगावती' की अपेक्षा इसके कथानक मे कुछ अन्तर है। इसमे एक अन्तर कथा भी साथ ही साथ चलती है। इसकी प्रेम पद्धति भी नवीन एव स्वाभाविक है।[2] इसमें हिन्दू सस्कृति, हिन्दू प्रतीको तथा अनेक अलौकिक घटनाओं का उल्लेख है। बीच-बीच मे वर्णन विविधता से कवि की बहुज्ञता का परिचय मिलता है। प्रेम वर्णन मे मर्यादा का पालन किया गया है। और अखण्ड प्रेम की महत्ता प्रतिपादित की गई है।

चित्रावली–इसके रचयिता उसमान हैं और इसकी रचना १६१३ ई॰ मे की गई थी। यह मुगल सम्राट जहाँगीर युग की रचना है। इसमे नैपाल के राजा धरनीधर के पुत्र सुजान और रूपनगर की राजकुमारी चित्रावली की प्रेम कथा का वर्णन है। इसमे प्रेम का उदय चित्रदर्शन से हुआ था। देव की सहायता से राजकुमार चित्रावली की चित्रसारी मे राजकुमारी का चित्र देखकर मोहित हुआ था और राजकुमार के द्वारा बनाये उसके चित्र को देखकर राजकुमारी मोहित हुई थी बाद में गुण श्रवण मे राजकुमार का प्रेम दृढ़ हुआ था।

---

१. मध्ययुगीन प्रेमाख्यान – पृष्ठ ७१

२ जायसी के परवर्ती सूफी कवि एव काव्य –पृष्ठ ३३६

कवि ने इसमें रूप, प्रेम, विरह सृष्टि को मूल स्तम्भ स्वीकारा है। यत्र-तत्र आश्चर्य चकित करने वाली घटनाओं का समावेश किया गया है। सर्वत्र हिन्दू धर्म और संस्कृति का ही वातावरण देखने को मिलता है। कहीं-कहीं उपदेश प्रधान अंशों की भी प्रधानता है। आध्यात्म परक वर्णनों से कथा का उपमिति कथा होने का निष्कर्ष निकाला जा सकता है।

जान कवि के प्रेमाख्यान–इस कवि के ६० ग्रन्थ उपलब्ध हैं और वे हस्तलिखित पोथियों के रूप में हिन्दुस्तानी अकादमी इलाहाबाद में सुरक्षित हैं। डा. सरला शुक्ल के अनुसार इनमें से २९ ग्रन्थ प्रेमाख्यान हैं। इनमें से प्रमुख प्रेमाख्यानों में कथा रतनावती, कथा पुहुपबरिषा, कथा रतन मञ्जरी, छीता, कामलता, कनकावती, बुद्धि सागर या मधुकर मालति, कँवलावती, कथा मोहिनी, नलदमयन्ती, लैला मजनूं, कलावती, रूप मञ्जरी, खिज्र खां साहिजादे व देवल दे, का विस्तार से परिचय डा० सरला जी ने दिया है।[1]

जान जी ने कुछ प्रेमाख्यानों को सूफी परम्परा को दृष्टि में रखकर लिखा है कुछ पर इस परम्परा का केवल प्रभाव पड़ा है और कुछ में फारसी मसनवी परम्परा का पालन नहीं किया गया है। ये सभी ग्रन्थ छोटे-छोटे हैं और अधिकांश प्रेमाख्यानों में मसनवी पद्धति को ही अपनाया गया है। प्रेमाख्यानों की संख्या को देखकर कविता का सहज ही अनुमान हो जाता है।

ज्ञानदीप–इसके रचयिता शेखनबी हैं। इसकी रचना १६१९ ई० में हुई थी। यह काव्य सूफी प्रेमाख्यानक काव्य परम्परा का एक उत्कृष्ट काव्य है। इसमें नैमिषार मिश्रिक के राजा शिरोमणि के पुत्र राज कुमार ज्ञानदीप और विद्या नगर के राजा सुखदेव की विदुषी कन्या देवयानी के प्रेम का वर्णन किया गया है। योगी वेश में आये हुए राजकुमार को देखकर राजकुमारी की सखी सुरज्ञानी मोहित हो गई थी बाद में देवयानी ने योगी राजकुमार को देखकर हाथ की सुई से अपनी अंगुली वेध ली। उसकी बेचैनी देखकर मिस्र की महिलाओं का नेत्र के स्थान पर अंगुली काट लेने वाली घटना का स्मरण हो आता है। बाद में दोनों का विवाह हो गया और राजकुमार को अपने पिता के अन्तिम संस्कार में घर लौटना पड़ा और वह अपने राजकार्य में व्यस्त हो गया।

इसमें प्रेम का उदय साक्षात दर्शन से दिखाया गया है। पहले नायिका को प्रभावित दिखाया गया है। कथानक के मोड़ के लिए दैवी शक्तियों का उपयोग किया गया है। आख्यान का आरम्भ मसनवी शैली के प्रस्तावना खण्ड से होता है तथा आवश्यक सभी परम्परागत विधानों का पालन किया गया है। काव्य में भारतीय वातावरण की सृष्टि करके समाज और भारतीय संस्कृति का दिग्दर्शन कराया

---

१. जायसी के परवर्ती सूफी कवि एवं काव्य-पृष्ठ ३८० से ४१५ तक

गया है । अनेक दृष्टियो से काव्य महत्वपूर्ण है ।

हंस जवाहिर—इसके रचयिता कासिमशाह हैं और इसकी रचना १७६३ ई० मे हुई थी । इसमे बलख नगर के सुल्तान बुरहानशाह के शाहजादे हस और चीन देश के सुलतान आलमशाह की पुत्री शाहजादी जवाहर के प्रेम का वर्णन है। इसमे भी पदमावत की भाँति जवाहर की सहेली सब्ज परी उडकर सुन्दर वर की तलाश करती है । हस का दर्शन उसे होता है और उससे जवाहर का रूप गुणगान करती है । हंस उस रूपगुण श्रवण से मोहित हो जाता है और स्वप्न मे उसे जवाहर के दर्शन का अनुभव होता है । किन्तु राज माता ने परी को कैद करा लिया और हस का विवाह दिल्तौर नाम की शाहजादी मे करा दिया । हस जोगी होकर निकल जाता है । और जवाहर भी मिल जाती है । हस बलख का बादशाह हो जाता है । शत्रु के आक्रमण म हस मारा जाता है । दोनो रानियाँ सती हो जाती हैं और जवाहर का पुत्र हसीम बादशाह होता है ।

इस प्रकार इसकी घटनायें और कथानक पदमावत से मिलता जुलता है। कथानक पूर्णरूप से काल्पनिक है । नामों और स्थानो मे कोई साम्य नही है । पूर्वानुराग के लिए स्वप्न को विशेष महत्व दिया गया है । इसकी रचना भी मसनवी परपरा मे हुई है । स्वप्न मे जवाहिर को हस का मिलना और उसका पता पूछना आदि घटनायें युसुफ जुलेखा से मिलती-जुलती हैं । इस प्रसग की अन्य घटनायें भी इसी के समान हैं ।

इन्द्रावती—इसके रचयिता नूर मोहम्मद थे । जो ग्राम सबरहत, तहसील शाहगज जौनपुर के निवासी थे । किन्तु अपनी ससुराल भादो, फूलपुर आजमगढ मे रहते थे। इसकी रचना सन् ११५७ ई० है। इसमे कालिंजर राज्य के राजा भूपति के राजकुमार राजकुंवर और आगमपुर के राजा जगपति की कन्या रतनजोति इन्द्रावती के प्रेम का वर्णन हुआ है । प्रेम का उदय स्वप्न दर्शन से हुआ था। पहली बार राजकुमार ने स्वप्न मे एक दर्पण मे एक सुन्दरी को देखा और पुनः स्वप्न मे उसी रूप को देखा । इसके बाद वह सुन्दरी पर विमोहित हो गया । एक तपस्वी ने सुन्दरी का परिचय दिया और उसके रूप गुण का वर्णन किया जो स्वप्न सुन्दरी से मेल खाता था। इसमे राजकुमार ने सुन्दरी को दो बार स्वप्न में देखा था । अन्त मे दोनों का विवाह हो जाता है । काव्य का उत्तरार्ध दोनों के मिलन से आरम्भ होता है अन्त मे राजकुंवर की मृत्यु हो जाती है और दोनों रानियाँ सती हो जाती हैं । अन्त का भाग पदमावत से मिलता जुलता प्रतीत होता है ।

इसका कथानक काल्पनिक है और सारी कथा को रूपक के रूप मे काम लिया गया है । पात्र भी काल्पनिक हैं । राजकुंवर 'साधक' और राजकुमारी

सांसारिक मोह के आकर्षण का प्रतीक है। नायक का प्रेम सांसारिक ही है। रचना फारसी मसनवी परम्परा के अनुसार है। काव्य में सर्वत्र भारतीय वातावरण का दिग्दर्शन होता है। सूफी होने के कारण कवि ने अपनी कथा को अन्योक्ति बना दिया है।[१] इसमें कवि पूर्ण रूप से सफल भी है।

अनुराग-बांसुरी–भी नूर मोहम्मद द्वारा रचित है। मूरतिपुर के एक नगर के राजा जीव के पुत्र अन्तःकरण और सनेह नगर के राजा दर्शनराय की पुत्री सर्वमंगला की प्रेम कहानी उसमें रूपक के रूप में आई है। प्रेम का उदय रूप गुण श्रवण से हुआ था। बाद में राजकुमारी के पिता न दोनों के समान एवं एक नियत प्रेम का परिचय प्राप्त करके दोनों का विवाह कर दिया। नूर मोहम्मद ने तत्कालीन भाषा समस्या पर भी विचार किया है। उन्होंने इस्लाम के प्रचार के लिए ही हिन्दी भाषा का माध्यम अपनाया था। आचार्य चन्द्रबली पाण्डेय ने अनुराग बांसुरी की कथा को शुद्ध धर्म कथा माना है। अन्य कथा नहीं।[२] इसकी सभी घटनायें, स्थान, नाम विविध रूपकों के रूप में वर्णित हैं। यह केवल धर्म भावना के लिए ही किया गया है।

पुहुपावती–इसके रचयिता हुसेन अली और जिनका उपनाम सदानन्द है। इसकी रचना सन् ११३८ ई० है। कांचीपुर के राजा मानिक चन्द और जम्बूद्वीप के रूप नगर के राजा पद्मसेन की पुत्री पुहुपावती की प्रेमकथा का वर्णन इसमें किया गया है। यह शुद्ध प्रेमाख्यान है और इसकी कथा दुखहरन की पुहुपावती से भिन्न है। प्रेम का उदय नायक के हृदय में नायिका के रूप गुण श्रवण और नायिका के हृदय में प्रेम का आरम्भ चित्र दर्शन से हुआ है। इसमें नायिका को कामोत्तेजक चेष्टाओं में भी दिखाया गया है। शायद इसी कारण इसको यूसुफ जुलेखा की भांति शुद्ध प्रेमाख्यान कहने का अवसर डा० सरला जी को मिल गया है।[३] आख्यान की रचना मसनवी पद्धति पर ही है।

नूरजहाँ–इसके रचयिता ख्वाजा अहमद हैं। इसमें सरनद्वीप के ईरानगढ़ नगर के सुलतान मलिकशाह के पुत्र खुरशीदशाह और खुतम शहर के सुलतान खबरशाह की पुत्री नूरजहाँ की प्रेमकथा का वर्णन है। यह नूरजहाँ मुगलसम्राट जहाँगीर की पत्नी नूरजहाँ से भिन्न है और रचना भी श्री पुरुषकसिंह भक्त की 'नूरजहाँ' से भिन्न है। खुरशीद के प्रेम का उदय स्वप्न दर्शन से हुआ था। और जोगी हो गया

---

१. जायसी के परवर्ती सूफी कवि – पृष्ठ ४६८
२. अनुराग बांसुरी – – पृष्ठ २५
३. जायसी के परवर्ती सूफी कवि – पृष्ठ ४६१

था। उसका बलात विवाह रूम देश के सुलतान की पुत्री गुलबोम से भी हो गया था। बाद म नूरजहाँ भी प्राप्त हो जाती है। दोनो पत्नियाँ प्रेम से रहने लगी। इसमे नामकरण सभी अभारतीय हैं। कथा मे कुतूहल और चमत्कार की प्रधानता है। कथा मे काल्पनिकता और वणन प्रधानता है।

कामरूप की कथा–किसी अज्ञात कवि की रचना है। इसमे अवधपुर के राजा राजपति के पुत्र कामरूप और सरनदीप के कामराज की पुत्री कामकला के प्रेम का वर्णन है। नायक नायिका दोना एक दूसरे को स्वप्न म देखकर मोहित हो जाते हैं। कामकला विरहनी हो जाती है और कामरूप भी उसको प्राप्त करने का प्रयास करने लगा। अन्त म दोना का विवाह हो जाता है और नायक अपनी पत्नी के

साथ स्वदेश लौट आता है।

प्रेम का उदय स्वप्न दर्शन से और पुष्ट चित्र दर्शन से होता है। रचना सूफी मसनवी काव्य परम्परा के अनुसार ही हुई है। कथानक काल्पनिक है और अलौकिक तत्वों से पूर्ण है। चमत्कार और कौतूहल पूर्ण वर्णनो की प्रधानता है।

कथा कुँवरावत–इसके रचयिता अली मुराद हैं। इसम अमर नगर के राजा इन्दु की सुन्दरी पुत्री फूलमती और एक कुँवर की प्रेम कथा का वर्णन किया है। इसम कुँवर की मृत्यु के बाद फूलमती सती हो गई है। इसमे सूफी सिद्धान्तों एव प्रेम पन्थ का विशेष ध्यान रखा गया है। इसम कुँवर लक्ष्य वेध मे ही कुमारी को प्राप्त कर सका था। काव्य का आरम्भ सूफी मसनवी परम्परा से ही हुआ है। इसमे अनेक ऐतिहासिक एव पौराणिक स्थानों एव घटनाओ का उल्लेख किया गया है। अन्त मे हठयोग और प्रेम साधना के समन्वित रूप का चित्रण किया गया है।[1]

1– जायसी के परवर्ती सूफी कवि और काव्य–पृष्ठ २९७

दक्खिनी हिन्दी के प्रेमाख्यान और उनके रचनाकार

दक्खिनी हिन्दी में प्रेमाख्यानों का आरम्भ अपेक्षाकृत बहुत पहले ही हो गया था। दारुल मुसन्नफीन के प्रख्यात विद्वान स्वर्गीय मौलाना अब्दुस्सलाम नदवी ने मोहम्मद कुली कुतुबशाह की एक प्रथम मसनवी का उल्लेख किया है जो सन् १६०९ ई० में लिखी गई थी किन्तु यह नातिया मसनवी थी।[1] इसके बाद दक्खिनी में अरबी, फारसी, तुर्की की प्रधान मसनवियों के आधार पर स्वतन्त्र रूप से प्रेमाख्यानों की रचना होने लगी। इनका कालक्रमानुसार विवरण इस प्रकार है।

१. 'निज़ामी' और उनका प्रेमाख्यान कदमराव व पदम—

जनाब नसीरुद्दीन हाशमी ने निजामी को दक्खिनी हिन्दी का प्रथम प्रेमाख्यान रचयिता स्वीकार किया है।[2] जिस मसनवी को उन्होंने स्वर्गीय लतीफुद्दीन पुस्तक विक्रेता के यहाँ देखा था। उनके अनुसार इसकी एक हस्तलिखित पोथी अञ्जुमन तरक्की उर्दू पाकिस्तान में विद्यमान है। इसी के कुछ पृष्ठों के चित्र अञ्जुमन की पत्रिका में भी प्रकाशित हुए थे। इस मसनवी के पढ़ने का अवसर उनको नहीं प्राप्त हुआ था। भारत में उसकी पोथियों का कहीं उल्लेख नहीं मिलता है और न किसी अन्य लेखक ने इसका उल्लेख ही किया है।

अन्य प्राचीन कवियों की भाँति 'निजामी' का जीवन भी अन्धकाराछन्न है और प्राप्त परिचय ग्रन्थों में उनके सम्बन्ध में कम सामग्री मिलती है। यही कारण है कि हाशमी एवं प० परशुराम चतुर्वेदी आदि विद्वानों ने उनके समय, आश्रयदाता रचना आदि के सम्बन्ध में मतभेद पाया जाता है। हाशमी साहब ने उनको सुलतान अहमदशाह सालिस बहमनी (१४५२-१४६२ ई०) के समय का कवि स्वीकारा

१. दकन में उर्दू—पृष्ठ ७०
२. उर्दू शहपारे भाग १—पृष्ठ ६८

है।[1] इसके लिए इन्होंने उनकी कुछ पंक्तियाँ भी उद्धृत की हैं। इस मान्यता पर चतुर्वेदी जी को आपत्ति है।[2] इसी प्रकार उनके रचनाकाल के सम्बन्ध में भी उनका मतभेद है।[3] डा० गोपी चन्द नारंग एक पद मसनवी से उद्धृत करके उसे अलाउद्दीन के अनाकाव्य के बाद लिखी मानी है।

प्रेमाख्यान 'कदमराव व पदम' प्रथम होते हुए भी हम इसके सम्बन्ध में निश्चित रूप से कुछ नहीं कह सकते हैं। इस सम्बन्ध में पं० परशुराम चतुर्वेदी जी का मत है "इसे हम एक शुद्ध प्रेमगाथा कह सकते हैं अथवा कोई उपमिति कथा व कथा रूपक ठहरा सकते हैं। इसके निर्णय की भी पूरी सामग्री उपलब्ध नहीं है।[4] इसका प्रधान कारण यही है कि इसको विधिवत पढ़ने का अवसर नहीं मिल पाया है। अतः इसकी कथा, नायक-नायिका, निवास स्थान आदि के सम्बन्ध में कुछ नहीं कहा जा सकता है। हाशमी साहब ने इसकी भाषा को कठिन घोषित किया है जो सरलता पूर्वक समझ में नहीं आती। अरबी, फारसी के शब्दों की अपेक्षा इसमें हिन्दी शब्दों की बहुतायत है।[5] ऐसी स्थिति में इसके सम्बन्ध में विशेष रूप से कुछ नहीं कहा जा सकता है।

२. मुल्ला वजही और उनकी कुतुब-मुश्तरी-

कवि परिचय-मुल्ला वजही दक्खिनी हिन्दी का एक प्रसिद्ध गद्यकार एवं कवि था। सालार जंग म्यूजियम के प्रकाशित कवि के फारसी दीवान में इसका पूरा नाम असदउल्लाह अंकित है।[6] इसके पूर्वज ईरान के खुरासान के रहने वाले थे। किन्तु हमारे कवि का जन्म भारत के दक्खिन में ही हुआ था। इसका उपनाम 'वजही' था। इसका प्रारम्भिक जीवन दयनीय अवस्था में बीता था किन्तु सौभाग्य से इसका सबन्ध गोलकुण्डा के कुतुबशाही राजपरिवार में हो गया। इसने कुतुबशाही परिवार की चार पीढ़ियाँ इब्राहिम कुतुबशाह, सुल्तान मोहम्मद कुली कुतुबशाह, मोहम्मद कुतुबशाह और सुल्तान अब्दुल्लाह के दरबार को देखा था और सभी के राज्याश्रय में रचना भी की थी। इस प्रकार कवि ने दीर्घ कालीन जीवन पाया था। इसकी मृत्यु

१. दक्खिनी हिन्दी काव्य धारा-पृष्ठ १७
२. सबरस भूमिका-पृष्ठ ५
३. हिन्दी साहित्य का वृहत इतिहास भाग ४-पृष्ठ १७०
४. मध्ययुगीन प्रेमाख्यान-पृष्ठ ८३
५. दक्खिनी हिन्दी काव्य धारा-पृष्ठ १३
६. हिन्दी के सूफी प्रेमाख्यान - पृष्ठ ११६

तिथि के सम्बन्ध मे भी कुछ निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता है।

'वजही' दक्खिनी हिन्दी का स्वाभिमानी कवि था। अत. वह अपने राज्य की

प्रशसा मे स्थान स्थान पर गर्वोक्तियाँ व्यक्त करता चलता है वह राष्ट्रप्रेमी कवि है। भारत और विशेषरूप से दक्न के वैभव पर उसको गर्व है। दक्खिन भारत को वह ससार रूपी अ गूठी का न गीना मानता है। आधुनिक तेलगाना प्रजा समिति की भाँति उसे भी तेलगाना पर नाज था। तत्कालीन विविध साहित्यिक, सामाजिक तथा दरबारी परम्पराओ का उल्लख भी किया है।

'वजही' अपने को महान कवि मानता है। वह अपनी रचनाओं तथा उसके कथानक मे नितान्त मौलिक है। इसी कारण वह अन्य समकालीन कवियो का मजाक भी उडाता रहता था। डा० मोहीउद्दीन कादरी 'जोर' के शब्दों मे 'वजही' कई बातो के लिहाज से दक्न का एक वाहिद अदीब है। उनका मौजू खुद उसी की दिमागी पैदावार है। इसको इस बात पर फक्र है।[1] उसकी रची हुई पुस्तकें भी सौभाग्य से आज उपलब्ध हैं और उर्दू–हिन्दी में प्रकाशित हो चुकी हैं। उसकी प्रथम रचना एक प्रेमाख्यान है जो 'कुतुब मुश्तरी' नाम से विख्यात है इसका विस्तृत परिचय आगे दिया जायगा। उसकी दूसरी गद्य रचना 'सबरस' दक्खिनी गद्य की उच्चकोटि की रचना है जो प्रतीकात्मक प्रेमाख्यानक गद्य है। यह प्रथम काव्य रचना के २१ वर्ष बाद लिखा गया था। प्रथम रचना सन् १६१० ई० मे समाप्त हुई थी। इतनी महान एव उत्तम गद्य रचना के बाद उसने बहुत दिनो तक अपनी लेखनी नही उठाई।[2] राहुल जी की इस मान्यता पर डा० श्रीराम शर्मा जी को सदेह है क्योंकि ऐसा प्रतिभा सम्पन्न कवि सर्वथा मौन नहीं रह सकता था और न २६ वर्ष के दीर्घ काल मे उसने एकमात्र 'सबरस' की ही रचना १६३६ ई. मे की होगी। इस अवधि की किसी अन्य रचना का उल्लेख कही नही मिलता है।[3] प. परशुराम चतुर्वेदी भी इस कथन से सहमत हैं।

कुतुब मुश्तरी—यह दक्खिनी हिन्दी का प्रथम विख्यात प्राप्त प्रेमाख्यानक काव्य है। इसके द्वारा दक्खिनी हिन्दी मे नवीन प्रणाली के प्रेमाख्यानों का सूत्रपात हुआ था। इसी काव्य से भारतीय प्रेम गाथाओ का व्यापक प्रभाव मुसलमानों की रचनाओं पर पडने लगा था। इसकी रचना तिथि के सम्बन्ध में मतभेद पाया जाता है। डा० श्याम मनोहर पाण्डेय ने इसकी रचना १६१० ई० मे निर्धारित की है। राहुलजी ने इसकी रचना १६०९ ई. लिखा है। प. परशुराम चतुर्वेदी जी भी राहुल

१. कुतुब मुश्तरी भूमिका – पृष्ठ ५
२. कुतुब मुश्तरी – पृष्ठ १६५
३. हिन्दी के सूफी प्रेमाख्यान – पृष्ठ ११६

का ही समर्थन करते हैं।[1] कुतुब मुश्तरी की प्रकाशित प्रति की भूमिका में विमला वाघ्रे ने कवि की पंक्तियों के द्वारा उसकी रचना तिथि १०१८ लिखते हुए भी उसको १६६१ ई० निर्धारित की है[2] जो अशुद्ध है। पता नहीं तिथियों का परिवर्तन किस प्रकार से किया गया है। स्वयं वजही ने काव्य के अन्त में उसके महत्व उद्देश्य, समाप्ति के सम्बन्ध में स्पष्ट रूप से व्यक्त किया है।[3]

कुतुब मुश्तरी मैं जो बोल्या किताब-सो हुई जग मे रोशन क ज्यूँ आफताब
अव्वल होर आखिर के कामी पठान-दुनियाँ मे रख्या हूँ अपना निशान
निशानी रखे बाज चारा नहीं-के दायम कोई रहन हारा नहीं

× × ×

कें पड कर इसे मुंज करे याद सब-सदा बाल मुंज त अदे शाद सब

× × ×

तमाम इस किया दीस बारा मन-मन यक हजार होर अठारा मन

इसकी कई हस्तलिखित पोथियाँ भी प्राप्त होती हैं। यह पुस्तक अजुमन तरक्की उर्दू की ओर से फारसी लिपि में तथा दक्खिनी प्रकाशन समिति हैदराबाद से देवनागरी लिपि में प्रकाशित हो चुकी है। इसकी कथा को ऐतिहासिक कहा जा सकता है किन्तु इसकी कुछ घटनायें तथा नाम इतिहास से मेल नहीं खाते हैं। केवल इसका कथा नायक ही ऐतिहासिक व्यक्ति है, अन्य पात्र काल्पनिक हैं। नायिका मुश्तरी, सुल्तान की बगाल यात्रा आदि प्रामाणिक नहीं है। मुहम्मद कुली का प्रेम दरबार की एक नर्तकी भागमती से अवश्य सिद्ध है। सम्भव है इसी आधार पर कथा का गठन किया गया हो। यह एक शुद्ध प्रेमाख्यान है। इसको सूफी प्रेमाख्यानक काव्य नहीं कहा जा सकता है क्योंकि इसमें ऐसे स्थल प्राप्त नहीं होते हैं जिनसे सूफी सिद्धान्त की व्याख्या की गई हो।[4] इसकी कथा का संक्षिप्त रूपान्तर निम्नलिखित है—

कथा का आरम्भ फारसी मसनवी पद्धति के अनुसार विभिन्न प्रशंसाओं से हुआ है। इसके शीर्षक भी फारसी में दिए गए हैं। आत्म प्रशंसा आश्रय दाता के गुणगान के बाद कथा का प्रारम्भ शाहजादा मोहम्मद कुली के जन्म, बाल्यावस्था, सुन्दरता और आकर्षक व्यक्तित्व के वर्णन से किया गया है। शाहजादा अपरूप

---

१. दकन में उर्दू — पृष्ठ ९८
२. कुतुब मुश्तरी भूमिका — पृष्ठ १
३. वही — पृष्ठ २
४. वही — पृष्ठ ६

दयालु एव सरल हृदय का व्यक्ति था। वह कला प्रेमी था। एक दिन वह दरबार में नृत्य संगीत आदि का आयोजन करता है और रात में अधिक समय तक उसी राग रंग में जागता रहता है। रात्रि को स्वप्न में उसने एक सुन्दरी को देखा और उसकी रूप सुषमा में आबद्ध हो गया। प्रातःकाल उसके पिता को उसकी इस व्याकुलता का पता लगा वह इस पर बहुत चिन्तित हुआ। दरबारियों की सलाह पर तत्कालीन प्रसिद्ध चित्रकार अतारिद बुलाया गया और उनकी सहायता माँगी गई। शाहजादा द्वारा उस स्वप्न सुन्दरी का वर्णन सुनकर उसी के अनुसार उसने बंगाल की शाहजादी मुश्तरी का आबदर चित्र दिखाया। शाहजादा उसे पहचान कर सन्तुष्ट हो गया माता पिता के विरोध करने पर भी वह चित्रकार के साथ उसे प्राप्त करने के लिए बंगाल की ओर चल पड़ा। अनेक कठिनाइयों के बाद मार्ग में उसकी भेंट एक अन्य देश के शाहजादा मिर्रीख खाँ से हो गई जो एक जिन के कैद में था वह शाहजादे भी मुश्तरी की छोटी बहन जोहरा का आश्रित था। हमारे नायक ने उस जिन को मार कर उसको मुक्त किया और दोनों प्रेमी अपने मार्ग पर चल पड़े कुछ दूर जाने पर वह एक अन्य शाहजादी के मेहमान बनकर वहीं रुक जाते हैं। चित्रकार अकेले ही बंगाल आता है।

बंगाल की परम सुन्दरी मुश्तरी का चित्रकारी से अत्यधिक प्रेम था। प्रसिद्ध चित्रकार को प्राप्त करके उसने अपने महल की सजावट का आदेश दिया। चित्रकार ने विविध चित्रों के मध्य शाहजादा का भी एक सुन्दर चित्र लगा दिया। उसको देखकर मुश्तरी मोहित हो गई और चित्रकार से उसका परिचय प्राप्त करके उसके लिए बेचैन हो जाती है। मुश्तरी के प्रेम और उसकी व्याकुलता का समाचार जब शाहजादा को मिलता है तब वह भी शीघ्र ही बंगाल चला जाता है। वहाँ दोनों का मिलन होता है। मुश्तरी की सहायता से वह अपने मित्र को मिर्रीख खाँ को भी उसकी प्रेमिका से सदैव के लिए मिला देता है। दोनों का विवाह करा करके बंगाल का शासन उसे सौंपकर और मुश्तरी को साथ लेकर शाहजादा गोलकुण्डा लौट आता है। वहाँ उसका राज्याभिषेक होता है और दोनों सुखी जीवन व्यतीत करते हैं। इस प्रकार पूरी रचना में शुद्ध प्रेम का ही वर्णन किया गया है। यह अपने में उच्चकोटि की मौलिक रचना है।

३– गव्वासी और उसके प्रेमाख्यान–

कवि-परिचय– गव्वासी 'वजही' का समकालीन कवि था। उसके संबंध में भी 'वजही' ने स्थान स्थान पर अपने विचार व्यक्त किया है। दक्खिनी हिन्दी के प्रसिद्ध कवियों में इसका भी प्रमुख स्थान है। इसकी प्रसिद्ध रचनाओं का उल्लेख विभिन्न

परिचय ग्रन्थो मे प्राप्त होता है । यह दक्खिनी का सर्वाधिक अज्ञात कवि था । उसके जीवन के सम्बन्ध मे बहुत कम सामग्री प्राप्त होती है । यह भी गोलकुंडा का कवि था और 'वजही' से आयु मे छोटा था । सुल्तान इब्राहीम कुतुबशाह के समय मे जन्मा था और मोहम्मद कुली कुतुबशाह के समय कविता आरम्भ की थी । उसको शाही दरबार मे स्थान प्राप्त नही हुआ था ।[1] सुल्तान अब्दुल्लाह के समय उसका प्रवेश दरबार मे हो चुका था ।[2] सुल्तान अब्दुल्लाह कुतुबशाह का शासनकाल (१६२६–६२ ई०) उसके जीवन का स्वर्ण युग था । तूतीनामा लिखने के बाद उसे राज्य कवि होने का गौरव प्राप्त हो गया था ।

'गव्वासी' एक प्रतिभावान कवि था । उसकी प्रतिभा से वजही' भी प्रभावित था । उस समय उसे विशेष सम्मान प्राप्त नही था । क्योंकि तत्कालीन सुल्तान विशेष कला एवं काव्य प्रेमी नही था । सैफुल मुलूक व बदीउलजमाल लिखने के बाद भी उसे सम्मान नही मिल सका था । इस काव्य में उसने सुल्तान अब्दुल्लाह की बडी प्रशंसा की थी । इसी से प्रसन्न होकर उसने उसे राज कवि बना दिया था । इसके अतिरिक्त बीजापुर के सुल्तान मोहम्मद आदिल शाह के दरबार मे सन् १६२६–५६ ई० तक उसको गोलकुंडा का राजदूत भी नियुक्त कर दिया था । वहां उस कवि और उसकी कविता का विशेष आदर किया गया इस समय तक वह उच्च कोटि का ख्याति प्राप्त कवि हो चुका था और उसको 'मलिकुश्शोअरा' की उपाधि भी मिल चुकी थी । श्री नसीरुद्दीन हाशमी के अनुसार उसकी मृत्यु १६४९ ई० मे हुई थी ।[4] किन्तु राजकिशोर पांडेय तथा अकबरुद्दीन साहब ने कोई निश्चित तिथि न देकर सुल्तान अब्दुल्लाह कुतुबशाह के शासनकाल में ही उसकी मृत्यु निर्धारित की है ।[5]

रचनायें—गव्वासी की विविध रचनायें उपलब्ध है इनमें (१) मैना सतवन्ती (२) सैफुलमुलूक व बदीउलजमाल (३) तूतीनामा मुख्य है । इसके अतिरिक्त हाशमी साहब ने उसके कुल्लियात का भी उल्लेख किया है । जो 'इदारा अदबियात उर्दू' हैदराबाद की ओर से प्रकाशित हो गया है । उसके प्रेमाख्यानों का परिचय एवं उनकी कथा संक्षेप मे निम्नलिखित है—

१– सैफुल मुलूक व बदी उल्जमाल भूमिका – पृष्ठ ६
२– दकन में उर्दू – पृष्ठ ९
३– हिन्दी साहित्य का बृहत इतिहास भाग ४ – पृष्ठ १०४
४– हिन्दी के सूफी प्रेमाख्यान – पृष्ठ १२१
५– हिन्दी सा० का बृहत इति० भाग ४ – पृष्ठ १३३

मैना सतवन्ती— यह गव्वासी का प्रथम शुद्ध प्रेमाख्यानक काव्य है। इसको सूफी प्रेमाख्यानक काव्य नहीं माना जा सकता है। नसीरुद्दीन हाशमी ने इसका नाम 'मैना सतवन्ती' के अलावा चन्दा और लारेक' भी लिखा है। इसकी चार हस्तलिखित पोथियाँ स्टेट सेन्ट्रल लाइब्रेरी हैदराबाद और चार पोथी सालार जंग म्यूजियम मे विद्यमान हैं।[१] प० परशुराम चतुर्वेदी को इसे 'चन्दा और लारेक' कहने मे आपत्ति है। उनके अनुसार इसकी हस्तलिखित पोथियाँ यूरोप तथा भारत के अन्य स्थानों पर प्राप्त होती हैं।[२] अब यह उस्मानियाँ विश्वविद्यालय हैदराबाद से सन् १९६५ ई० मे प्रकाशित हो चुकी है। अत इसके अध्ययन में पर्याप्त सुविधा हो गई है। इसके पूर्व श्री श्रीराम शर्मा जी ने अपने संग्रह 'दक्खिनी का गद्य और पद्य' में पृष्ठ २८६ से २८९ तक 'मसनवी गव्वासी दकनी' की कुछ पंक्तियाँ तथा पृष्ठ ३७३ से ३७८ तक एक अज्ञात कवि की 'किस्सा मैना सतवन्ती' की कतिपय पंक्तियाँ उद्धृत करके भ्रमजाल उत्पन्न कर दिया था किन्तु काव्य के विधिवत प्रकाशन से अधिकांश समस्यायें हल हो गई हैं। और सआदत अली रिजवी ने इस काव्य का कोई उल्लेख नहीं किया है।

इस प्रेमाख्यान के कथानक के आधार के सम्बन्ध मे मतभेद पाया जाता है 'साधन' कवि के 'मैनासत' चतुर्भुज दास की 'मधुमालती' के 'मैनासत प्रसंग मुल्ला दाऊद के चन्दायन' आदि को इसका मूल आधार माना जा सकता है क्योंकि गव्वासी की रचना उक्त काव्यों के पीछे की ही प्रतीत होती है। यह कथा लोक-वार्ताओं तथा साहित्य में पहले से ही प्रचलित थी। इस काव्य का नायक लारेक वही व्यक्ति है जो दाऊद की कहानी 'चन्दायन' दौलत काजी की बंगला प्रेमाख्यान 'सतीमैना' ओ लोर चन्द्रामणी' साधन के 'मैनासत' फारसी कवि हमीदी के 'असमत नामा' की प्रेम कहानी का नायक है। इस कहानी का सारांश निम्नलिखित है—

कथा—किसी नगर का बादशाह बाला कुँवर की सुन्दर पुत्री चन्दा कोठे से एक युवक चरवाहे लारेक को देखकर उस पर आसक्त हो जाती है। उसे अपने पास बुलाकर और अनेक प्रकार से बहला फुसला कर अपने वश मे कर लिया लारेक विवाहित भी था, उसने अनेक प्रकार से अपनी पत्नी मैना की प्रशंसा भी की थी किन्तु 'चन्दा के बहकावे मे आकर उसके साथ चला जाता है। लारेक के भाग जाने पर मैना बहुत व्याकुल हुई और विरह मे दिन बिताने लगी। चन्दा के भाग जाने पर उसका पिता विशेष विचलित नहीं हुआ। उसने लारेक की पत्नी मैना को ओर

१- सैफुल मुलूक व बदीउज्जमाल –पृष्ठ २१९

२- यूरोप मे दकनी मखतूतात – पृष्ठ ३८

अपना आकर्षण प्रकट किया। अन्त मैना को अपनी ओर आकर्षित करने के लिये एक विश्वसनीय दूती को भेजा बुढ़िया दूती मैना की माता का अभिनय करके उसे बहकाना चाहा दूती के व्यवहार और उसकी बातचीत से मैना को वास्तविकता का पता लग गया। उसने कहा कि बादशाह इस प्रकार अपने दूषित व्यवहारों से मेरा सतीत्व भंग नहीं कर सकता है। बादशाह इस दृढ़ता से विशेष प्रभावित हुआ। उसने मैना के सम्मुख आकर उसकी प्रशंसा की और माफी मांगी। लोरेक और चन्दा को बुलाकर उसके पति से उसको मिला दिया। अपनी पुत्री के द्वारा मैना का श्रृंगार कराया। इस प्रकार काव्य का सुखान्त करके भारतीय परम्परा का निर्वाह कर दिया गया है।[1]

सैफुल मुलूक व बदीउलजमाल—यह गव्वासी की दूसरी रचना है। इसकी रचनातिथि स्वयं कवि ने १६२५ ई० लिख दिया है। इसकी रचना अवधि केवल तीस दिन ही बताई गयी है कवि कहता है।[1]

'बरस एक हजार पंज तीस में-किया खत्म यूं नज्म दिन तीस में'

कवि ने इस रचना का उद्देश्य भी व्यक्त कर दिया है। वह कीर्ति स्थापना ही इसका प्रधान उद्देश्य मानता है। कथानक के मूल आधार के सम्बन्ध में मतभेद पाया जाता है। इतना निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि इसका मूल आधार अरबी की 'अलिफ लैला' की विश्वविख्यात कहानियां ही है चाहे वे अरबी से आई हों या फारसी की किसी गद्य रचना से। इसका स्पष्ट निर्देश स्वयं कवि ने भी नहीं किया है। यह अभारतीय पात्रों को लेकर लिखा गया प्रथम प्रेमाख्यानक काव्य है। इसमें भी 'अलिफ लैला' की भांति सम्बन्धित विभिन्न कहानियों के माध्यम से मूल कथानक का विकास दिखाया गया है। श्री नसीरुद्दीन हाशमी जी के अनुसार इसकी विभिन्न पूर्ण तथा अपूर्ण, छोटी तथा बड़ी लगभग पांच हस्तलिखित पोथियां यूरोप के विभिन्न पुस्तकालयों में विद्यमान हैं जिनका परिचय उन्होंने विस्तार से दिया है।[2] भारत में भी हैदराबाद में इसकी हस्तलिखित प्रतियां विद्यमान हैं। इन्हीं के आधार पर राजकिशोर पाण्डेय तथा अकबरुद्दीन के संयुक्त प्रयास से एक दक्खिनी प्रकाशन समिति हैदराबाद के द्वारा यह प्रेमाख्यान १९५५ ई० में प्रकाशित भी हो गया है। इसकी रचना फारसी मसनवी पद्धति के आधार पर हुई है। काव्य का आरम्भ ईश वन्दना तथा अन्य प्रशंसाओं एवं विभिन्न प्रारंभिक परम्परित वर्णन से हुआ है। कथा का सारांश इस प्रकार है —

---

१ सैफुल मुलूक व बदीउज्जमाल-पृष्ठ २१९

१ यूरोप में दक्खनी मखतूतात-पृष्ठ १८

कथा—मिस्र का बादशाह नवाब आसिम सन्तान विहीन होने के कारण दुखी था। ज्योतिषियों की सलाह से यवन देश की शहजादी से विवाह करने पर उसको पुत्र पैदा हुआ जिसका नाम सैफुल मुलुक रखा गया। साथ ही वजीर को भी एक पुत्र पैदा हुआ जिसका नाम सांद रखा गया। दोनों का लालन पालन, शिक्षा दीक्षा साथ साथ ही हुई आगे चलकर दोनो घनिष्ट मित्र हो गए। कुछ दिनो बाद बादशाह ने शाहजादे को हजरत सुलमान से प्राप्त दैवी उपहार प्रदान किया और उसको एक घोड़ा भी दिया। उपहार के वस्त्रों में एक सुन्दरी की तस्वीर देखकर अपनी सुध बुध खो बैठा। शाहजादा की इस बेचैनी को देखकर उस तस्वीर के प्राप्त करने की सारी कहानी बता दी। वह तस्वीर गुलिस्ताने एरम के बादशाह की पुत्री बदीउलजमाल की थी। बादशाह ने उसको प्राप्त करवाने की चेष्टा की थी। किन्तु सफलता नहीं मिली। अतः पिता की आज्ञा से शाहजादा सांद के साथ स्वयं उसकी खोज में चल पड़ा। अनेक कठिनाइयाँ पार करता हुआ चीन पहुँचा वहाँ भी उसका कुछ पता नहीं चला। एक वृद्ध पुरुष की सलाह पर तुर्किस्ते के कुस्तुनतुनिया नगर में जाता है। जाते समय समुद्र में तूफान आता है, दोनों साथी अलग हो जाते हैं। शाहजादा हब्शियों के एक द्वीप में पहुँच जाता है। वहाँ की शहजादी के प्रेम प्रस्ताव को अस्वीकार करने पर बन्दी बना लिया जाता है किन्तु किसी प्रकार बन्दीगृह से भाग जाता है। अनेक द्वीपों में विभिन्न कठिनाइयों का सामना करता हुआ इसफन्द द्वीप में पहुँच जाता है। वहाँ विशाल भवन में सोती हुई राजकुमारी को एक भयानक जिन के चगुल से मुक्त करता है। वह राजकुमारी सिंहल द्वीप की थी और उसने अपनी सारी घटना व्यक्त की। वह शहजादी बदी-उलजमाल को जानती थी क्योंकि वह उसकी सहेली थी। शाहजादा राजकुमारी के साथ वासित नगर पहुँचा जहाँ बदीउलजमाल के चाचा का राज्य था। दोनों सिंहल द्वीप पहुँच जाते हैं। यहीं पर राजकुमारी की सहायता से शाहजादा की भेंट वहाँ आई हुई बदीउलजमाल से होती है। दोनों एक दूसरे के प्रति आकर्षित हो जाते हैं। और परस्पर प्रेम करने लगते हैं। शहजादी ने अपनी दादी हुस्नबानो को एक पत्र शाहजादा के हाथ भेजा। दादी उस शाहजादे के व्यवहार और सौन्दर्य से प्रसन्न हो गई और दोनों के विवाह करने में सहायता का वचन दिया। उसके पुत्र ने आक्रमण करके कलजुम के बादशाह के चगुल से सैफुल मुलूक को मुक्त किया। शाहजादा और बदीउलजमाल का विवाह हो गया। इसी प्रयास के मध्य में शाहजादा को उसका मित्र भी प्राप्त हो गया था। उसका भी विवाह सिंहल की राजकुमारी से कर दिया गया। दोनों कुछ दिन वहाँ रहने के बाद बहुत सा उपहार प्राप्त करके अपने देश अपनी अपनी पत्नियों के साथ लौट आते हैं।

तूतीनामा—यह गव्वासी की तीसरी कृति है। इसकी कथा भी मौलिक नहीं है। यह संस्कृत रचना 'हितोपदेश' के 'शुक सप्तति' के फारसी अनुवाद का दक्खिनी हिन्दीमें अनुवाद है।[1] इसी कहानी को लेकर भिन्न भिन्न शीर्षकों से अन्य कवियों ने भी इस लोकप्रिय कहानी से मिलती जुलती अन्य रचनायें भी की हैं। तथा इसकी रचना १६४० ई० में हुई थी। इसकी रचना से कवि को विशेष ख्याति मिली थी और विभिन्न भाषाओं में इसके अनुवाद हुये हैं।[2] और उसका कथानक भी फारसी मसनवी की परम्परागत शैली में विकसित किया गया है। विभिन्न प्रशंसाओं के बाद कथा आरम्भ होती है। कथा का सारांश इस प्रकार है—

भारत के एक धनी व्यापारी को बहुत दिनों के बाद एक सुन्दर पुत्र पैदा हुआ। वह बहुत योग्य एवं प्रतिभावान भी था। पिता ने उसका विवाह एक सुन्दर युवती से कर दिया। बाद में पुत्र ही उसका सारा कारबार देखने लगा। उसने एक मैना और एक तोता पाल रखा था जो बड़े बुद्धिमान थे और आदमी की भांति बोलते थे। इसके द्वारा उसे समय-समय पर सहायता भी मिला करती थी। एक बार वह व्यापार के सिलसिले में बाहर चला गया। उसकी पत्नी अपने मकान की छत पर बैठी हुई थी। उसने नीचे एक सुन्दर युवक को देखा और उस पर मोहित भी हो गई। दोनों एक दूसरे से प्रेम करने लगे। स्त्री ने अपने प्रेम के औचित्य पर मैना से सलाह माँगी। मैना ने उसका विरोध किया और वह बेचारी मार डाली गई। नारी ने तोता से भी पूछा। वह मैना का परिणाम देख चुका था। अतः उसने बुद्धिमानी से काम लिया और विभिन्न रोचक नैतिक कथाओं के द्वारा ५२ दिनों तक उसको उलझाये रखा। इसके बाद व्यापारी आ गया। तोते से सारा वृत्तान्त जान कर अपनी पत्नी को मार डाला और अपना सारा धन दान देकर स्वयं फकीर हो गया। यह भी कवि का एक ऐसा प्रेमाख्यान है जिसमें प्रेम का स्वरूप भिन्न ढंग से प्रस्तुत किया गया है। यहाँ प्रेम की एक धुँधली झलक भर दे दी गई है। रचना अपने में महत्वपूर्ण है। यह काव्य मजलिश ऊशाऊन दक्ना मखतूत सरया की ओर से तथा मीर सआदत अली रिजवी के सम्पादकत्व में १९३८ ई० में प्रकाशित हो चुकी है।

मुक़ीमी और उनका चन्दर बदन व महियार

कवि परिचय—इनका पूरा नाम मिरजा मोहम्मद मोकीम बसमी था

1. तूतीनामा-भूमिका-पृष्ठ ११, ३१
2. वही—भूमिका-पृष्ठ ३५

और मुकीमी उपनाम था। इनका जन्म सैयद वंश में हुआ था। इसके पिता का नाम मोहम्मद रजा रिजवी था। वे ईरान के निवासी थे किन्तु मुकीमी का जन्म भारत के बीजापुर में १६०१–१६०६ ई० के बीच तथा मृत्यु १६६४–१६६६ ई० के मध्य हुई थी।[1] मुकीमी फारसी का उच्चकोटि का कवि था। तत्कालीन इतिहासकारों तथा विद्वानों ने उनके फारसी कविता की बड़ी प्रशंसा की है। ईरान के असमाबाद में इनका जन्म हुआ था। दक्षिणी ईरान में शिक्षा पाई थी। पिता के साथ अरब आदि पश्चिमी देशों की यात्रा भी की थी। पिता के अन्तकाल करने के बाद वह अनाथ हो गया था। भारत के बीजापुर के सुल्तान की प्रशंसा सुनकर जीविकोपार्जन के लिये भारत आ गया। यहाँ उन दिनों ईरानी लोगों और उनकी फारसी कविता का बहुत मान किया जाता था। और जनता में बड़ा आदर था। यहाँ आने पर उसे हिन्दी के व्यापक प्रचार का पता चला। उसने भी शीघ्र ही हिन्दी सीख लिया और उसमें कविता करने लगा। इस कथन में सन्देह किया जाता है। दकनी भाषा में इतनी दक्षता सीखने से नहीं आती बल्कि उसकी मातृ भाषा रही है। कवि को अपनी युवावस्था में ही काव्य क्षेत्र में पर्याप्त ख्याति मिली थी। इब्राहीम आदिल शाह के दरबारी कवियों में उसे भी गौरव पूर्ण स्थान प्राप्त हो गया। फारसी की अपेक्षा हिन्दी कविता में विशेष ख्याति नहीं मिली। आलोचकों ने हिन्दी कविता को विशेष महत्व न देकर उसका उल्लेख भी नहीं किया वह दीर्घ जीवी कवि था। बीजापुर के तीन सुल्तानों के दरबार से सम्बन्ध था। इब्राहीम आदिलशाह और सुल्तान मोहम्मद आदिलशाह के शासनकाल में निजाम शाही और कुतुबशाही के राजदूत का भी काम किया था।[2] और दरबार में सम्मान प्राप्त किया था।

चन्दर बदन व महियार—यह बीजापुर में लिखा गया प्रथम प्रेमाख्यान है।[3] यह कवि की एक मात्र हिन्दी मसनवी है और इसके कथानक को अन्य कवियों ने भी अपनाया है। कुछ लोग इसे औरंगजेब के समय में लिखा गया मानते हैं जिस पर सन्देह किया जाता है। वास्तविक रचना तिथि के बारे में अभी तक कुछ निश्चित नहीं हो सका है। स्वयं कवि ने इसका उल्लेख नहीं किया है अन्तर्साक्ष्य से पता चलता है कि इसकी रचना १६२७ ई० से १६४० ई० के मध्य हुई होगी।[4] किन्तु दक्खिनी हिन्दी काव्य धारा में १६८८ ई० लिखा गया है।

१. चन्दर बदन व महियार भूमिका—पृष्ठ १३
२. " " " भूमिका–पृष्ठ १९
३. हिन्दी साहित्य का बृहत् इतिहास भाग ४–पृष्ठ ३८४
४. यूरोप में दकनी मखतूतात–पृष्ठ २९०

इसकी रचना का मुख्य उद्देश्य सूफीमतवाद का प्रचार करना नहीं था बल्कि इस्लाम का महत्व प्रतिपादित करना था। इस प्रकार इसका महत्व और भी अधिक हो जाता है।[1] प० परशुराम चतुर्वेदी और नसीरुद्दीन हाशमी इसकी रचना १६४० ई० में ही मानते हैं। हाशमी साहब इसको उच्चकोटि की मसनवी नहीं मानते हैं।[2] किन्तु परवर्ती कवियों ने इसकी मसनवी को विशेष पसन्द किया था और जनता में उसका प्रचार हो गया था।[3]

ऐसा कहा जाता है कि मुकीमी ने इसकी रचना 'लैला मजनू' की कहानी सुनकर किया था किन्तु कवि ने यह नहीं निर्दिष्ट किया है कि वह किस कवि की 'लैला मजनू' है। दकनी के विशिष्ट अध्येयता हाशमी साहब का विचार है कि यह 'लैला मजनू' 'गव्वासी' का हो सकता है किन्तु किसी अन्य लेखक ने इसका उल्लेख नहीं किया है और न गव्वासी के द्वारा लिखी 'लैला मजनू' का पता ही चलता है। स्वयं कवि ने भी अपनी इस रचना का उल्लेख कहीं नहीं किया है। उसने किसी अन्य मसनवी लिखने का संकेत अवश्य किया है।[4]

किस्सा मुज परत कहा एक उन-जो बस दीं ता लैला मजनू यों न सुन

× × ×

किस्सा एक कहूँ मैं घर बार को-सुन चन्दर बदन महियार को।

उसने लैला मजनू की कहानी को सुनकर इसलिए इस काव्य को लिखा था कि लोग लैला मजनू की कहानी भूल जायं। साहित्य की दृष्टि से इसका विशेष महत्व नहीं है।[5] सबसे पहले मुकीमी ने ही इस कहानी को दकनी में लिखा था। इसके अतिरिक्त अन्य कवियों ने भी अपनाया है। और अपने काव्यों में मुकीमी का उल्लेख किया है। यह सम्पूर्ण भारत की लोक प्रिय प्रेम कहानी हो गई थी।

श्री नसीरुद्दीन के अनुसार इसकी एक हस्तलिखित पोथी इण्डिया आफिस के पुस्तकालय में और एक एडिनबरा विश्व विद्यालय के पुस्तकालय में है।[5] उनके अनुसार स्टुअर्ट और स्प्रेंगर आदि के कैटलाग में इसका रचनाकार मुकीमी ही अंकित है किन्तु विलियम हार्ट ने इसका सम्बन्ध अजीज कवि से माना है और उसकी कुछ पंक्तियाँ भी उद्धृत की हैं। यह बात सत्य नहीं है। इसका रचनाकार

१. हिन्दी साहित्य का वृहत इतिहास भाग ४-पृष्ठ ३८३
२. दकन में उर्दू-पृष्ठ १९५
३. हिन्दी सूफी काव्य में हिन्दू संस्कृति का चित्रण और निरूपण (शोध प्रबन्ध) डा० कन्हैया सिंह—पृष्ठ ११२
४. चन्दर बदन व महियार-पृष्ठ ८२
५. यूरोप में दकनी मख्तूतात-पृष्ठ २०९

मुहीमी ही है। यह दकनी बोर्ड की ओर से प्रकाशित भी हो चुकी है। मोहम्मद अकबरुद्दीन, डा० नजीर अहमद आदि विद्वानों ने इस पर विस्तार से विचार किया है। मसनवी में परम्परागत ईश वन्दना, तथा अन्य प्रशंसाओं के बाद वास्तविक कथा का आरम्भ होता है।

कथा—सुन्दर पटन का राजा बडी ही शान शौकत वाला था। उसकी पुत्री राजकुमारी चन्दर बदन बडी ही सुन्दर थी। वहाँ साल में एक प्रसिद्ध मेला लगा करता था। उसमें दूर-दूर के लाखों आदमी और व्यापारी विभिन्न प्रकार की सुन्दर तथा उपयोगी वस्तुयें लेकर आया करते थे।

किसी अन्य नगर में एक बड़ा मुसलमान व्यापारी था उसका पुत्र महियार बड़ा योग्य एवं आकर्षक व्यक्तित्व का सुन्दर युवक था वह व्यापार के लिये सुन्दर पटन आया हुआ था। महियार राजकुमारी की सुषमा की एक झलक पाकर मतवाला हो गया। राजकुमारी से विशेष सम्पर्क न स्थापित होने पर वह बिल्कुल पागल हो गया और भटकते हुये वन में चला गया।

अजुम नगर का बादशाह वन में शिकार करने निकला था वहाँ उसकी भेंट महियार से हो गई। उसकी दयनीय दशा देखकर वह बहुत प्रभावित हुआ। प्रेमिका की खोज में दोनों चल पड़े। रोम' शाम, अरब, बुखारा, बलख, मुल्तान, लाहौर, दिल्ली, बीजापुर, अहमदनगर, बुरहानपुर, गोलकुण्डा आदि होते हुए वास्तविक गन्तव्य पर पहुँच गए। इस पर प्रेमी को कुछ सन्ताप हुआ। सालाना मेला फिर आ गया। इस मेले में चन्दर बदन से उसकी मुलाकात हुई। वह भी उसके प्रेम से आसक्त हो चुकी थी। उसने महियार के साथ प्रेम एवं सहानुभूति पूर्ण व्यवहार किया। अजुम नगर के बादशाह ने एक दूत के द्वारा विवाह का सन्देश भेजा। राजा ने अस्वीकार कर दिया क्योंकि एक हिन्दू होने के नाते उसने अपनी हीनता प्रकट की[१] और उस समय के सामाजिक बन्धन भी कठोर थे। व्यापारियों ने उसे लौट चलने की राय दी। इसी बीच मेले का समय फिर आ गया। राजकुमारी महल से बाहर आई। महियार से उसकी भेंट हुई और उसने अपनी प्रेमिका चन्दर बदन के चरणों पर सिर रखकर प्राण त्याग दिया।

महियार का जनाजा दफन के लिए चल पड़ा किन्तु जब राजा के महल के सामने पहुँचा तब वहाँ से आगे नहीं बढ सका। प्रयत्न करने पर भी वह वहाँ से हिल नहीं सका। लाचार होकर राजा को खबर दी गई। और दासी के द्वारा गुप्त रूप से सन्देश भेजकर चन्दर बदन से सहायता माँगी गई। उसने पिता से

१– चन्दर बदन महियार भूमिका–पृष्ठ ५६

आज्ञा ली जिससे किसी उपाय से जनाजा चला दे। पिता की आज्ञा से राजकुमारी ने बादशाह को कहला भेजा कि किसी आलिम को भेज दो। आलिम भेजा गया उसने तौबा किया। उत्साहपूर्वक महल से चल पड़ी और राजा को अंतिम सलाम भेजा। वह महियार के जनाजे के बगल में लेट गई और ईश्वर से प्राण त्यागने की दोआ माँगी। तब जनाजा चल पड़ा। राजकुमारी के आगमन और प्राण त्यागने की सूचना उसके माता पिता को मिली वे रोते पीटते वहाँ आ गये। दफन करते समय जब जनाजा खोला गया तब दोनों सटे हुये थे और राजकुमारी मर चुकी थी। चेष्टा करने पर भी दोनों के मृत शरीर अलग नहीं किये जा सके। लाचार होकर दोनों को एक ही कब्र में दफना दिया गया। इस प्रकार देखा कि भिन्न धर्म के नायक नायिका को लेकर काव्य रचने का यह प्रथम प्रयास था। इसमें इस्लाम के व्यापक प्रचार और उसकी उदारता का दिग्दर्शन कराना ही कवि का प्रमुख उद्देश्य साबित होता है।

इब्न निशाती और उनका 'फूलबन'—

कवि परिचय—यह दक्खिनी हिन्दी का प्रसिद्ध कवि था। सुल्तान अब्दुल्लाह कुतुबशाह का दरबारी अधिकारी और कवि था। वह अपने जीवन तथा उपलब्धियों से सतुष्ट था। उसने किसी का व्यंग्य नहीं किया है। बल्कि पूर्व कालीन कवियों की प्रशंसा ही की है। उसका विश्वास था कि पूर्ववर्ती कवियों को मसनवी के द्वारा ही ख्याति मिली है। इसी उद्देश्य से उसने मसनवी की रचना की और गजल अथवा अन्य कविता लिखने की ओर उसकी रुचि नहीं थी। उसकी कुछ गद्य रचनाओं का संकेत मिलता है किन्तु वह अभी तक उपलब्ध नहीं हो सकी है। वह अपने समकालीन कवियों के द्वारा प्रशंसा प्राप्ति का इच्छुक नहीं था। इसके जीवन के सम्बन्ध में यूरोपीय विद्वानों ने कुछ भी नहीं कहा है। भारतीय विद्वानों में मतभेद पाया जाता है। अत: उसका जीवन आज भी अन्धकाराछन्न है। नवीन खोजों के आधार पर उसका नाम शेख मोहम्मद मजहरुद्दीन, पिता का नाम शेख फखरुद्दीन था।[1] एक मात्र मसनवी "फूलबन" से उसको पर्याप्त ख्याति प्राप्त हुई है। गार्सा द तासी ने उसकी एक अन्य मसनवी 'तूतीनामा' का भी उल्लेख किया है किन्तु उसकी यह रचना अभी तक प्राप्त नहीं हो सकी है और न किसी अन्य विद्वान ने इसका हो समर्थन ही किया है। मसनवी के अतिरिक्त वह गजल भी अच्छी लिखता था किन्तु उस समय इस विधा को विशेष महत्व प्राप्त नहीं था। अत: निशाती ने इसकी कोई महत्वपूर्ण रचना की ओर ध्यान नहीं दिया किन्तु जो कुछ लिखा है वह

१- दकन में उर्दू-पृष्ठ ३१०

उच्च कोटि की है।[1]

फूलबन—यह निशाती की एक मात्र काव्य कृति है जो कवि की कीर्ति का अमिट स्मारक है। इसके पहले उसने काव्य रचना नहीं की थी ऐसा कवि ने भी कहा है यह सब युवावस्था की रचना है।[2] नसीरुद्दीन हाशमी साहब ने इसकी तीन हस्तलिखित पोथियों के यूरोप में होने की सूचना दी है और उनका विस्तृत विवरण भी दिया है।[3] इसके अतिरिक्त उन्होंने आसफिया पुस्तकालय, अंजुमन तरक्की उर्दू और आगा हैदर हसन साहब के यहाँ भी इसकी हस्तलिखित पोथियों का उल्लेख किया है।[4] अब यह काव्य मजलिस उर्दू मखतूतात हैदराबाद से उर्दू में प्रकाशित हो गया है।

इसकी रचना तिथि के सम्बन्ध में विद्वानों में मतभेद पाया जाता है नसीरुद्दीन हाशमी के अनुसार इसकी रचना १६५५ ई० में हुई है।[5] हकीम शमसुल्लाह कादरी ने भी इसका समर्थन किया है। यूरोप में प्राप्त हस्तलिखित पोथियाँ भी इसी का समर्थन करती है। कवि ने काव्य में इसकी रचना तिथि १६५५ ई० व्यक्त की है।[6]

"कया तारीख लाया तो यो गुलजार–इग्यारह सौ कु कम थे बीस पर चार"

किन्तु डा० जोर ने उर्दू शह्पारे के भाग १ के १०८ पृष्ठ पर और अब्दुल कादिर सरवरी ने अपनी भूमिका में इस शेर के अंतिम पंक्ति में बीस के स्थान पर 'तीस' ही लिखा है।[7] इस दृष्टि से उसकी रचना १६६१ ई० में सिद्ध होती है। इसमें कुल शेरों की संख्या १९७७ है किन्तु कवि ने उसकी संख्या १७४४ बताई है।

गुफ्त में आये सो एक बार बेंतां–सना सो पो दो बीस चार बेंतां

इसकी रचना फारसी काव्य 'बसातीन' के आधार पर हुई है। स्वयं कवि ने भी इसका समर्थन किया है।[8]

बसातीन जो हकायत फारसी है–मोहब्बत देखन की आरसी है

---

१. यूरोप में दकनी मखतूतात–पृष्ठ ८०
२. दकन में उर्दू–पृष्ठ १३१
३. वही–पृष्ठ १३०,
४. फूलबन–पृष्ठ २३ शेर २६०
५. फूलबन–इब्नेनिशाती–शेर संख्या २३९, २४२–पृष्ठ २२
६. फूलबन ,, भूमिका–पृष्ठ ४५, ४६
७. फूलबन ,, भूमिका–पृष्ठ ६०
८. फुलबन भूमिका–पृष्ठ ११२

"इमे हर किसके तीं समजा कोतूवाल-दक्कन की बात मूं सजयां को किसोल" दक्खिनी हिन्दी के विकास मे इसका विशेष हाथ है। तत्कालीन उच्चकोटि की कविता में इसका महत्वपूर्ण स्थान है।[1] इसकी कथा का साराश निम्नलिखित है –

कथा—बचन पटन का बादशाह एक दिन एक दुर्वेश को स्वप्न मे देखता है। उसके महान व्यक्तित्व से प्रभावित होकर वह उनका भक्त बन जाता है इसके पश्चात वह उनकी खोज करता है। बड़े परिश्रम के बाद ही वह उनका साक्षात दर्शन कर पाता है। वह बादशाह को अनेक रोचक कहानियां सुनाता है। उनमे से एक कहानी कवि को विशेष पसन्द आ जाती है। उसी कहानी को इस काव्य का आधार बनाया गया है।

काश्मीर के बादशाह की पुण्य स्मृति मे एक फूल के विशेष वृक्ष पर एक बुलबुल प्रतिदिन बैठा करता था और उसका रस चूसा करता था। इस कारण पौधा नित्य मुरझाया रहता था और उसका विकास नही होता था। बादशाह पौधे की दुर्दशा देखकर उस बुलबुल को पकड़वा लेता है। बुलबुल अपनी आप बीती बादशाह को सुनाने लगता है। वह खुतन के व्यापारी का पुत्र है और वह एक दिन किसी भक्त की पुत्री पर मोहित हो गया था। जब उसके पिता को इस रहस्य का पता चला तब उसने दोनों को शाप दे दिया। उसी शाप के कारण उसकी पुत्री फूल बन गई और इस बाग मे खिली है। वह स्वयं बुलबुल बन गया है और उससे मिलने नित्य आया करता है। बादशाह ने एक विशेष अंगूठी को स्पर्श करा दिया और आयतल कुर्सी की दोआ पढ़ दी। अल्लाह की दया से दोनों अपने पूर्व रूप मे पुन. आ जाते हैं। उसी दिन से दोनों बादशाह के दरबार के सदस्य हो जाते हैं और बादशाह को रोचक कहानियां सुनाया करते हैं। इस कहानी शृंखला की अन्तिम कहानी मिस्र के शाहजादा हुमायूं और आजम की शाहजादी रमनवर के प्रेम और विवाह से सम्बन्धित है।

डा० जोर ने इस कहानी का वास्तविक भाव इस प्रकार व्यक्त किया है।[2] जिस देश मे परदे की प्रथा हो वहां किसी सुन्दरी की प्रशंसा सुनकर किसी नवयुवक लड़के के हृदय मे परोक्ष प्रेम उत्पन्न हो जाना आश्चर्य की बात नही है। इसी सदर्भ में इस नौजवान लड़के की कहानी लिखी गई है। लड़का पहले एक लड़की पर मुग्ध होता है और फिर उसको विविध प्रयासों से प्राप्त करना चाहता है क्योंकि परिश्रमी की चेष्टा व्यर्थ नही जाया करती है। कभी न कभी वह उसको प्राप्त कर ही लेता

---

१. फूलबन, शेर १६७१ –पृष्ठ १७४
२. दकन मे उर्दू–पृष्ठ २३४

है। कीर्ति स्थापना ही इसकी रचना का मुख्य उद्देश्य था।[1]

नुसरती और गुलशनेइश्क–

कवि परिचय–यह दक्खिनी का महान कवि था। इनको कर्नाटक का भी कवि कहा जाता है। इसका पूरा नाम मुल्ला नुसरती था। नसीरुद्दीन हाशमी साहब ने इसका नाम मोहम्मद नुसरत लिखा है।[2] इसने अपने जीवन में अनेक उथल पुथल को देखा था। यह बीजापुर के आदिलशाही दरबार का राजकवि था। औरंगजेब ने जब बीजापुर पर विजय प्राप्त किया था तब इस भयंकर युद्ध को इसने भी देखा था। इसका पारिवारिक व्यवसाय सैनिक था। उसके पिता स्वयं एक सिपाही थे। नसीरुद्दीन हाशमी साहब ने ब्रिटिश म्यूजियम में विद्यमान इसकी हस्त-लिखित पोथी पर विलियम हार्ट की सूची तथा गार्सी द तासी आदि विद्वानों के माध्यम से इसको ब्राह्मण जाति का सूचित किया है।[3] इसका कोई पुष्ट प्रमाण नहीं मिलता है। इसके परिवार के लोग कई पीढ़ियों से मुसलमान थे और ख्वाजा बन्दा नेवाज के मुरीद थे। अपने परिवार के सम्बन्ध में स्वयं कवि ने रचनाओं में सूचना दे दी है।

नुसरती अली आदिलशाह द्वितीय का परम हितैषी एवं अन्तरंग मित्र था। इनके दरबार में कवि के रूप में राज्याश्रय भी प्राप्त था। कवि ने इनको अपना गुरु भी माना है। यद्यपि दोनों समवयस्क थे राजनीतिक उलझनों के कारण सुल्तान कवि की विशेष आर्थिक सहायता नहीं कर पा रहा था। अपनी दयनीय आर्थिक स्थिति की सूचना स्वयं कवि ने भी दी है।[4]

नुसरती उच्चकोटि का कवि था। वीर, शृंगार रसों में कविताएँ लिखी हैं। उसकी तीन रचनायें प्राप्त होती हैं। (१) गुलशनें इश्क (२) अली नामा (३) कसीदे। 'गुलदस्ता इश्क' नाम से भी कुछ लोगों ने इनकी किसी अन्य रचना का अनुमान किया है। 'तारीख सिकन्दरी' में अब्दुल्हक साहब ने इस पर विचार किया है।[5]

गुलशने इश्क-यह नुसरती का प्रसिद्ध प्रेमाख्यानक काव्य है। इसकी रचना का मूल कारण मित्रों का आग्रह बताया गया है। मनोहर मधुमालती की प्रेम

१. यूरुप में दकनी मख्तूतात पृष्ठ २५७, २५८
२. फूलबन-इब्न निशाती भूमिका-पृष्ठ ३७
३. दक्खिनी हिन्दी काव्य धारा पृष्ठ २६२
४. दकन में उर्दू-पृष्ठ २२५
५. दक्खिनी हिन्दी काव्य धारा-पृष्ठ २६४

कथा पर कई रचनायें प्राप्त होती हैं। आकिल खाँ की फारसी रचना 'मेहरोमाह', मीर असकरी रजा की फारसी रचना 'मेहरोमाह', मझन की 'मधुमालती' शाहजहाँ कालीन किसी कवि की कुँवर मनोहर व मदुमालत' मोधा दास गुजराती का अनुवाद लिखे जा चुके थे। और नुसरती ने इनके अतिरिक्त कुतबन की मृगावती, मधुमालती, पदमावत आदि की रचना पद्धति का देखा भी होगा। नुसरती ने मझन की मधुमालती का उल्लेख किया है।[1]

नुसरती ने अपनी आदर्श मसनवी का उल्लेख नही किया है। किन्तु अपने पूर्व फारसी और हिन्दी मसनवियो का सकेत किया है। अत उसने मित्रो के आग्रह पर इस मसनवी का अनुवाद दक्नी भाषा म किया था। वह फारसी का अच्छा जानकार था और उस समय मझन की अवधी मधुमालती का विशेष प्रचार नही हो सका था। अत फारसी को ही मुख्य आधार बनाया होगा। साथ ही मधुमालती को भी देख लिया था। इसकी रचना सन् १६५७ ई० में हुई थी।

कथा—इसका कथानक भी 'मधुमालती' का ही कथानक है। क्योकि कवि ने इसी कथानक को दक्नी कविता मे पद्यबद्ध किया है। अत इसका कथानक देना विशेष उपयोगी नहीं होगा।

तबई और बहराम गुल अन्दाम—

कवि परिचय—यह गोलकुण्डा के सुल्तान अब्दुल्लाह कुतुबशाह के अतिम सुल्तान अब्दुल हसन कुतुबशाह के राज दरबार मे कवि के रूप मे सम्मान प्राप्त था। यह सुल्तान तानाशाह के उपनाम से भी विख्यात है। औरगजेब के पुत्र शाहजादा आजम ने दीर्घकालीन युद्ध के पश्चात इसको बन्दी बना लिया था। और १४ वर्ष तक दौलताबाद मे नजर बन्द रखा था। यहाँ १७०० ई० में उसकी मृत्यु हो गई थी। यहीं से सुल्तानो का राजकाल समाप्त हो गया था। इसके बाद के कवि अपने को उर्दू का कवि कहने लगे थे अत राहुलजी तबई को दक्नी का अतिम कवि मानते हैं।[3] इसकी एक मात्र रचना 'बहराम गुल अन्दाम' बताई जाती है। इसमे कुल १३४० शेर हैं और इसको केवल चालीस दिना मे पूरा किया गया था। कवि कहता है —[4]

किया हूँ मैं चालीस दिवस मे किताब – बहुतफिक्र कर रात दिन हिसाब

---

1. दक्खिनी हिन्दी काव्य धारा –पृष्ठ २८९
2. उर्दू शह पारे भाग १–पृष्ठ १११
3. यूरुप मे दक्नी मखतूतात–पृष्ठ ९१
4. दक्खिनी हिन्दी काव्य धारा–पृष्ठ २८९

गिना वैत बैता कु मैं एक जो दिल – हजार और है तीन सौ पर चहल ।

इसकी कहानी किसी फारसी मसनवी से ली गई है। यह बड़ी ही लोक प्रिय कहानी है। इसको कई कवियों ने अपनाया है किन्तु तबई के काव्य म उसके महान व्यक्तित्व की छाप है। इसमें उसने अपनी सूझबूझ से काम लिया है। इसी कारण काव्य सौन्दर्य में अद्वितीय हो गई है।

तबई ने अपन काव्य म अपने को दकनी होने का स्वाभिमान पूर्वक उल्लेख किया है।[1] यह शुद्ध दक्खिनी कवि ही नहीं था बल्कि उच्चकोटि का लेखक भी था। यह मसनवी ही इनका प्रमाण है। उसने अपनी विशेषताओं का वर्णन स्वयं किया है। पूर्व कवियों की प्रशंसा और समकालीन कवियों की आलोचना भी की है।

नसीरुद्दीन हाशमी साहब के अनुसार इसकी एक हस्तलिखित पोथी ब्रिटिश म्यूजियम में है और एक पोथी सालारजंग पुस्तकालय म है। यहाँ इसको किसी फारसी मसनवी का अनुवाद कहा गया है।[3] किन्तु तबई ने इस फारसी काव्य का अन्धानुकरण नहीं किया है।[4]

मसनवी में ईश वन्दना के पश्चात अन्य परम्परित प्रशंसाओं तथा नियमों का पालन करने के पश्चात कथा का आरम्भ किया गया है।

कथा—रूम शहर में एक बादशाह था। बहुत मन्नतों के बाद उसको एक पुत्र पैदा हुआ था। उसका नाम बहराम रखा गया था। उसके जन्म लेने, बड़ा होने, शिक्षा दीक्षा, युवा होने आदि का विस्तार से वर्णन, गुल अन्दाम परी पर मोहित हो जाना, उसका मिलन, राज्य प्राप्ति तथा उसकी विजयों का वर्णन क्रमानुसार तथा मोहक शैली में किया गया है।

गुलाम अली और पदमावत–

कवि परिचय—यह गोलकुंडा के अन्तिम शासक अबुलहसन तानाशाह का समकालीन कवि था। यह दकनी के अन्तिम कवियों में माना जाता है। गजलनुमा कविता करने में उसकी विशेष रुचि थी। इसने जायसी के 'पदमावत' का अनुवाद दकनी भाषा में किया था किन्तु उसने किसी फारसी अनुवाद का ही सहारा लिया था। अन्य दकनी कवियों ने भी पदमावत' का अनुवाद किया था। किन्तु

---

१. दक्खिनी हिन्दी काव्यधारा–पृष्ठ २८५
२. उर्दू शह पारे भाग १–पृष्ठ १११
३. यूरुप में दकनी मखतूतात–पृष्ठ ६१
४. दक्खिनी हिन्दी काव्यधारा–पृष्ठ २८६

गुलाम अली का अनुवाद तो सर्व श्रेष्ठ है। कवि ने स्वयं व्यक्त किया है।[1]

यो किस्सा अथा मौत शीरी सखुन-ह्वस करके लाया हूँ दकिनी वचन

इसकी रचना १८८० ई० म हुई है।[2] कवि ने अपने मूल नाम का ही प्रयोग अपने काव्य म किया है। नसीरुद्दीन हाशमी साहब ने इगलैंड के इडिया आफिस के पुस्तकालय मे इसकी एक हस्तलिखित पोथी का उल्लेख किया है।[3] इस पर इसको चित्तौड के राजा रतनसेन और सिंहल की राजकुमारी पदमावती की प्रेम कहानी कहा गया है। स्टूअर्ट ने अपने कैटलाग में इसका उल्लेख किया है। किन्तु स्प्रैंगर और तासी ने इसका विवरण नहीं दिया है। इसका कथानक भी जायसी के 'पदमावत' की ही भाँति है किन्तु उसकी भाषा दकनी है। कथा पर्याप्त लोकप्रिय है अत उसका उल्लेख अनावश्यक होगा।

मीर सैयद मोहम्मद वाला और तालिब मोहनी-

कवि परिचय:—कवि का परिचय 'तजकिरा शोअरा दकन', 'तजकिरा गुलजार अजम' म प्राप्त होता है।[4] नसीरुद्दीन हाशमी ने उनकी एक हस्तलिखित पोथी इण्डिया आफिस के पुस्तकालय म होने का विवरण दिया है जो कवि के जीवन काल मे ही लिखी गई है। इसके प्रारम्भिक पृष्ठ पर लाल रोशनाई से कवि का नाम सैयद मोहम्मद मुसवी लिखा है। यह नाम किसी अन्य पुस्तक में नहीं प्राप्त होता है। इस पोथी के कैटलाग पर व्यक्त किया गया है "तालिब मोहनी की प्रेम कहानी दकनी कविता मे लिखी गई है। इसके कवि का नाम मीर सैयद मोहम्मद वाला था।" काव्य की प्रस्तावना मे कवि ने व्यक्त किया है कि इसको निशाती के फूलबन के बाद लिखा गया था। इस कहानी को उसने एक वृद्ध ब्राह्मण से सुना था। इसको 'दास्तान अजायब' के नाम से भी पुकारते हैं। इस हस्तलिखित पोथी के आधार पर कवि का परिचय निम्नलिखित है—कवि का पूरा नाम सैयद मोहम्मद था। इसके पिता नाम का मोहम्मद बाकर था जो खुरासान के रहने वाले थे। अपने सम्बन्धी के साथ अराकाट मे आकर अपना स्थायी निवास बना लिया। अराकाट के शान्तिपूर्ण तथा निश्चित साहित्यिक वातावरण का प्रभाव कवि पर भी पड़ा। बड़े बड़े विद्वानो के सम्पर्क से फारसी का विशेष ज्ञान हुआ। अत: फारसी के बड़े कवि हो गए। दकनी मे भी कविता थी। कवि का अन्तकाल सन् १७७० ई० म हुआ था।

---

१. यूरप म दकनी मखतूतात-पृष्ठ १३६
२. दकन म उर्दू - पृष्ठ १४६
३. यूरप मे दकनी मखतूतात-पृष्ठ ११८
४. वही - पृष्ठ ४२७

तालिब मोहनी—इसकी हस्तलिखित पोथी का उल्लेख ऊपर हो चुका है। काव्य का आरम्भ फारसी मसनवी पद्धति के आधार पर है। विभिन्न प्रशंसाओं के पश्चात् प्रस्तावना में काव्य प्रणयन का कारण बताया गया है। इसमें कवि के जीवन पर भी प्रकाश पड़ता है। नसीरुद्दीन हाशमी के द्वारा उल्लिखित पोथी के आधार पर उसकी कथा का सारांश इस प्रकार है।[1]

कथासार :—एक भारतीय सुन्दर मुसलमान युवक तालिब एक पनघट पर आया। वहाँ हिन्दू औरतों का झुण्ड इकट्ठा हुआ करता था। इस नगर के एक धनी तथा शान शौकत वाले प्रसिद्ध हिन्दू व्यापारी की लड़की मोहनी बड़ी सुन्दर और आकर्षक थी। वहाँ वह भी आई हुई थी। तालिब और मोहनी की आँखें चार हो गईं। तालिब मोहनी के नैनबाण से घायल होकर बेहोश हो गया। मोहनी ने सोचा कि वह मर गया है। किन्तु कुछ समय के बाद होश आ गया। उसने अपने प्रेम का वर्णन मोहनी से किया। और उसके पीछे चल पड़ा मोहनी अपने घर में चली गई और वह उसके दरवाजे पर बैठ गया लोगों ने मोहनी के पिता को इस मुसलमान प्रेमी के आगमन की सूचना दी। महाजन ने उससे कहा कि तुम बाहर से सभ्य जान पड़ते हो अतः मुझे अपमानित न करो। उसने उसको चले जाने की राय दी। तालिब पर उसका कोई प्रभाव नहीं पड़ा। लोगों ने उसे पागल समझ कर छोड़ दिया।

तीन रात दिन इसी प्रकार बीत गये। उसने न खाया और न सोया। इस पर महाजन को आश्चर्य हुआ। लोगों के कहने पर महाजन ने खाना भेजा लेकिन उसने कुछ नहीं खाया। जब खाना मोहनी के हाथ भेजा गया तभी उसने पेट भर खाना खाया। महाजन ने उससे जाने की प्रार्थना की। किन्तु उसके न जाने पर उसने नगर के शासक से शिकायत की। तालिब शासक के सामने लाया गया और उसने अपनी सारी घटना बता दी। शासक को उसके सच्चे प्रेम का पता चल गया। शासक ने महाजन को तालिब की मृत्यु की सम्भावना से सावधान कर दिया। शासक के आदेश से तालिब को महाजन के घर में शरण मिल गई और खाना भी मिलने लगा। इस प्रकार वह धैर्यपूर्वक वहाँ रहने लगा। महाजन का एक कठोर दास भी तालिब के साथ रहता था जिससे मोहनी कुछ बात चीत नहीं कर पाती थी। मोहनी की दाई उससे सहानुभूति रखती थी। एक माह के बाद होली आई। उसने मोहनी से मिलने के लिए तालिब को किसी विशेष वाटिका में भेज दिया रात को दोनों ने परस्पर मिलकर प्रेम पूर्वक बातें की। सूचना पाने पर दास तालिब

---

१. यूरप में दक्खनी मख्तूतात-पृष्ठ ४२८-२९

को मारने के लिये चल पडा। किन्तु मार्ग मे एक काले सर्प के काटने से उसकी मृत्यु हो जाती है। इस काड की सूचना मिलने पर महाजन ने दाई को किसी दूसरे नगर मे भेज दिया और मोहनी की बीमारी और फिर उसकी मृत्यु की झूठी खबर फैला दी गई। उसका नकली जनाजा निकल पडा। तालिब रोता पीटता उसके जनाजे के साथ चल पडा। लोगो ने कहा कि मरने पर भी पीछा नही छोडता है और प्रेमी होकर भी अभी तक जीवित है इसपर तालिब ने कुये मे गिरकर अपने प्राण त्याग दिया। जब मोहनी को इसकी सूचना मिली तब वह भी कुए मे कूद पडी। कुए से दोनो की लाश निकाली गई। उन दोनो की लाश एक दूसरे से सटी हुई थी। वे लाशें अलग नही हो सकी। शासक को सूचना दी गई। नमाज जनाजा के बाद दोनो को एक ही कब्र मे दफना दिया गया। यह कथानक म दुखान्त होते हुए भी अपने मे महत्वपूर्ण है। एक घर मे प्रेमी प्रमिका के मध्य विभिन्न कठिनाइयो का उल्लेख किया गया है। दक्खिनी हिन्दी मे इस प्रकार का कथानक किसी अन्य का नहीं प्राप्त होता है।

अमीन और बहराम व हुस्नबानो—

कवि का परिचय बीजापुर और गोलकुंडा मे अमीन नाम के अनेक कवि हुए हैं जिनका विविवत परिचय अमीन गुजराती के प्रसग मे पीछे दिया गया है। यह कवि इब्राहीम आदिलशाह सानी के समय का प्रसिद्ध कवि है। इसका परिचय अन्यत्र नहीं प्राप्त होता है। इसका प्रधान कारण यह था कि उसका सम्बन्ध किसी राज दरबार से नही था। उसकी मसनवी बहराम व हुस्नबानो से इतना ही प्रगट है कि वह एक सूफी प्रवृत्ति का स्वतन्त्र कवि था।

बहराम व हुस्नबानो—इस प्रेमाख्यान का रचयिता अमीन ही था। इसका समर्थन नसीरुद्दीन हाशमी और डा० मोहीउद्दीन कादरी साहब ने भी किया है। किन्तु उर्दू-ए-कदीम के लेखक ने उनका विरोध किया है।[३] हाशमी साहब ने इंगलैंड मे इसकी दो हस्तलिखित पोथियों का उल्लेख किया है।[४] एक पोथी पर इसको दकनी का काव्य और कवि का नाम दौलत लिखा हुआ है। डा० मोहीउद्दीन

१. यूरप मे दकनी मखतूतात-पृष्ठ २२१
२. " " " २२६
३. " " " २२८
४. हिन्दी सूफी काव्य मे हिन्दू संस्कृति का मिश्रण और निरूपण (शोध प्रबन्ध) डा० कन्हैया सिंह-पृष्ठ ११२

कादरी 'जोर' ने इसकी प्रस्तावना से यह सिद्ध कर दिया है कि इसका रचयिता दौलत नहीं है बल्कि इसका पूरक कवि है। वास्तविक रचयिता 'अमीन' ही था। जो इसको पूरा नहीं कर सका था। ब्रिटिश म्यूजियम में अमीन की फारसी कविता का संग्रह भी है।

यह किसी फारसी मसनवी से लिया गया है। यह बड़ी ही लोकप्रिय कहानी है। इसको लेकर विभिन्न भाषाओं में तथा अनेक कवियों द्वारा काव्य की रचना हुई है। उर्दू में फरखन्द अली के द्वारा १८६८ ई० में प्रकाशित हुई है। इसके दो पंजाबी अनुवादों का भी संकेत मिलता है। अन्य दक्खिनी कवियों ने इसको अपने काव्य का विषय बनाया है। इसकी रचना सन् १६४० में हुई थी।

कथा—काव्य का आरम्भ फारसी मसनवी के आधार पर हुआ है। इसमें परियों की कहानी कही गयी है। इसका नाम बहराम है। इसका पूरा नाम बहराम गोर है। कथा बहराम की बीस वर्ष की अवस्था के वर्णन से आरम्भ होती है। कहानी में वह हुस्नबानो नामक परी से विवाह करता है। इसमें इन्हीं दोनों की प्रेम की घटनायें वर्णित हैं। शादी के बाद वह ईरान का बादशाह बनता है। काव्य में इनके पूर्व के लैला-मजनू, शीरी फरहाद, यूसुफ-जुलेखा आदि प्रेमी युग्मों का स्मरण किया गया है और सबसे प्रेरणा ली गई है। भारत में इसकी कोई पोथी विद्यमान नहीं है।

मोलवी मोहम्मद बाकर आगाह और गुलजार इश्क का रिज़वान व रूह अफ़ज़ा

कवि परिचय—कवि मूल रूप से अरब का है किन्तु उसके पूर्वज व्यापार के सम्बन्ध में भारत आ गये थे और कारो मण्डल तट पर बस गये थे। इनके पूर्वजों ने व्यापार के साथ ही साथ वहाँ इस्लाम का व्यापक प्रचार किया और लोगों को सत्य का नया मार्ग सुझाया। कवि का जन्म वेल्लोर में सन् १७४५ ई० में हुआ था। वेल्लोर और त्रिचना पल्ली में शिक्षा प्राप्त की थी। उनको अरबी, फारसी, दकनी का अच्छा ज्ञान था। और कुल मिलाकर उन्होंने १०३ ग्रन्थों की रचना की। ६२ वर्ष की अवस्था में इनका अन्तकाल १८०५ ई० में हुआ था उनकी कब्र आज भी मद्रास में है।[1] राहुल जी के अनुसार आगाह साहब ने १७ दकनी पुस्तकों की रचना की थी, इनमें कुछ धार्मिक पुस्तकें हैं और एक प्रेमाख्यान

१. यूरुप में दकनी मखतूतात—पृष्ठ २२२

२. दक्खिनी हिन्दी काव्यधारा—पृष्ठ ३३०

'गुलज़ारे इश्क' भी है।

गुलज़ारे इश्क या रिज़वान व रूहअफ़ज़ा–

यह दकनी भाषा में एक प्रसिद्ध प्रेमाख्यान है। इसकी रचना १७९५ ई० में हुई थी। नसीरुद्दीन ने इसकी एक हस्तलिखित पोथी का उल्लेख किया है।[1] जो आक्सफर्ड के पुस्तकालय म है। इनके अनुसार इसकी पोथी पर रिजवान व रूह अफ़ज़ा की प्रेम कहानी भी अंकित की गई है। यह अभी तक प्रकाशित नहीं हो सकी है। पोथी के अनुसार हाशमी साहब ने उसकी कथा का साराश इस प्रकार दिया है।[2]

कथा–चीन के बादशाह का पुत्र रिजवान शाह बड़ा योग्य बहादुर और सुन्दर था। अपने पिता के बाद देश का बादशाह हो गया। एक दिन शिकार करने जगल में गया। रूह अफज़ा परी हिरन के रूप में सामने आई। बादशाह ने उसका पीछा किया। वह एक चश्मे में डूब गई। बादशाह ने उसकी बहुत प्रतीक्षा के बाद वहाँ एक महल बनवा दिया। बहुत प्रतीक्षा के बाद दोनों का मिलन हुआ और विवाह भी हो गया। इसके बाद दोनो अपने देश में चले आये।

आजिज़ और लाल गोहर

कवि परिचय–इस नाम के अनेक कवि दकनी में हुए हैं। इसके पूर्वज बनारस से आये थे किन्तु आजिज का जन्म दक्खिन में ही हुआ था। नवाब नुसरत-जग सैयद लश्कर खाँ की विशेष कृपा से आसिफ़जाही दरबार में सेना के बख्शी नियुक्त किये गये थे। फारसी और दकनी म कविता करते थे। इनका अन्तकाल सन् १७७३ में हुआ था।

लाल-गोहर–इसको किसी फारसी रचना का दकनी में अनुवाद कहा गया है। इसकी रचना तिथि ज्ञात नहीं है। सन् १७३७ से १७५६ ई० के बीच हुई प्रतीत होती है। यह उनकी मृत्यु के बाद सग्रहीत हुई है। नसीरुद्दीन हाशमी साहब ने यूरोप में इसकी तीन हस्तलिखित पोथियों का उल्लेख किया है इनम एक ब्रिटिश म्यूजियम तथा दो इंडिया आफिस के पुस्तकालय में है।[3] इनके अनुसार कथा का साराश निम्न है।[4]

कथा–इसकी कथा भी इन्द्र सभा की भाँति है। एक बादशाह का पुत्र उद

१. यूरुप म दकनी मखतूतात–पृष्ठ ४५६
२. हिन्दी सूफी काव्य में हिन्दू संस्कृति का चित्रण और निरूपण–पृष्ठ–११५
३ हिन्दी साहित्य का वृहत इतिहास भाग ४–पृष्ठ ३६७, ३६१
४. हिन्दी के सूफी प्रेमाख्यान पृष्ठ १४२

रहा था। उसी के साथ कुछ परियाँ भी उड रही थीं। उनमें से एक परी शाहज़ादे को देखकर आशिक हो गई और उसको अपने पास मँगवा लिया। बहुत दिनों के बाद दोनों का विवाह हुआ और लौटकर अपने घर आ गये। दोनों प्रेम पूर्वक सुखी जीवन व्यतीत करने लगे।

मीर नजीबुल्लाह और हुश्शाम व कमर-

इस कवि को कहीं-कहीं मीरशाह कहा गया है। इसकी एक मसनवी का पता चलता है। हुश्शाम व कमर की एक हस्तलिखित पोथी नसीरुद्दीन हाशमी साहब ने इंगलैंड के इंडिया आफिस के पुस्तकालय में सूचित किया है और उसका विस्तार से परिचय दिया है।[1] इसका कथानक निम्नलिखित है।

कथा-शाम का एक नौजवान शाहज़ादा हुश्शाम था। वह शाहज़ादी कमर पर आसक्त था। वह उसको प्राप्त करने में सफल नहीं हो पा रहा था हजरत उमर को उसके प्रेम की पवित्रता का पता चला। वे हुश्शाम के साथ उसको प्राप्त करने के लिए चल पडे। वहाँ कमर का विवाह हो रहा था। हुश्शाम के आने का समाचार सुनकर कमर बाग में मिलने चली आई। और उसके साथ भाग जाती है। कमर के पिता ने उसका पीछा किया। एक भयंकर युद्ध हुआ। हुश्शाम एक वीर व्यक्ति था उसकी बहादुरी का लोहा बडे-बडे लोग मानते थे। किन्तु वह वीर गति को प्राप्त हुआ। कमर भी उसके वियोग में मर जाती है। हजरत उमर ने दोनों को दफन कर दिया। इस प्रकार नायक नायिका की करुण मृत्यु के साथ ही इस अन्तिम दकनी प्रेमाख्यान का अंत हो जाता है।

दकनी प्रेमाख्यान काव्यों के रचयिताओं को प्रायः राज्याश्रित कवि कहा जाता है। किन्तु सभी कवियों के लिए ऐसा नहीं कहा जा सकता है। अनेक सूफी कवि स्वतन्त्र रूप से रचनायें कर रहे थे। यह निश्चित था कि अधिकांश दक्खिनी साहित्य राज्याश्रयों में ही लिखा गया था। दक्खिनी प्रेमाख्यान में अधिकांश को शुद्ध प्रेमाख्यान कहा जा सकता है। उनमें सूफी मतवाद के प्रचार का दृष्टिकोण नहीं अपनाया गया है। प्रेमाख्यानों के प्रणेता शुद्ध राज्याश्रित कवि थे और जीविकोपार्जन के ध्येय से काव्य का प्रणयन कर रहे थे। सूफी धर्म या मतवाद के प्रचार से उनका कोई सम्बन्ध नहीं था। और न उन लोगों ने अलौकिक अथवा आध्यात्मिक प्रेम को अपना लक्ष्य बनाया था उनका उद्देश्य मनोरंजन तथा कीर्ति स्थापना ही था।

इन कवियों ने इस्लाम के प्रचार का भी कार्य नहीं किया था इनको तो

---

१. उर्दू मसनवियाँ-गोपीचन्द नारंग-भूमिका-पृष्ठ ८

अपनी आजीविका की ही चिन्ता रहती थी। भारत में इस्लाम के प्रचार में कवियों या बादशाहों ने कम योग दिया है। इतना निश्चित था कि वे मुसलमान थे और इस्लाम की गरिमा से प्रभावित थे। इन कवियों ने अपने काव्यों में इस्लामी जीवन दृष्टि को ही अपना आदर्श रखा है। और उसके पवित्र रूप को सामने प्रस्तुत करने में विशेष योग दिया है। इस दृष्टि से उनको इस्लाम का प्रचारक नहीं माना जा सकता है। प्रायः लोग इन कवियों को साम्प्रदायिक कह दिया करते हैं। किन्तु ऐसा कहना उनके प्रति अन्याय होगा। इस्लाम के प्रति उनका सहज आकर्षण साम्प्रदायिकता नहीं कही जा सकती है। अरबी, फारसी मातृभाषा होते हुये भी दक्न की भाषा को अपने काव्य की भाषा बनाकर इन कवियों ने अपनी उदारता का परिचय दिया है। इसके अतिरिक्त भारत में प्रचलित अनेक कहानियों को अपना कर, अनेक भारतीय ग्रंथों का अपनी भाषा में अनुवाद करके भी अपने को उदार सिद्ध किया है। यूसुफ जुलेखा अथवा किसी अन्य लोकप्रिय कथा को अपना लेने के कारण उनको कट्टर पंथी नहीं कहा जा सकता है। प० परशुराम चतुर्वेदी का विचार है कि दकनी कवियों ने अपने आख्यानों में न तो सामी और न हिन्दू परम्परा का निर्वाह किया है। यह भी उनकी उदारता का परिचायक है क्योंकि इन कवियों ने दोनों जीवन पद्धतियों के समन्वय का प्रयास किया है। अधिकांश कवियों ने इस्लामी कहानियों की अपेक्षा भारतीय कहानियों को ही अपनाया है। यह उनके व्यापक दृष्टिकोण का ही फल है। यह रचनायें फारसी मसनवी परम्परा के आधार पर अवश्य लिखी गई हैं और इनमें विविध भाषाओं के साहित्य से प्रेरणा ली गई है। जिन, परी, देव, स्वप्न आदि को आवश्यक तत्व मानते हुये भी जीवन की वास्तविकता पर ध्यान रखा गया है।

दक्खिनी हिन्दी का एक विशिष्ट प्रेमाख्यान—यूसुफ-जुलेखा

सैयद मीरां हाशमी

(क) जीवन परिचय :— आदिलशाही परिवार एवं हाशमी का सम्बन्ध हाशमी दक्षिण भारत के आदिलशाही राज्यकाल के कवि थे। इसके संस्थापक यूसुफ आदिलशाह का सम्बन्ध तुर्की के उसमानिया राज परिवार से था। दक्षिण के बहमनी राज्य में वह सूबेदार थे उनमें से एक बीजापुर का उक्त शासक भी था। जब बहमनी राज्य की शक्ति क्षीण हो गई तब उसके विभिन्न सूबेदारों ने अपनी स्वतन्त्रता की घोषणा कर दी और सभी ने अपना स्वतन्त्र राज्य स्थापित कर लिया। इसी स्वतन्त्रता के अभियान में यूसुफ आदिलशाह ने सन् १४८६ ई० में बीजापुर में अपना स्वतन्त्र राज्य स्थापित किया और तभी से आदिल शाही राज्य का क्रम चल पड़ा। उसके परिवार के परवर्ती शासक उस पर राज्य करते रहे। इसके अंतिम शासक अली आदिल शाह सानी (१६५६–७२) तथा सिकन्दर आदिलशाह (१६७२–८५) थे। यही समय हमारे कवि हाशमी का भी है। इस समय तक हाशमी बीजापुर में ही था।

अली आदिलशाह सानी के समय में ही मुगल सम्राट औरंजेब का आक्रमण दक्षिण पर और शिवाजी का आक्रमण बीजापुर पर आरम्भ हो गया था। अली आदिलशाह इन सभी का सामना करता रहा। सन् १६७२ ई० में उसके अन्तकाल के बाद उसका नाबालिग पुत्र सिकन्दर आदिलशाह शासक नियुक्त हुआ। उसके विरोध के बावजूद भी दो साल की अवधि में ही बीजापुर पर मुगल सम्राट औरंगजेब का अधिकार हो गया और १६८५ ई० में बीजापुर के आदिलशाही शासन का अन्त हो गया।

इस राजनीतिक उथल पुथल के बाद हाशमी अरकाट चला गया था और

यहाँ मुगल सूबेदार जुलफेकार खाँ के संरक्षण में जीवन बिताने लगा। इसकी प्रशंसा में भी उसने कुछ कसीदों की रचना की थी। यूसुफ आदिल शाह स्वयं काव्य तथा कला प्रेमी था और कविता भी करता था। इसके दरबार में भारतीय तथा अभारतीय कवियों, लेखकों, संगीतज्ञों को संरक्षण प्रदान किया जाता था। संरक्षण का यह क्रम बराबर चलता रहा। दक्खिनी हिन्दी का अधिकांश साहित्य इसी राज परिवार के संरक्षण में लिखा गया था। राजकुमारों तथा शासकों की काव्य अभिरुचि से हाशमी भी लाभान्वित होता रहा किन्तु उसका सम्बन्ध इस परिवार के ह्रास काल से ही था। उसको अली आदिल शाह एवं सिकन्दर आदिलशाह का संरक्षण प्राप्त हुआ। अतः गम्भीर वातावरण के कारण शांति पूर्वक काव्य सर्जना का अवसर नहीं मिल सका किन्तु काव्य प्रतिभा के कारण उसने महत्वपूर्ण काव्यों की रचना की।

कवि परिचय—उपर्युक्त गम्भीर राजनीतिक परिस्थितियों के कारण अधिकांश दक्खिनी साहित्य विनष्ट हो गया था जिससे तत्कालीन साहित्य और साहित्यकारों पर विशेष प्रकाश नहीं पड़ पाता है। इसी कारण अन्य प्राचीन कवियों की भाँति हाशमी का जीवन भी अन्धकाराछन्न है। उनके नाम, जन्म और मृत्यु आदि की तिथियों के सम्बन्ध में सन्देह किया जाता है, इसके लिए केवल अनुमान से ही काम लिया जाता है।

दक्षिण के प्रसिद्ध लेखक श्री इब्राहीम जुबेरी ने अपनी रचना बसातीन सलातीन में व्यार खाकी खाँ ने इनके वास्तविक नाम का उल्लेख नहीं किया है। इन विद्वानों ने केवल हाशमी उप नाम का विवरण दिया है। सर्वप्रथम हकीम शमशुल्लाह कादरी साहब ने हाशमी का नाम सैयदमीरा लिखा है किन्तु लेखक ने जिन पुस्तकों का प्रमाण दिया है। उनमें किसी में भी इसका उल्लेख नहीं है।[1] परवर्ती सभी लेखकों ने इन्हीं का अनुकरण किया है। तत्कालीन तथा आधुनिक परिचय ग्रन्थों में भी इसी नाम का समर्थन किया गया है। सन् १९४४ ई० में प्रकाशित हिन्दुस्तानी अदब ने इनका नाम मियाँ खाँ लिखा हुआ है और अनेक मतभेदों का उल्लेख किया गया है।[2] मोलवी सैयद महमूद ने भी इसी नाम का उल्लेख किया है।[3]

महदवी सम्प्रदाय की बहुत सी कहावतों में हाशमी के सम्बन्ध में अनेक नई बातों का उल्लेख है। इसमें इनका नाम सैयद मीरां बताया गया है। इनकी पदवी

१. दीवान हाशमी-पृष्ठ १

२. हिन्दुस्तानी अदब जिल्द ९ नवंबर सन् १९४४ नम्बर २-पृष्ठ ४

३. दीवान हाशमी-पृष्ठ १

मियाँ खा थी। तारीख सुलेमानी मे भी इनका नाम मियाँ खा हाशमी लिखा हुआ है। इसी आधार पर हिन्दुस्तानी अदब में इस नाम का प्रयोग किया गया है। वास्तव मे हाशमी न सैयद थे और न पठान। ये सभी उनकी उपाधियाँ थी। नाम केवल मियाँ रखने से इसकी पूर्णता मे सन्देह होने लगता है। यह नाम का एक भाग अवश्य है और मेंहदी सम्प्रदाय के लोगो के नाम के साथ प्रयुक्त होता है। सखावत मिर्जा साहब ने इसका नाम सैयद मीरा हाशमी स्वीकार किया है। दक्षिण मे इस प्रकार का नाम रखने की सामान्य प्रथा थी। महदी लोग मूल नाम के साथ उर्फ भी लगाया करते थे। इस सम्प्रदाय के लोग इनका नाम मियाँ खा हाशमी ही पुकारते हैं। कुछ विद्वान इनको केवल मुल्ला हाशमी भी पुकारते हैं किन्तु इसमें मुल्लाह नाम का आधार स्पष्ट नहीं किया गया है। इसका प्रयोग नहीं किया गया है।

इसका उपनाम हाशमी था यह नाम उन्होने अपने पीर की यादगार और स्मारक के रूप मे रखा था। इनके पीर का नाम सैयद शाह हाशमी था जो बीजापुर के बहुत बड़े सूफी वली और गुजरात के प्रसिद्ध सूफी औलिया शाह वजीहद्दीन हाशमी के भतीजे थे जिनका अन्तकाल १६८२ ई० में हुआ था। मुर्शिद की कृपा तथा पैतृक दास के रूप मे ही इनको काव्य कौशल प्राप्त था।

जन्म तथा मृत्यु तिथि—इनकी जन्म-तिथि अभी तक अज्ञात है। इसका उल्लेख कहीं नही किया गया है। इसी प्रकार मृत्यु के सम्बन्ध मे भी सन्देह किया जाता है। अधिकांश आलोचको ने इसकी मृत्यु सन् १६९७ ई० में स्वीकार किया है। तजकिरा खोराये दफ्न मे इनकी मृत्यु तिथि १७७६ अंकित है। यह तिथि भ्रम मे लिखी गई मालूम होती है। यह वास्तव मे १६९७ ई० ही हो सकता है। कवि ने स्वय अपने काव्य मे अपनी पुस्तक का रचनाकाल १६८७ ई० अंकित किया है। ऐसी स्थिति मे मृत्यु १६९७ ई० ही हो सकती है। बुजुर्गान के लेखक के अनुसार भी यही तिथि सत्य है। श्री नसीमुद्दीन हाशमी, डा० सैयद एजाज हुसैन आदि को इस तिथि मे सन्देह है। मसनवी के अध्ययन से स्पष्ट होता है कि यह उसके जीवन के अंतिम समय में समाप्त हुई थी। उसने दीर्घकालीन जीवन व्यतीत किया था। अत मसनवी के वर्ष बाद तक जीवित रहना स्वाभाविक था। इस प्रकार इसकी मृत्यु तिथि १६९७ ई० मे मानी जा सकती है। अनवार मुईली मे इब्राहीम जुबरी ने भी इसका समर्थन किया है।

निवास स्थान—इस सम्बन्ध मे भी यह भेद पाया जाता है। सखावत मिर्जा ने इसको बुरहानपुर का निवासी बताया है। यहीं से वह गुजरात गया था और बाद मे बीजापुर आ गया था। इसी कारण वे गुजराती रीति रिवाजों से

भली प्रकार परिचित थे। जीवन के अन्त में बुरहानपुर आ गया था। यह बात उसके एक कसीदे से भी सिद्ध की गई है। इसमें उसने नवाबजुल्फेकार खाँ का सरक्षित बनाया है। मिर्जा साहब की सम्पत्ति का कतीन साहब ने विरोध किया है। गुजरात राज्य के अहमदाबाद और सूरत आदि मेहदी सम्प्रदाय की दृष्टि से महत्वपूर्ण माने जाते है। अत. इन स्थानों के महत्व से प्रभावित होकर वे बीजापुर से गुजरात भी जा सकते हैं क्योंकि महदी लोगों का गुजरात से आध्यात्मिक सम्बन्ध रहता है। अधिकांश लोगों ने उनको बीजापुर का ही बताया है। बुरहानपुर निवास होने का कोई लिखित प्रमाण नही मिलता है। हाशमी के परवर्ती पीढी के लोग दक्षिण के नन्दगांव पीठ, अमरावती और हैदराबाद मे अब भी निवास करते हैं. तारीख सुलेमानी की सहायता से कनील साहब ने इसका विस्तार मे परिचय दिया है और इनके लम्बे तथा सुखी सम्पन्न परिवार का विवरण दिया है। हाशमी की समाधि बीजापुर मे उनके पीर के कक्ष म है।

हाशमी का धर्म—*हाशमी के धर्म एवं सम्प्रदाय के सम्बन्ध मे भी मत*भेद पाया जाता है। बीजापुर और गोलकुण्डा के शासक शिया थे। उनके सरक्षण मे रहने के कारण उनको शिया माना जा सकता है किन्तु वह सूफी औलिया सैयद शाह हाशिम का मुरीद था। अत वह सूफी भी माना जाता है। हाशमी ने अपने पीर को भी महदी बताया है। जीवन के अंतिम दिनों में वह मुगल सूबेदार जुल्फेकार खाँ के संरक्षण में रहने लगा था। यह स्थिति उसको सुन्नी मुसलमान होने का सकेत करती है।

स्वय हाशमी ने अपना धर्म मेहदवी बताया है। कुछ दिन पूर्व जोनपुर के सैयद मोहम्मद नामक व्यक्ति ने अपने को पैगम्बरी दावा किया था और महदवी नाम से एक नया धर्म आरम्भ किया था। उस समय तक उसका कुछ प्रचार भी हो गया था किन्तु बाद में वह आगे नही बढ़ सका था। इसके मानने वाले दक्षिण भारत म अब भी पाये जाते हैं। हैदराबाद में कुछ मुहल्ले ऐसे हैं जहाँ इसी सम्प्रदाय के लोग रहते है। पालनपुर के नवाब मेहदवी ही थे। आज भी मेहदवी साहित्य में सैयद मोहम्मद जौनपुरी की घटनायें और जीवन सुरक्षित है वे स्वय हिन्दी और गुजराती में कविता करते थे। हाशमी भी इसी धर्म मे आस्था रखते थे। निजमी पदम बदायूनी ने इनको सैयद अहमद फारूकी उर्फ मीर अहमद मरग्निदी का मुरीद बताया है। किन्तु किसी आलोचक अथवा हाशमी ने इसका उल्लेख नही किया है। अपने काव्य यूसुफ जुलेखा के आरम्भ मे मोहम्मद साहब की प्रशसा के बाद मेहदी सम्प्रदाय के पूर्वक सैयद जौनपुरी का विस्तार से वर्णन करते हुए इनके महत्व पर

प्रकाश डाला है। कवि कहता है।

> यू खातिम वली रब ने पैदा किया–औलिया में तो सारी बडाई दिया
> यू मेहदीए राब है पैगम्बर शान–यू मादूद रब का वही है निशान
> निशानियाँ मो मसलाक वही चाल है–कि सूरत वही हौर वही हाल है
> निशानियाँ तो कीतियाँ अच्छी इसमें सब–यू सैयद मुहम्मद है जिनका लकब
> नबी और मेहदी यू एक च पचान–यू एक जत दो रकम आया है जान
> पर्दं जिसकी तसदीक है करके जान–मकी कुफ इकार है इसको मान
> नबी सू रहिया हैं जन तर पगर–रहा है वहाँ शख्स मेहदी सू कर
> जो कोई शख्स लाया नबी पर ईमान–रहा नेत्र मोमिन हो मेहदी कू यान
> करम करके मेहदी ऊपर नित सदा फिकर और सलवात दिया है खुदा
> यू मेहदी खलीफा है रहमान का–बयाँ जिन किया जग पो फुरकान का
> जमीं और जमा का करे यू नदा–है मेहदी का खासा दिखाना खुदा
> तू आया है मेहदी इन नाम–दिखाया खुदा खास हौर आम है।

कवि की उक्ति से उसके कर्म के सम्बन्ध म सन्देह नही रह जाता है।

रचनायें :–'हाशमी' जन्मान्ध कवि था इसका सकेत प्राय सभी चरित लेखकों ने किया है। स्वय 'हाशमी' ने अपनी मसनवी यू० जु० में इसका विस्तार से वर्णन किया है–पीर द्वारा यू० जु० की रचना का आदेश दिए जाने पर हाशमी ने अपनी असामर्थ्य व्यक्त की क्योंकि इसके पास आँखे नही थी। उन्होंने कहा है–[१]

> सकल (सगल) इल्म के फनसूँ मैं दूर हूँ–पू दोनो अखियाँ तुज सो माजूर हूँ
> पीर बोलना कुच भी पडना पडे–सुघर है तो क्या हुप के मादे पडे
> मेरे हाथ मे कुछ भी होता कलम–न ऐसे दिखाता मैं आलम सूँ कम
> बले क्या करूँ मुज यूँ है ला इलाज–हर एक कोई आजिज है अखियाँ बाज
> मशक्कत पर मरी देखो टुक एक–बोलूँ बीस बतियाँ तो रहे याद एक

उक्त कथन से स्पष्ट होता है कि हाशमी की दोनों आँखे नहीं थी किन्तु उनको दिव्य दृष्टि प्राप्त थी। इसी का उल्लेख पीर साहब ने किया है।

> दिया शाह हाशिम मुने फिर जवाब–मकी है मुझे तू जा बोले किताब
> नजर जिसकी चलती है हर ठार पर–इसे क्यों न कहता अखियाँ माजूर कर
> दुरुस्त क्यों तेरा कहे जग सो सब–हजार एक अखिया दिया दिल को रब
> हुई है तेरी बातनी में नजर–न को उस आसो का तू अफसोस कर
> आखिया वे जो खुदा को ले पचान–अखियाँ वे जो खूबी का देखे निशान

दक्खिनी हिन्दी का यह सूरदास एक प्रतिभा सम्पन्न कवि था और दीर्घ-

---

१. यूसुफ जुलेखा–सालारजंग की प्रति १९–पृष्ठ ३७।

कालीन जीवन व्यतीत किया था। उसने विभिन्न राज परिवार की सहानुभूति और संरक्षण प्राप्त किया था। सभी की प्रशंसा में कुछ न कुछ लिखा था। कविता बड़ी सुन्दर और सीधी सादी थी उसमें किसी प्रकार की पेचीदगी नहीं थी। आरम्भिक दक्खिनी हिन्दी कविता में उसके साहित्य का महत्वपूर्ण स्थान है। आज भी उसकी कवितायें पर्याप्त मात्रा में मिलती हैं। इससे उनकी लोकप्रियता का पता चलता है। उनकी अधिकांश फुटकर रचनाओं का केवल संकेत मात्र ही प्राप्त होता है। प्रसिद्ध प्रेमाख्यान काव्य यूसुफ-जुलेखा की ही विभिन्न हस्तलिखित प्रतियाँ भारत तथा यूरोप के पुस्तकालयों में पाई जाती हैं। डा० सैयद मोहीउद्दीन कादरी के अनुसार 'हाशमी' की दीर्घकाय पुस्तकें निम्नलिखित हैं–[1]

(१) तरजुमा अहसनुल कसस–पीरजादा गुलाम मोहीउद्दीन ने अपनी पुस्तक 'अहवाल सलातीन' बीजापुर में व्यक्त किया है कि हाशमी दक्खिनी हिन्दी का दूसरा बड़ा कवि था उसने 'अहसनुल कसस' का अनुवाद करके अपनी विद्वता का परिचय दिया है। सलातीन के लेखक ने भी इसका उल्लेख किया है और इसको 'रोज़ता अशहदार' का अनुवाद बताया है 'रोज़ता अशहदार' और 'अहसनुल कसस' दोनों समानार्थी हैं। यह पुस्तक आज उपलब्ध नहीं है और न किसी अन्य लेखक ने इसका उल्लेख किया है। प्रोफेसर नजीब अशरफ तथा सखावत मिर्जा साहब ने भी इसका विरोध किया है और इसको यूसुफ जुलेखा का ही दूसरा नाम बताया है।[2] गुलाम मोहम्मद खां भी इसको नहीं मानते किन्तु अन्य रचनाओं का समर्थन करते हैं।[3] स्वयं 'हाशमी' ने भी कहा है-[4]

राखा अहसनुल किस्सा रब जिसका नाम–तुझे खोलकर ऊबोमिया तमाम
तया कहा अहसनुल कसस जिसको खुदा–कता हूँ उसका तुझे इस्नदा

इस प्रकार कवि ने इसको यूसुफ जुलेखा घोषित करके स्वयं समस्या का समाधान कर दिया है।

(२) गज़ल का दीवान–डा० ज़ोर तथा सलातीन के लेखक ने इसका भी उल्लेख किया है तत्कालीन समाज में इसको विशेष लोकप्रियता प्राप्त थी। यह कविता उच्चकोटि की नहीं थी किन्तु तत्कालीन भाषा के अध्ययन के लिए इसका विशेष महत्व है। वर्णन शैली बड़ी सरस और आकर्षक है। इसमें कसीदा और

१. उर्दू शहपारे भाग १–पृष्ठ ७१, ७२
२. दीवान हाशमी–पृष्ठ १४
३. 'हिन्दुस्तानी अदब' नवम्बर १९५४ न० २–पृष्ठ ६
४. यूसुफ-जुलेखा हाशमी–सालारजंग की पोथी संख्या १६–पृष्ठ १०

गजल के अतिरिक्त कता, रुबाइयां और कुछ मरसिया भी संग्रहीत हैं। हाशमी का यह संग्रह बहुत दिनों तक अप्राप्य था किन्तु अब 'उर्दू अदब संस्था हैदराबाद से उस्मानिया विश्व विद्यालय में उर्दू विभाग के रीडर डा० हफीज कतील ने सम्पादित करके प्रकाशित करा दिया है और 'दीवान हाशमी' के नाम से प्रसिद्ध है।

(३) मरसिया—'हाशमी को बीजापुर का प्रारम्भिक मरसिया लेखक बताया जाता है किन्तु अन्यत्र इसका उल्लेख नहीं मिलता है। 'हाशिम अली' नाम का एक स्वतंत्र मरसिया लेखक दक्खिनी हिन्दी में हुआ है। सम्भव है हाशमी और हाशिम अली के व्यक्तित्व को मिला दिया गया हो। मरसिया का कोई संग्रह प्राप्त नही होता है कवि के कुछ मरसिया का पता अवश्य है जो उसके गजलों के संग्रह मे प्रकाशित हो चुके हैं।

(४) रेख़्ती कवितायें—इस कवि को दक्खिनी कवियों मे रेख़्ती कविता का जन्म दाता बताया जाता है। क्योंकि इसके पूर्व किसी अन्य ने रेख़्ती में कविता नही की थी उसकी कुछ गजलें रेख़्ती भाषा मे ही हैं जो गजलों के संग्रह में प्रकाशित हैं। रेख़्ती कविता का कोई स्वतंत्र संग्रह प्राप्त नहीं होता है। इसको प्रायः जनानी भाषा बताया जाता है। जब प्रेम का निमन्त्रण नारी की ओर से दिया जाता है तब इसी प्रकार की रेख़्ती भाषा का प्रयोग होता है। यह हिन्द प्रभाव बताया गया है। सैयद एहतेशाम हुसेन साहब को यह स्वीकार्य नहीं है। वे इनको रेख़्ती का जन्मदाता नहीं मानते है।[1]

(५) शेख मोहम्मद अमीन--

आलोच्य कवि दक्खिनी यूसुफ-जुलेखा का दूसरा रचनाकार है। सूफी होने के कारण कवि अपने जीवन से अनासक्त प्रतीत होता है। यही कारण है कि कवि का जीवन अन्धकाराछन्न है। प्राप्त सामग्रियों एवं काव्यों में इनका संक्षिप्त जीवन विवरण ही प्राप्त होता है। इन पुस्तकों मे दक्खिन के विभिन्न अमीनवारी कवियों के जीवन से आलोच्य कवि का जीवन मिलाकर भ्रमजाल उत्पन्न कर दिया है। अतः वास्तविक अंश को पकड़ पाना कठिन हो जाता है। कवि का संक्षिप्त परिचय निम्न सामग्रियों से उपलब्ध होता है :—

बहिसाक्ष्य की सामग्रियों में— (१) तब का-तुश्शोअरा, करीमुद्दीन (२) हकीम सैयद शमसुल्लाह कादरी विरचित-उर्दू ए कदीम (३) यूरोप

१. उर्दू साहित्य का इतिहास– सैयद एहतेशाम हुसेन–पृष्ठ ४४

मे दकनी मखतूनात नसीरुद्दीन हाशमी (४) दकन में उर्दू-नसीरुद्दीन हाशमी (५) दक्खिनी हिन्दी काव्य धारा-राहुलजी (६) यूसुफ-जुलेखा की भूमिका-डा० मोहम्मद अब्दुल।

अन्तसाक्ष्य की सामग्री —(१) कवि का यूसुफ-जुलेखा तथा साकी नामा में स्वकथन (२) समकालीन कवि मोहम्मद फतेह की मसनवी 'यूसुफ-सानी अथवा 'जुलेखा सानी' में कतिपय उल्लेख।

कवि परिचय —इस सम्बन्ध मे बहिसाक्ष्य की सामग्रियों से निम्नलिखित सूचना प्राप्त होती है .—

(१) डा० सैयद मोहीउद्दीन कादरी 'जोर' ने कवि के सम्बन्ध में लिखा है "यह गोलकुण्डा का दूसरा कवि अमीन है। इसका पूरा नाम शेख मोहम्मद अमीन था इसकी किताब यूसुफ-जुलेखा औरंगजेब के समय मे १६६३ ई० मे खतम हुई थी" तथा अमीन ने बड़ा काम किया है। लेकिन वह बड़ा कवि नही था। सम्भवत यह दिल्ली के अमीर खुसरो की पुस्तक यूसुफ जुलेखा का अनुवाद है लेकिन फारसी प्रभाव से मुक्त है। वर्णन शैली सरल है लेकिन जब सूफी तत्व चिन्तन की व्याख्या की गई है तब शैली दुरुह हो जाती है। जीवन पर विशेष प्रकाश नहीं पड़ता है लेकिन इतना स्पष्ट है कि यह कवि न होकर एक धार्मिक व्यक्ति था।" राहुल जी भी उक्त मत को ही अक्षरशः स्वीकार करते हैं।[१]

(२) इसके सम्बन्ध मे मोलवी करीमुउद्दीन साहब का विचार है कि इसका पूरा नाम मीर मोहम्मद अमीन था तथा उपनाम अमीन था। यह दकनी का एक प्रसिद्ध कवि था। अन्य रचनाओं के अतिरिक्त इसकी एक पुस्तक 'साकी नामा' भी है। इसकी एक अन्य रचना यूसुफ-जुलेखा भी है जो लोकप्रिय रचना रही है। यह इसी प्रकार की रचना है जैसी 'जामी' ने फारसी मे लिखा है और एक अन्य दकनी रचना की भांति है जो हैदराबाद मे पहले से ही लिखी गई थी। यह वंश परम्परा की दृष्टि से सैयद है। कवि बनारस का निवासी था तथा मीर गुलाम अली आजाद बिलग्रामी का शिष्य था। जीवन के अंतिम समय में दक्खिन की यात्रा की थी और वहीं उसकी मृत्यु भी हुई थी।[२]

डा० मोहम्मद अब्दुल हमीद फारुकी साहब ने उक्त दोनों मतों को केवल अनुमान ही स्वीकार किया है। इनके अनुसार अमीन न तो गोलकुण्डा का रहने

---

१. दक्खिनी हिन्दी काव्यधारा-राहुल जी-पृष्ठ ११८

२. यूरप मे दकनी मखतूनात-पृष्ठ ३३८

वाला कवि था और न बनारस का।[१] डा० 'ज़ोर' ने अमीन गुजराती की यूसुफ़ जुलेखा का आधार अमीर खुसरो की रचना माना है। किसी भी विश्वसनीय आलोचना एवं परिचय ग्रन्थ में अमीर खुसरो की यूसुफ़ जुलेखा का उल्लेख नहीं किया गया है। डा० रज़ाज़ादा शफ़क़ अल्लनामा शिबली नोमानी, आदि आलोचकों ने इसका विवरण नहीं दिया है। अमीर खुसरो पर शोध प्रबन्ध लिखने वाले डा० वाहिद मिर्ज़ा ने भी इसका उल्लेख नहीं किया है। गालिब अकादमी के विशिष्ट विद्वान सैयद बाहुउद्दीन अब्दुल रहमान ने भी इसको कपोल कल्पना ही माना है। मुझे भी इसका कोई संकेत नहीं मालूम हुआ है। पता नहीं किस आधार पर डा० जोर ने इसे अमीर खुसरो के काव्य के आधार पर लिख दिया है तथा राहुल जी ने भी इन्हीं के राग में राग मिला दिया है। उक्त सभी मत स्वयं यूसुफ़ जुलेखा में व्यक्त कवि के स्वकथन से अप्रामाणिक एवं अनुमानाश्रित ही प्रतीत होते हैं। उक्त मत के अन्य संकेत की व्याख्या आगे यथावसर की जायगी। इसका विरोध करने वाले कुछ मत इस प्रकार हैं :—

हकीम सैयद शमसुल्लाह कादरी साहब ने इनका पूरा नाम मोहम्मद अमीन लिखा है। यह गुजरात का निवासी था। औरंगज़ेब के समय में ही इसका अन्तकाल हो गया था। इन्होंने यूसुफ़-जुलेखा की प्रेम कहानी को गूजरी भाषा में लिखा है। यह काव्य सन् १६९७ ई० में समाप्त हुआ था।[१] हकीम साहब ने अमीन के एक नातिया कसीदा' का भी उल्लेख किया है जो सन् १६८७ ई० में समाप्त हुई थी और गूजरी ज़बान में लिखी गई थी।

श्री नसीरुद्दीन हाशमी साहब ने इसको गुजरात का कवि माना है। औरंगज़ेब के समय में इसने दक्षिण की यात्रा की थी। यह एक सूफ़ी मुसलमान कवि था। कादरिया सम्प्रदाय में मुरीद था। कविता करना इनका व्यवसाय नहीं था। वह एक धार्मिक व्यक्ति था और इस्लामी शरीअत का पक्का अनुयायी था।[२] हाशमी साहब ने यूसुफ़-जुलेखा को गोधरी भाषा में रचा गया बताया है और किसी हस्तलिखित से 'मैं लिखा गोधरी के बीच सुन यों' लिखकर सिद्ध भी किया है।[३] स्वयं अमीन ने अपनी मसनवी को गूजरी में लिखा घोषित किया है गोधरी में नहीं। गोधरा गुजरात का एक स्थान है। अतः यह गोधरी न होकर गोधरा होना चाहिए था।

---

१. यूरोप में दकनी मख़तूतात–पृष्ठ ३३६
२. वही –पृष्ठ ३३८
३. यूसुफ़ जुलेखा–अमीन गुजराती–भूमिका पृष्ठ ६२
४. दकन में उर्दू (प्राचीन प्रकाशन)–पृष्ठ २१५

विभिन्न हस्तलिखित प्रतियों में भी इसी का उल्लेख है।[1] गोधरी कहने में लेखक का तात्पर्य गोधरा के आस पास की भाषा से ही रहा होगा। इसमें गूजरी का ही संकेत मिलता है। प्रायः क्षेत्र विशेष के कारण लोग भाषाओं का नामकरण कर दिया करते हैं। इसी प्रवृत्ति के अनुसार भोजपुरी, अवधी, कनौजी आदि का भी नामकरण हुआ है। अतः यदि हाशमी साहब ने गोधरी का पता किसी हस्तलिखित पोथी से उल्लेख कर दिया है तब भी उसे गूजरी ही समझना चाहिए जिसका उल्लेख काव्य की अन्य पंक्तियों में भी किया है।

इसी प्रकार अपनी अन्य पुस्तक में भी हाशमी साहब ने इसे गुजरात का कवि माना है औरंगजेब का ही समकालीन बनाया है, उसका पूरा नाम शेख मोहम्मद अमीन लिखा है। यह कवि बहुत दिनों तक औरंगाबाद में भी निवास कर चुका था, इसी कारण इसको भी दक्खिनी हिन्दी के कवियों में माना जाता है।[2] इन्होंने भी अमीन की यूसुफ-जुलेखा को किसी फारसी रचना के आधार पर बताया है लेकिन उस आधारभूत काव्य तथा रचनाकार का उल्लेख नहीं किया है उनके अनुसार भाषा साफ सुथरी है किन्तु कहीं कहीं दार्शनिक चिन्तन के समय गम्भीर हो गई है।[3]

इसी प्रकार मोलवी अब्दुलहक साहब ने भी इनको गुजराती कवि माना है।[4] हाफिज महमूद खाँ साहब शीरानी ने इसको गुजराती कवि व्यक्त किया है। इनके अनुसार कवि द्वारा भाषा के लिये गुजरी का नामकरण उस समय की सामान्य परम्परा थी। नवीन भाषा के नाम करण के इस युग में गूजरी, गुजराती आदि नाम प्रयोग में आ रहे थे।[5]

अन्तर्साक्ष्य से कवि के सम्बन्ध में स्पष्ट संकेतः—अपने जन्मस्थान, समकालीन बादशाह, रचनाकाल आदि के सम्बन्ध में कवि ने स्वकथन के रूप में स्पष्ट संकेत दिया है। मसनवी के अध्ययन से उसके जीवन से सम्बन्धित कतिपय विशेषताओं का भी उल्लेख मिलता है और उसके व्यक्तित्व पर प्रकाश पड़ता है। अमीन को अपनी मातृ भूमि गुजरात और भाषा गुजराती या गुजरी पर स्वाभिमान है। वह घोषणा करता है[6] —

---

१. यूसुफ–जुलेखा–अमीन गुजराती–भूमिका–पृष्ठ ६२
२. दकन में उर्दू (प्राचीन प्रकाशन) पृष्ठ २१५
३ वही " –पृष्ठ २१६
४. यूसुफ–जुलेखा–अमीन गुजराती–भूमिका
५. पंजाबमें उर्दू – पृष्ठ २२
६. यूसुफ–जुलेखा–अमीन गुजराती–पृष्ठ १५ (२२)

सुगो मसनव अहे अब तो अमी का लिखे गुजरी मने यूसुफ-जुलेखा
हर एक जागे किस्सा फारसी मे-अमीन उस कूँ उतारे गूजरी में।
के बूझे हर कदम इसकी हकीकत-बडी है गूजरी जग बीच न्यामत।
इसी प्रकार मसनवी के अन्त मे कवि कहता है—[1]

इलाही तूँ मुझे तौफीक जो दी-तो मैं बी फारसी से गूजरी को।

× × ×

मैं इसके वास्ते कैती मैं गूजरी-हकीकत सब अदा होवे अनू को॥

कवि की उक्त गर्वोक्तियों से स्पष्ट हो जाता है कि यह गुजरात का ही कवि हो सकता है। गूजरी का सम्बन्ध गुर्जर देश से भी जोड़ा जा सकता है जो ग्वालियर राज्य का एक भाग था। सम्भवत. यह भाषा गूजर जातियों में प्रचलित रही हो। इसी कारण कवि ने इसको गूजरी कह दिया होगा लेकिन इतना निश्चित था कि वह गुजरात मे भी बोली जाती थी जिसको दक्खिनी हिन्दी कहा जाता था। क्षेत्रीय भावनाओ से प्रभावित होकर ही इसको गुजराती या गूजरी पुकारा गया था।

इसके अतिरिक्त कवि के समकालीन परिचय ग्रन्थो अथवा अन्य कवियों के द्वारा भी कभी कभी कवि विशेष के जीवन के सम्बन्ध मे कुछ सकेत मिल जाया करते हैं। अमीन का एक समकालीन कवि मोहम्मद फतेह था। वह भी गोघरे का ही निवासी था और यूसुफ-जुलेखा लिखना चाहता था लेकिन वहाँ की जामा मसजिद मे जब उसको यह ज्ञात हुआ कि अमीन ने पहले ही इसको पद्यबद्ध कर दिया है, उसने अपनी पुस्तक का नाम यूसुफ सानी या 'जुलेखा सानी' रखा था। उसने भी अपने को और अमीन को गोघरा का कवि माना है। वह अपनी रचना 'युसुफ सानी' मे कहता है—[2]

सुन मोहम्मद तु फतेह मुज सी यै बात-गोघरे के बीच तु है नेक जात

अमीन ने अपनी एक रचना 'साकी नामा' मे उल्लेख किया है कि उसने अपनी मसनवी यूसुफ जुलेखा को वृद्धावस्था मे लिखा था। उस समय वह बुढ़ापे के कष्टो से पीड़ित था। कवि कहता है—[3]

पिला साकी शराब अर गवानी-अमी कूँ दे के फिर पकडे जवानी
जईफी जात की जावे सो सब टल-आवे हातो पगू में फेर कर बल

---

१. यूसुफ-जुलेखा अमीन गुजराती-पृष्ठ १७० (१९३ हस्तलिखित)
२. " " भूमिका-पृष्ठ१३
३. यूसुफ-जुलेखा-अमीन गुजराती-पृष्ठ११
(अंजुमन इस्लाह उर्दू रिसर्च इंस्टीट्यूट बम्बई की प्रति)

बदन सब हो गया है ला जारदी-हुआ युग जाफरी मानिन्द जर्दी

उपर्युक्त सामग्रियों पर विचार करने से यह निश्चित हो जाता है कि कवि का पूरा नाम शेख मोहम्मद अमीन और उपनाम 'अमी' था। वह गोग्रा-गुजरात का निवासी था। अन्त में उसने दक्खिन भारत की यात्रा की थी और कुछ समय तक औरंगाबाद में भी रहा था। इसी कारण दक्खिनी कवियों में इसका भी नाम लिया जाता है। वह मुगल कालीन कवि था। और औरंगजेब का समकालीन था। उसने किसी फारसी काव्य से यूसुफ जुलेखा को प्रेम कहनी को पद्यबद्ध किया था। लेकिन फारसी कवि का नाम नहीं दिया है। फारसी में 'फिरदौसी' जामी नाजिम हवी की रचनायें लिखी जा चुकी थी। अधिकांश लोगों ने 'जामी' का यूसुफ-जुलेखा को ही इसका आधार माना है यह बात विश्वास के साथ नहीं कही जा सकती है। सम्भव है इसी काव्य रूप के लिए फारसी रचनाओं को 'कलाम पाक' को अपना मूल आधार बनाया हो। डा० ज़ोर तथा राहुल जी ने दिल्ली के अमीर खुसरो की यूसुफ-जुलेखा को आधार माना है जो उक्त विद्वानों का अनुमान ही है क्योंकि इसके लिए पुष्ट प्रमाण नहीं दिये गये हैं और न खुसरो की रचना का कहीं उल्लेख है। कवि ने अपनी भाषा को गूजरी माना है और इसकी घोषणा अपनी रचना में कई बार किया है। इस काव्य की रचना वृद्धावस्था में हुई थी। कवि एक सच्चा सूफी कवि था। और अलौकिक प्रेम में विशेष रुचि रखता था। वह इस्लाम का सच्चा अनुयायी और शरीअत का मानने वाला था कवि कादरिया सम्प्रदाय मे दीक्षित था तथा पीर माहीउद्दीन जिलानी का मुरीद था। वह सुन्नी मुसलमान था और उसने चार खलीफाओं का वर्णन किया है। साथ ही मोहम्मद साहब के वंश और उनके परिवार का उल्लेख किया है।

कवि का व्यक्तित्व—प्रस्तुत प्रेमाख्यान मे कवि के स्वकथन के रूप में कुछ पंक्तियाँ ऐसी प्राप्त होती हैं जिनसे कवि के व्यक्तित्व पर स्पष्ट प्रकाश पड़ता है। इन पर विचार करने से स्पष्ट होता है कि कवि धर्मनिष्ट व्यक्ति और पक्का सूफी था। एकेश्वरवाद मे उसका अटूट विश्वास था। मूर्ति पूजा का तिरस्कार नहीं माना है। छल कपट, अहंकार से सर्वथा मुक्त था। वह झूठी प्रशंसा में विश्वास नहीं करता था। पवित्र एवं सादा जीवन उसे विशेष प्रिय था। लौकिक प्रेम की अपना आध्यात्मिक तथा अलौकिक प्रेम को विशेष महत्व दिया है। कवि ने विभिन्न सांसारिक संकटों एवं यातनाओं का कारण लौकिक प्रेम को ही स्वीकारा है। दोनों प्रेम को एक साथ परसने हुए कवि कहता है[1]—

अरे बन्दे हकीकी इश्क जानो-मजाजी इश्क कूँ दिल पर न आनो।

---

1. यूसुफ-जुलेखा-अमीन गुजराती-पृष्ठ 13

इसी प्रकार कवि आगे कहता है -[1]

हकीकी इश्क का है मरतबा रे-मजाजी इश्क तो झूठी बला रे।

इस प्रकार कवि ने एक मात्र अल्लाह से ही प्रेम करने का सुझाव दिया है। जुलेखा की यातनाओं का कारण अल्लाह पर ईमान न लाना और मूर्ति पूजा ही है। अन्त में जब वह एक ईश्वर पर ईमान लाती है और अपनी मूर्तियों को तोड डालती है तभी परमात्मा उससे प्रसन्न होता है और उसे उसका प्रियतम मिल पाता है।

(२) कवि छल कपट और अहंकार का विरोधी है उसने स्पष्ट भी कर दिया है[2]—

अभों तू कुच गरूरी न करे रे-तकब्बुर दिल के भीतर न धरे रे
भला तू होयगा तेरा दो जग माँ-जन्नत बीच जायगा तू एक दम माँ

× × × ×

अरे यारो न रखो दिल म कर-रखा जिन कूर सो हक के समीव
कपट करतार अल्लाह नूँ ना भावे-कपट दरगाह हकं मे ना समावे
कुपुत और कूर दिल में सूँ निकालो-दगाबाजी के भीतर दिल न डालो
दगाबाजों का आखिर कुछ भला नहीं- दगाबाजी जैसी दूजी बला नहीं
दगा कीने जो यूसुफ के भाइयों ने-वो देखो शर्मिन्दा आखिर हुये क्यों

इसी प्रकार स्वयं हजरत यूसुफ ने भी एक दिन अहंकार से पीडित होकर आइना में अपना रूप देखकर अपने को अमूल्य समझ लिया था। अत. अल्लाह उनके इस व्यवहार से असंतुष्ट हो गया था और उनको खोटे पैसे में बिकना पड़ा था। अत. अहंकार के प्रति कवि कहता है[3]—

गरूरी का प्याला जिन पिया है-उने अपने सर ऊपर दुख लिया है

× × × ×

गरब उस हक के ताला कूँ न भाया-यूसुफ कूँ खोटे दरमों सूं बुकाया

(३) कवि का अल्लाह के ऊपर अटूट विश्वास था। कवि कहता भी है[4]—

यकी जो कोई अल्लाह पर न ल्यावे-मुरादाँ वे कभी जग मे न पावे
फिरे दोनो जगत मे ना मुरादी-न होवे उसके तई एक जर्रा शादी

---

१ यू॰ जु॰ अंजुमन उर्दू रिसर्च इंस्टीट्यूट बंबई की पोथी-पृष्ठ ६
२. वही-पृष्ठ ७७
३. वही-पृष्ठ ९२ (४०, ४१
४. वही-पृष्ठ २४६ (११३)

जुलेखा लाई अल्लाह पर यकीं जब-किया यो हक ताला ने करम तब।

अल्लाह पर अटूट विश्वास व्यक्त करने के उद्देश्य से ही कथानक मे बाजिग का प्रसग रूप मे वर्णन किया गया है।

(४) कवि एक सत्यनिष्ट व्यक्ति था। अत उसने अपने आख्यान में स्थान स्थान पर सत्यासत्य पर अपना विचार व्यक्त किया है--

अरे यारा तुम्हें झूटज न बोलो-वगैर अज साँच अपने लब न बहू लो
सच्चा दो जग मे पावे खलासी-झूठा दोनों जगत में बीच हांसी
सचे कों हक ताला देगा यारी-अके झूठी के तई दोनों हैं ख्वारी

(५) अमीन एक शुद्ध मानव भी था। अतः हास्य एव व्यग्य के भाव से भी पूर्ण था। अपने समकालीन कवि मोहम्मद फतेह के प्रति वह कहता है--[1]

अमीन पीवे प्याला मस्त होवे-रकीब अफसोस खा कर लुप्त होवे
× × ×
अमीन कूँ दे प्याले हुये खरम-रकीबाँ निलमिला के खायें सब गम
× × × ×
मुरादा दिल के भीतर है सो पावे-पँ आये रकीबूँ कूँ दकावे
रकीबाँ देख उस कू जल मरे सब-बोन अफसोस मल मन करे सब

रचनायें :--कवि की निम्नलिखित रचनाओं का उल्लेख मिलता है इनमे उसकी प्रसिद्ध प्रेमाख्यान यूसुफ-जुलेखा ही है जो हमारी आलोच्य रचना है।

(१) नबल्लद नामा--

यह अमीन की दूसरी मसनवी है। इसमे हजरत मोहम्मद साहब के जन्म से लेकर मृत्यु तक का विवरण पद्यबद्ध है। यह मसनवी चार भागों मे है। प्रथम में उनका जन्म तथा बाल्यावस्था का विवरण है। द्वितीय मे युवावस्था, हिजरत, हजरत खदीजा से विवाह का प्रसग है। तृतीय भाग में मेराज शरीफ और चतुर्थ मे मृत्यु का समाचार अंकित है। इस प्रसग मे अपने युग की सामाजिक व्यवस्था, रीति रिवाज का वर्णन भी किया है। कहीं कहीं सुन्दर व्यग्य भी है। काव्य की भाषा के सम्बन्ध मे कवि मौन सा है। इसका वर्णन विस्तार पूर्वक डा॰ मोहम्मद अब्दुल हमीद फारूकी साहब ने भी दिया है।[2]

(२) नातिया कसीदा--

इसका उल्लेख हकीम शमसुल्लाह कादरी साहब ने किया है। उनके अनुसार

---

१. यूसुफ-जुलेखा-अमीन गुजराती भूमिका-पृष्ठ ११३
२. उर्दू ए कदीम-पृष्ठ ५१

इसकी रचना सन् १६८७ ई० में हुई थी। इसकी एक हस्तलिखित प्रति का भी उल्लेख उन्होंने किया है।[1] यह गुजरी भाषा में लिखी गई है। इसमें इस्लाम के पैगम्बर मोहम्मद साहब का परिचय और उनकी प्रशंसा के गीत है। डा० फारूकी साहब इससे सहमत नहीं हैं।[2] इसका उल्लेख किसी अन्य परिचय ग्रंथ में नहीं किया गया है।

(३) मौलवी करीमउद्दीन साहब ने इनके अन्य ग्रन्थ 'साकी नामा' का भी उल्लेख किया है।[3] किन्तु डा० फारूकी साहब ने इस स्वतंत्र ग्रन्थ का उल्लेख न करते हुए भी इससे उद्धरण दिया है। अपने प्रत्येक शीर्षक का आरम्भ 'साकी नामा' से किया है जो इस ग्रंथ की ओर कुछ संकेत अवश्य करता है। इसका कोई पृथक रूप प्राप्त नहीं हुआ है।

मोतबर खां 'उमर' और उनका यूसुफ जुलेखा काव्य—

कवि परिचय—उमर दक्खिनी हिन्दी के अन्तिम कवि कहे जाते हैं। वह वली दकनी का शिष्य था। उसके गुरु को उर्दू कविता का प्रथम कवि माना जाता है। वह औरंगाबाद का प्रसिद्ध कवि था किन्तु उसके सम्बन्ध में विशेष जानकारी प्राप्त नहीं हो सकी है। तत्कालीन तथा आधुनिक परिचय ग्रन्थों में इसका विस्तार से परिचय नहीं मिलता। विभिन्न स्रोतों से उसके सम्बन्ध में निम्नलिखित विवरण ही दिया जा सकता है।

जन्म एवं निवास स्थान—

अधिकांश कवियों तथा आलोचकों ने उसका निवास औरंगाबाद में सिद्ध किया है और यहीं पर उसका जन्म हुआ था। मोहम्मद अब्दुल जब्बार खाँ साहब मलकापुरी के अनुसार उसके पूर्वज भारतीय थे और औरंगजेब के शासन काल में औरंगाबाद आये थे। यहीं पर 'उमर' का जन्म हुआ था। वे औरंगजेब के वैधानिक अधिकारी भी थे। इसी औरंगाबाद में उनका अन्तकाल भी हुआ था और यहीं पर उनकी कब्र भी है।[4]

सखावत मिर्जा साहब ने हैदराबाद के रेकार्ड आफिस से प्राप्त 'तज़किरा रियाज हसी' का सदर्भ देते हुए इनायतुल्लाह 'फनूनी' साहब का मत प्रस्तुत करके

१. यूसुफ-जुलेखा-अमीन गुजराती भूमिका-पृष्ठ १३७
२. सब का तुरशीअरा भाग ३-पृष्ठ ७
३ यूसुफ-जुलेखा-अमीन गुजराती-पृष्ठ ५८, ६१, ८०
४. तज़किरा शोअराये दकन भाग २-पृष्ठ ८२४

लिखा है कि वे अहमदाबाद, गुजरात के रहने वाले थे। इस कथन से दक्षिण के विद्वान सहमत नहीं हैं[1] मिर्जा साहब आगे और लिखते हैं कि सम्भवतः उमर गुजरात के अहमदाबाद में पैदा हुए हों और बचपन वहीं बीता हो। मिर्जा साहब के कतिपय श्रद्धालुओं ने भी उनके मत का समर्थन किया है। किन्तु उसके लिए पुष्ट प्रमाण नहीं दिया है। उनकी रचना यूसुफ-जुलेखा की विभिन्न प्रतियों की भाषा, एवं वर्णन शैली से स्पष्ट हो जाता है कि वे दक्खिनी औरंगाबाद के ही कवि थे औरंगाबाद के ही लछमी नारायण शफीक ने इस कवि का विशेष परिचय नहीं दिया है और इसे एक आश्चर्य की बात कहा जा सकता है। नसीरुद्दीन हाशमी ने भी उनको औरंगाबाद का ही कवि माना है।[2] अत उनको औरंगाबाद का कवि मानने में कोई संकोच नहीं होना चाहिए।

जन्म तथा मृत्यु तिथियां :—

उमर के जन्म के सम्बन्ध में सभी लेखक मौन हैं कवि ने भी अपनी रचना में इसका संकेत नहीं किया है। अत इस सम्बन्ध में कुछ नहीं कहा जा सकता है। मृत्यु के सम्बन्ध में भी मतभेद पाया जाता है। डा० मोहीउद्दीन कादरी 'जोर' ने उनकी मृत्यु तिथि १७३० ई० दिया है किन्तु इसके लिए कोई पुष्ट प्रमाण नहीं प्रस्तुत किया है।[3] श्री सखावत मिर्जा साहब विभिन्न स्रोतों के आधार पर उनकी मृत्यु तिथि १७५१ के पूर्व मानते हैं।[4] यह भी एक उलझा हुआ विचार ही कहा जा सकता है। मोहम्मद अब्दुल जब्बार खाँ साहब ने पूर्ण विश्वास के साथ उनकी मृत्यु तिथि १७७३ ई० घोषित किया गया है।[5]

स्टेट सेन्ट्रल लाइब्रेरी की प्रति १८८६ ई० में लिखी गई थी जो कवि की मृत्यु तिथि सन् १७७४ ई० सिद्ध होती है। अत अब्दुल जब्बार खाँ की तिथि १७७३ ई० उचित कही जा सकती है।

समकालीन कवि तथा शासक —

श्री सखावत मिर्जा साहब ने मानिक चन्द द्वारा लिखित दास्ताने आसफिया

---

१. 'उर्दू-अदब' त्रयमासिक पत्रिका अप्रैल सन् १९७०-पृष्ठ ७५
२. स्टेट सेन्ट्रल लाइब्रेरी हैदराबाद में उर्दू मखतूतात भाग १-पृष्ठ ८१
३. तारीख अदब उर्दू-पृष्ठ ४९
४. 'उर्दू अदब' त्रयमासिक पत्रिका, अप्रैल सन् १९७० पृष्ठ ७५
५. तजकिरा मोराते दकन भाग २-पृष्ठ ८२४

भाग १' का सदर्भ देते हुए लिखा है कि 'उमर' निजामुल मुल्क आसिफजाह (१७४७ ई०), नवाब नासिरजग (१७५० ई०), सलावत जग मनूरी (१७६३ ई०) मीर निजाम अली खाँ आसिफजाह सानी (१७६४ ई०-१८०३ ई०) के समकालीन थे ।[1] उनके समकालीन कवियों के नाम शाह सरोज, आजिज, दाऊद, कासिम, शफीक औरगाबादी थे ।

गुरु –

प्राय सभी विद्वानों ने इनको वली दकनी का शिष्य माना है 'उमर' के समकालीन तथा समस्थानीय कवि लक्ष्मी नारायण 'शफीक' औरगाबादी ने उनको वली का शिष्य मानते हुए सरस रचनाकार घोषित किया है । उन्होंने उमर के सम्बन्ध मे निम्नलिखित पक्तियाँ भी कह डाली है–[2]

> मस्त वह है कि रोज महशर मे–उठ के पूछे यह मल गिला क्या है ।
> गर नहीं मेरे सईद के काविल–तिल बिलाने का मदआ क्या है ।

उक्त पक्तियो के अतिरिक्त शफीक साहब ने कुछ और पक्तिया नहीं लिखा है । अत बड़े आश्चर्य के साथ कवि के सम्बन्ध मे मौन हो जाना पडता है । इनके अतिरिक्त मोहम्मद जब्बार खाँ साहब ने बडे विश्वास के साथ उनको वली दकनी का शिष्य माना है । वली की शिक्षा और निर्देशन से 'उमर' के हृदय मे काव्य के प्रति प्रेम उत्पन्न हुआ था । और काव्य रचना की ओर आकर्षित हुये थे । गुरु की कृपा से ही अपने समकालीन कवियों मे उनका विशेष स्थान हो गया था । उनकी उस सुन्दर कविता से आज भी लोग लाभान्वित होते हैं ।[3] श्री इनायतुल्लाह साहब ने उनको वली गुजराती का शिष्य माना है ।[4] इससे यह स्पष्ट हो सकता है कि 'उमर' वली के शिष्य थे । यह वली चाहे दकन के हो चाहे गुजरात के । जिस 'वली' को रेख्ती या उर्दू की कविता का बाबा आदम माना जाता है वही हमारे इस 'उमर' कवि के गुरु रहे हैं और उन्ही का मार्गदर्शन इनका मिला था । कवि की काव्य प्रतिभा के विकास तथा काव्य निर्माण में उनके गुरु 'वली' का विशेष योगदान रहा है । इसका समर्थन डा० जोर तथा फतेहखाँ ने भी किया है ।[5]

---

१. उर्दू अदब–अप्रैल सन् १९७०–पृष्ठ ७९
२. चमनिस्ताये सोराये उर्दू–पृष्ठ ४१५
३. तजकिराये शोराये दक्न भाग–२–पृष्ठ ८३४
४. उर्दू अदब – अप्रैल १९७० ई०–पृष्ठ ७४
५. वही पृष्ठ ७३

रचना —'उमर' की केवल एक ही प्रसिद्ध रचना मसनवी यूसुफ-जुलेखा है। इसकी विभिन्न प्रतियाँ दक्षिण के पुस्तकालयों में हैं। इससे उसकी लोकप्रियता का अनुमान होता है। इसका विशेष परिचय आगामी अध्याय में दिया जायगा। इसके अतिरिक्त डा॰ जोर ने इनको मरसिया लेखक बताया है। किन्तु उनकी मरसिया का कोई संग्रह प्राप्त नहीं हुआ है और न ही किसी अन्य लेखक ने इसका उल्लेख किया है।

व्यक्तित्व :-

कवि कोमल स्वभाव का व्यक्ति था। स्वभाव में अपनत्व तथा सेवा भाव विद्यमान था। सज्जनों तथा धर्मनिष्ट लोगों का विशेष आदर करते थे। बातचीत में मुँह से फूल झड़ते थे। मिलनसार-प्रकृति से लोग विशेष प्रभावित थे। उनका यही व्यक्तित्व उनके काव्य में भी समाया हुआ है।

दक्खिनी यूसुफ-जुलेखा की हस्तलिखित प्रतियाँ, रचनाकाल एवं प्रेरणा

मीरा हाशमी की यूसुफ-जुलेखा–

दक्खिनी हिन्दी में लिखा गया यह प्रथम यूसुफ जुलेखा प्रेमाख्यान काव्य है। यह फारसी लिपि में लिखा गया है। बड़े दुर्भाग्य की बात है कि यह अभी तक देवनागरी लिपि में प्रकाशित नहीं किया जा सका है। दक्षिण में हिन्दी प्रचार सभा हैदराबाद तथा 'इदारा अदबियात उर्दू' के संयुक्त प्रयास से एक संस्था दक्खिनी साहित्य प्रकाशन समिति की स्थापना की गई है। इसके कार्यकर्ताओं के प्रयास से हिन्दी साहित्य में कुछ प्रकाशित किया गया है। सम्भव है निकट भविष्य में 'हाशमी' की यूसुफ-जुलेखा भी प्रकाशित हो जाय। इसकी विभिन्न हस्तलिखित प्रतियाँ भारत तथा यूरोप के विभिन्न पुस्तकालयों में विद्यमान हैं इनका विवरण निम्न है—

(१) हकीम सैयद शमसुल्लाह कादरी के अनुसार इसकी हस्तलिखित पोथियाँ जर्मनी के ओरियण्टल पुस्तकालय में विद्यमान हैं।[१] इसका उल्लेख किसी अन्य लेखक ने नहीं किया है। नसीरुद्दीन हाशमी साहब ने अपनी पुस्तक 'यूरोप में दक्नी मख़तूतात में इसका विवरण नहीं दिया है। स्वयं डा० जोर भी इसको प्राप्त करने में सफल नहीं हो सके थे। यद्यपि जर्मनी में इसके होने का अनुमान उन्होंने भी लगाया है।[२]

(२) इसकी एक हस्तलिखित पोथी हकीम सैयद शमसुल्लाह कादरी के भी पास थी। जिसका उल्लेख उन्होंने स्वयं किया है जो ११ रबीउल अव्वल सन् ११८७

१. उर्दू ए कदीम-पृष्ठ ९१

२. उर्दू शहपारे भाग १-पृष्ठ ७२

हि० तदनुसार १७७३ ई० की लिखी हुई है।[1] इसका अब कोई पता नहीं है।

(३) नसीरुद्दीन हाशमी साहब ने अपने पारिवारिक पुस्तकालय में भी इसकी एक प्रति होने का संकेत किया है जो इब्राहीम अब्दुल्लाहों का लिखा हुआ है किन्तु अपनी बाद की रचना में इसका कोई संकेत नहीं किया है। मैंने स्वयं हैदराबाद में उनके पारिवारिक पुस्तकालय 'हयातीन दक्न लाइब्रेरी एवं रिसर्च सेन्टर' में जाकर इसका पता लगाया है। यह पोथी वहाँ विद्यमान नहीं है। उनके पुत्र ने बताया कि मेरे पिता ने 'अदारा अदबियात' के संस्थापक डा० मोहीउद्दीन कादरी साहब को यह पोथी दे दिया था किन्तु वहाँ भी इस समय विद्यमान नहीं है।

(४) इसकी एक प्रति निजामी कालेज के भूतपूर्व प्रोफेसर आगा हैदर हुसेन साहब के पुस्तकालय में है डा० एजाज हुसेन ने भी इसका उल्लेख किया है। उक्त हैदर हुसेन साहब दिल्ली के निवासी हैं।[2] नसीरुद्दीन हाशमी ने भी इसका उल्लेख किया है।[3] मैंने स्वयं हैदराबाद में बजारा हिल पर स्थित उनके निवास स्थल पर उनका व्यक्तिगत संग्रहालय तथा पुस्तकालय देखा। आगा साहब ने बताया कि मेरे पास भी इसकी एक हस्तलिखित पोथी विद्यमान है किन्तु वह यथानुसार नहीं रखी है। अतः ६ हजार पोथियों में उसको ढूँढ निकालना असम्भव था इससे यह सिद्ध होता है कि उनके पास इसकी एक हस्तलिखित पोथी अवश्य है।

(५) सैयद मीरा उपनाम 'हाशमी' की 'यूसुफ जुलेखा' की हस्तलिखित पोथी दक्नी भाषा में हैदराबाद के 'स्टेट सेन्ट्रल लाइब्रेरी' में विद्यमान है। इसके स्वामी अली आदिलशाह सानी रहे हैं। इस पोथी पर 'हाशमी' को सैयद शाह हाशिम अलवी का मुरीद बताया गया है। जो स्वयं वजीहुद्दीन साहब गुजराती के भतीजे थे। यह रचना पीर हाशिम शाह के अन्तकाल के ४३ वर्ष बाद १०९९ हि० में समाप्त हुई थी। यह पोथी ११६६ हि० की लिखी हुई है। और कवि के अन्तकाल के अधिक निकट की है। इस पोथी को मोहम्मद अमीमुद्दीन पुस्तक विक्रेता मालगुजारी रोड हैदराबाद ने केवल २२५) में बेचा था। लाइब्रेरी में उसकी पोथी संख्या ४६७ है। इसमें कुल २४४ पन्ने अथवा ४८८ पृष्ठ हैं। नाप ९"×६' है प्रत्येक पृष्ठ में ११ शेर हैं। इसका कागज देशी और मजबूत है। सुन्दर उर्दू में है ने के कारण पढ़ने में कोई कठिनाई नहीं होती है। कहीं कहीं नष्ट भाग पर पारदर्शक कागज लगाकर इसका पठनीय बना दिया गया है। पोथी बड़ी दुर्लभ है किन्तु मजबूत

---

१ उर्दू-ए-कदीम-पृष्ठ ८१

२. उर्दू साहित्य का इतिहास डा० एजाज हुसेन-पृष्ठ ११

३. दकन में उर्दू (प्राचीन प्रकाशन,-पृष्ठ २१५

जिल्द मे उसको सुरक्षित रखा गया है। अन्त में उसके लेखक तथा लेखन तिथि का उल्लेख निम्नलिखित रूप मे किया गया है।

तम्मम तमाम शुद कारेमा निजाम शुद—

अज कातबुल हुरूफ शेर मोहम्मद साकिन पहदा माहूर बराये खान्दन बर-खुरदार हबीब मोहम्मद खाँ नविश्ता शुद माने शम्दा सन् ११६९ माह जमादिउल आखिर बतारीख हफ्तम रोजे आदीना तमाम शुद, तमाम शुद तमाम शुद"

साफ सुन्दर लिपि में तथा पठनीय होने के कारण मैंने इसका भी उपयोग किया है और कुछ उदाहरण भी दिया है। नसीरुद्दीन हाशमी ने भी इसका परिचय दिया है।[1]

(६) उस्मानिया विश्व विद्यालय के पुस्तकालय मे यूसुफ-जुलेखा की एक खंडित प्रति विद्यमान है जिसकी संख्या अलिफ काफ ८९१-४३३१ है। इसका आकार ७×४½ इन्च है इसके रचयिता का नाम सैयद हाशमी है, रचना तिथि १०८८ हि० अंकित है। प्रति के लेखक का नाम नहीं लिखा गया है और न स्थान और तिथि है आरम्भ और अन्त के लगभग १५० पृष्ठ नहीं हैं। सम्भव है इसमें इसके लेखक का विवरण रहा हो। वर्तमान प्रति में १९२४ शेर कम हैं। प्रत्येक पृष्ठ पर १५ शेर हैं। चारो ओर रंगीन हाशिया बना हुआ है। दो शेरों के बीच में रंगीन लाइन खीची हुई है। लिपि बहुत भ्रष्ट है और कचहरी की घसीट वाली उर्दू लिपि मे लिखी गई है। हस्तलिखित पोथी पढ़ी जाती है और उसको मजबूत जिल्द बाधकर सुरक्षित रखा गया है। मैंने इसका विधिवत अवलोकन किया है। किसी अन्य में इसका उल्लेख नहीं किया है।

(७) सालारजंग संग्रहालय हैदराबाद के पुस्तकालय के हस्तलिखित पोथियों के विभाग मे हाशमी की यू० जु० की एक सादी हस्तलिखित पोथी है जो अपने मे पूर्ण है वह धार्मिक कहानियों की पोथियों म सुरक्षित है जिसकी संख्या १९ है उसका आकार १०×६ इन्च है। इसमें कुल ३७३ पृष्ठ हैं। प्रत्येक पृष्ठ पर १५ पंक्तियाँ हैं। नस्तालिक उर्दू लिपि मे और देशी कागज पर लिखी हुई है जो भली प्रकार पठनीय है यद्यपि पढने मे कठिनाई होती है। मैंने इसका उपयोग विशेष रूप से किया है। यह पोथी मजबूत जिल्द मे सुरक्षित रखी गई है कहीं कहीं कीडो का आक्रमण हो गया है अन्त का एक पृष्ठ नष्ट हो गया है। इसके प्रथम पृष्ठ का चित्र संलग्न है।

---

१. स्टेट सेन्ट्रल लाइब्रेरी मे उर्दू मखतूतात भाग १, क्रम संख्या १९३-पृष्ठ ८८

८- सालारजंग के संग्रहालय हैदराबाद के हस्तलिखित पोथियों के विभाग में हाशमी की यूसुफ जुलेखा की एक दुर्लभ तथा सचित्र हस्तलिखित पोथी भी विद्यमान है। जिसकी संख्या २० है। इसका प्रथम पृष्ठ नष्ट हो गया है किन्तु अन्तिम पृष्ठ वर्तमान है। इसका आकार ९३×५३" है इसमें कुल ४६१ पृष्ठ हैं, प्रत्येक पृष्ठ पर १३ पंक्तियाँ हैं। वास्तविक उर्दू लिपि में मजबूत तथा उत्तम प्रकार के देशी कागज पर लिखी गई है। इस पर चारों ओर सुनहरा काम किया हुआ है। इसमें विभिन्न शीर्षक की मुख्य घटनाओं की व्याख्या करने वाले सुन्दर काल्पनिक चित्र बनाये हुए हैं। इसमें इस प्रकार के कुल ६६ चित्र हैं। ये सभी चित्र दक्षिण शैली के हैं चित्र भिन्न-२ आकृति और नाप के हैं कुछ पूरे पृष्ठ पर हैं कुछ आधे पर और कुछ चौथाई पर हैं। अधिकांश चित्र शीर्षक के प्रारम्भ में ही है। पुस्तक मजबूत जिल्द में बाँध कर सुरक्षित रखी गयी है और कठिनाई से प्राप्त होती है। लाइब्रेरियन की कृपा से मैंने उसका उपयोग किया है। उसका एक चित्र संलग्न है जिसमें जुलेखा के प्रथम स्वप्न की झलक दी गयी है।

९- निजाम कालेज हैदराबाद में उर्दू विभाग के रीडर तथा 'अदारा अदबियात उर्दू' हैदराबाद के माननीय मन्त्री श्री अकबरुद्दीन सिद्दीकी ने पूर्ण विश्वास के साथ बताया कि हाशमी की यूसुफ-जुलेखा की तीन हस्तलिखित पोथियाँ ओरिएंटल रिसर्च इन्स्टीट्यूट मैसूर विश्व विद्यालय के पुस्तकालय में विद्यमान हैं उनकी संख्या ११७, ५४८ और ५८५ है। किसी अन्य लेखक ने अपनी रचनाओं में इसका उल्लेख नहीं किया है। किन्तु सिद्दीकी साहब ने उसको वहाँ देखा था मैंने इस सम्बन्ध में उनसे विस्तार से बातचीत भी की थी। सम्भव है कि प्राचीन टीपू सुल्तान तथा उसके पूर्वजों ने उसकी प्रतियाँ तैयार कराई हों जो अब उक्त पुस्तकालय में आ गयी हों।

१०- अब्दुल्लाह बुरहानुद्दीन साहब के पुस्तकालय में मीरा हाशमी की एक खंडित प्रति थी जिसको प्रो० नजीब अशरफ साहब ने देखा था। आरम्भ और अन्त के कुछ पन्ने अब समाप्त हो गये हैं। मेहरबी की प्रशंसा में काव्य का आरम्भ हुआ है। इसमें १४५ पन्ने हैं और प्रत्येक पृष्ठ पर १८ पंक्तियाँ हैं। बीच-बीच में लाल रोशनाई से २५ शीर्षक दिये हुए हैं हर लाल शीर्षक दो पंक्तियों के हैं। इसमें कुल ४८६० शेर हैं शीर्षक उर्दू गद्य में है। इससे पूर्व शीर्षक पद्य में दिये जाते थे। प्रायः शीर्षक फारसी में दिये जाते थे। यह पोथी पालनपुर के नवाब की सहायता से नजीब साहब को प्राप्त हुई थी।[1]

---

१. 'नैरंग खयाल' ईद, नवम्बर १९३१ फरवरी, मार्च, जिल्द ११, अंक ८०, ८१ करीमी प्रेस लाहौर-पृष्ठ ११६

काव्य की रचना तिथिः—

इसकी रचना आदिल शाही शासन के अन्त में एक वर्ष बाद में पूरी हुई थी। यह भी कहा जाता है कि सैयद शाह हाशिम बीजापुरी की मृत्यु के ४ वर्ष बाद में इसकी रचना हुई थी। इस प्रकार उसकी रचना तिथि १६८७ ई० में तो निश्चित है। अनेक विद्वानों ने इसी का समर्थन किया है। अन्तरसाक्ष्य से भी इसका समर्थन हुआ है। स्वयं कवि ने अपनी मसनवी यूसुफ-जुलेखा में इसकी रचना तिथि दे दिया है। इसके अनुसार इसका रचना वर्ष सन् १०९९ हि० तदनुसार १६८७ ई० ही है।

मुस्तव किया मैं यूं किस्सा कूं तो-हजार दरस पर जो ये नौवन धोनो[1]

हाशमी के यूसुफ-जुलेखा काव्य का आधार एवं शेरों की संख्या

यह दक्खिनी हिन्दी का विशालकाय काव्य है। अधिकांश विद्वानों ने इसमें शेरों की संख्या ६००० से अधिक व्यक्त किया है इनमें सैयद शमसुद्दीन कादरी और डा० रामबाबू सक्सेना का नाम मुख्य रूप से लिया जा सकता है। सैयद एहतेशाम हुसेन ने इसमें शेरों की संख्या लगभग १२ हजार होने का अनुमान लगाया है।[2] जो केवल अनुमान ही कहा जायगा। स्वयं हाशमी ने अपने काव्य के अन्त में रचना तिथि के बाद शेरों की संख्या भी व्यक्त कर दिया है—

अगर कोई पत्तो का पूछे सुमार-एक सद ऐसे सात हैं पंज हजार

इसको देखकर यह स्पष्ट हो जाता है कि इसमें कुल ५ हजार १ सौ सात (५१०७) शेर हैं इतनी स्पष्ट सूचना देने पर भी डा० दशरथराज ने शेरों की संख्या ६००० से अधिक घोषित किया है।[3] कदाचित इनको मूल काव्य देखने को नहीं मिला या केवल शमसुल्लाह कादरी का ही अनुकरण कर लिया है। इतना निश्चित है कवि ने इसकी रचना दीर्घकाल में की थी और यह दक्खिनी का महान काव्य है दक्षिण भारत के विविध पुस्तकालयों में विद्यमान विविध हस्तलिखित पोथियों से उसकी लोकप्रियता का पता चलता है।

काव्य प्रणयन की मूल प्रेरणा एवं आधार—

हाशिम ने अपने मुर्शिद-सैयद शाह हाशिम की फरमाइश पर इस प्रेमाख्यान को पद्यबद्ध *किया था।*[4] *काव्य* में इसका विस्तार से वर्णन है हाशिम शाह ने

---

१. यूसुफ-जुलेखा-मीरा हाशमी, स्टेट सेन्ट्रल लाइब्रेरी हैदराबाद की पोथी संख्या ४६७-पृष्ठ २४४

२. उर्दू *साहित्य* का इतिहास-सैयद एहतेशाम हुसेन-पृष्ठ ४४

३. दक्खिनी हिन्दी का प्रेमगाथा काव्य-पृष्ठ २१४

४. उर्दू ए कदीम-पृष्ठ ८१

कहा था कि-[1]

हर एक कवि बोले अछे पुर हुनर-हुमर बन्द खुशनूद है उस उपर
तेरे शेर दकनी का है जग मे नाव-न को मौत का दूसरी बोली मिजाज
अव्वल वज्द कर दकनी बोली उपर-मुझे यूँच हाशिम कहा सर बसर
दिया शाह हाशिम को मैं यूँ जबाब-मुझे कां सकत है जो बोलूँ किताब

इस पर पीर साहब ने कहा है--

जबक जग म चांद होर आफ्ताब-तलक रहेगा अनबर हो तेरा किताब
जबक रहेगी जेती दुनिया की नार-गले मे तलक रहेगा किस्से का हार
कहा सुन मेरा तुज को ईमान है-तुझे हाशमी हुक्म ले मान है
कहा शाह हाशिम न मुझे यूँ नवाज-दिया दान इमान कर सर फराज
इनायत का जब मुज पे खोलिया यूँ बाब-मन किया करने तब मैं मुरत्तब किताब[2]

× × × ×

तेरे हुक्म को लाया करम का अ जत-दिखाया तुझे सब हुनर का सोधम
कि तुज दिल है पायल बजे कारे क्रिया-नर हुने दिया गम के जिसका निशा[3]

सम्भव है कि पीर साहब ने उनको विभिन्न भापाओ म रची गई प्रेम गाथाओं का पाठ सुनाया हो। चाहे जो भी हो मुसलमान होने के नाते उन्होने कोरान पाक मे अवतरित यूसुफ और अजीज मिश्र की बीवी का प्रसग अपने पीर से अवश्य सुना होगा इस प्रकार अरबी तथा हेब्रू की इस प्रेम कहानी को अपने काव्य के लिए अवश्य अपनाया है। प० परशुराम चतुर्वेदी जी ने भी व्यक्त किया है कि हाशमी ने अपने काव्य का मूल आधार सामी भण्डार ही माना है।[4] डा० रामबाबू सक्सेना ने भी गुरु के आदेश से ही इसे पद्यबद्ध किया गया लिखा है।[5] एक सूर कवि के लिए गुरू की सहायता लेना स्वाभाविक भी है।

सैयद एहतेशाम हुसेन ने इस काव्य का आधार फारसी की किसी प्रसिद्ध रचना को ही स्वीकार किया है।[6] किन्तु उन्होने स्पष्ट रूप से उस कवि या काव्य का उल्लेख न करके समस्या खडी कर दी है। सम्भवत इसी उल्लेख के आधार पर फारसी की प्रसिद्ध मसनवी 'जामी' की यूसुफ-जुलेखा को ही इसका मूल आधार मानकर डा० कन्हैया सिंह ने अपने प्रबन्ध मे लिखा है।[7] "इसम यूसुफ-जुलेखा को

१. यूसुफ-जुलेखा [सालारजग की प्रति न० १९] पृष्ठ ३७०
२. यूसुफ " " " २० पृष्ठ ४११
३. " " " " १६ पृष्ठ २९
४. हिन्दी के सूफी प्रेमाख्यान-पृष्ठ १४१
५. उर्दू साहित्य का इतिहास भाग १ डा० रामबाबू सक्सेना-पृष्ठ ७७
६. उर्दू साहित्य का इतिहास-सैयद एहतेशाम हुसेन-पृष्ठ ४४
७. हिन्दी सूफी काव्य मे हिन्दू सस्कृति का चित्रण और निरूपण [अप्रकाशित शोध प्रबन्ध]-पृष्ठ ११३

फारसी मे 'जामी' द्वारा वर्णित कहानी को ही अपना आधार बनाया है।" उक्त विद्वानो ने इस तथ्य को ध्यान म नही रखा है कि 'हाशमी' एक सूफ़ मुसलमान कवि था। वह 'कलाम पाक' म अनभिज्ञ नही था। अतः उसने इस सभी साहित्य तथा 'कलाम पाक' को आधार अवश्य बनाया होगा और इस काय मे अपने पीर म सहायता अवश्य ली होगी। सम्भव है कि काव्य स्वरूप प्रदान करने के लिए 'जामी' की यूसुफ-जुलेखा को आधार बनाया हो। यह भी निश्चित था कि 'हाशमी' स्वय सिद्ध एव प्रतिभावान कवि था अत उसमे स्वतन्त्र रूप स मसनवी की रचना करने की क्षमता विद्यमान थी। प्रश्न यह है कि 'जामी' की मसनवी को ही आधार क्यो बनाया गया। इसके अतिरिक्त फिरदौसी नाजिम हर्वी आदि की भी मसनवियो को पर्याप्त ख्याति प्राप्ति थी। अत अनुमान मात्र मे आधार नही निश्चित किया जा सकता है। यह कहने मे सकोच नही होता कि हाशमी ने काव्य का मूल स्रोत 'कलाम पाक' को माना है और मसनवी पद्धति के लिए फारसी के किसी मसनवी को सुन लिया होगा किन्तु अपनी प्रतिभा, स्वतन्त्र चिन्तन एव काव्य कल्पना आदि के द्वारा उसको नवीन जामा पहनाने की चेष्टा की है, जो आगामी हिन्दी कवियों के लिए आदर्श अवश्य रहा होगा। यह निश्चित है कि यह दक्नी भाषा मे है और उस समय नवीन भाषा का निर्माण हो रहा था अत इसमे अनेक नवीन प्रयोग किये जा रहे थे यही कारण है कि पुरानी भाषा का रग उनकी रचना मे बहुत अधिक है।[1] किन्तु उसकी भाषा सरल और लिखने की शैली अत्यन्त सुन्दर है।

कवि ने प्रारम्भ मे ईश्वर की वन्दना मे उसी को प्रेम का मूल आधार माना है। प्रारम्भ मे ही यह सकेत मिलता है कि कवि ने परिश्रम पूर्वक इस काव्य की रचना की है और इसको अपने आश्रयदाता की पसन्द के लिए समर्पित भी किया है। कवि को बादशाह की प्रसन्नता का भी विशेष ध्यान है। वह स्वामी के सम्मुख प्रेम एव महान चरित्र का ऐसा स्वरूप प्रस्तुत करता है जो सभी के पसन्द का है। इसके द्वारा वह सभी को शान्त एव प्रसन्न करना चाहता है। वह परमात्मा स काव्य सृजन की शक्ति चाहता है और प्रेम भाव स प्रभावित होकर इस सर्वोत्तम आख्यान को व्यक्त करना चाहता है। प्रेम का वर्णन कोई पूर्ण रूपेण नही कर सकता है फिर भी कवि उसको सर्व साधारण के सामने अत्यन्त सीधे सादे रूप मे व्यक्त करता है। अन्त मे वह इस काव्य के पाठक के लिए मगल सूचना भी देता है-[2]

> मेरा शेर जिव रख सुनेगा जने।
> मेरे हक पर ईमान भगेगा उने॥

---

१. उर्दू साहित्य का इतिहास भाग १-डा० रामबाबू सक्सेना-पृष्ठ ७७

२. यूसुफ-जुलेखा-भागारजा की हस्तलिखित पोथी सख्या २०-पृष्ठ ४६१

यूसुफ जुलेखा —

यह अमीन गुजराती का विशाल प्रेमाख्यानक काव्य है। इसमें हजरत यूसुफ और जुलेखा की प्रेम कहानी को पद्यबद्ध किया गया है। इसकी रचना किसी फारसी काव्य के आधार पर की गई है और इसको गुजरी भाषा में लिखा गया है। कवि अपने काव्य की भाषा के सम्बन्ध में स्पष्ट रूप से कहता है-[1]

सुनो मनरव अहे अब ता अमी का-लिखे गुजरी मने यूसुफ-जुलेखा
हर एक जाग किस्सा है फारसी म-अमीन उसको उतारे गुजरी मे।

यह प्रसिद्ध रचना मुगल सम्राट औरंगजेब के शासन काल में हुई थी। कवि ने इस सम्राट का वर्णन काव्य के आरम्भ में न करके अन्त में किया है। तत्कालीन सूफी मसनवी परम्परा थी कि ग्रन्थ के प्रारम्भिक प्रशंसा प्रसंग में समकालीन बादशाह का गुणगान किया जाता था किन्तु अमीन कोई दरबारी कवि नहीं था और न वह मात्र कवि ही था। वह एक सूफी धार्मिक व्यक्ति था। सम्राट की लोक प्रियता तथा उसकी पवित्रता के प्रति वह भी प्रभावित हुआ था। अतः उसका वर्णन तत्कालीन परम्परा के विपरीत काव्य के अन्त में किया है कवि कहता है—[2]

जमाने शाह औरंगजेब के मैं-लिखी यूसुफ-जुलेखा को अमी न
इलाही तू ऐसा कादिर शहंशाह-रखे कायम रहे जब लग मह्न माह

हस्तलिखित प्रतियाँ —

प्रोफेसर डा० मोहम्मद अब्दुल हमीद फारूकी ने अमीन गुजराती की निम्नलिखित तीन हस्तलिखित पोथियों का उल्लेख किया है।[3]

[1] इसकी एक पोथी अन्जुमन तरक्की उर्दू हिन्द दिल्ली के पास थी यह पोथी डा० मोलवी अब्दुलहक साहब की सौजन्यता से डा० फारूकी को प्राप्त हुई थी।

[2] एक प्रति बम्बई विश्व विद्यालय के पुस्तकालय में विद्यमान होने की सूचना डा० फारूकी ने दी है किन्तु इस समय यह पोथी वहाँ नहीं है। मैंने व्यक्तिगत रूप से वहाँ के लाइब्रेरियन से बात करके तथा कैटलाग देखकर हस्तलिखित पोथियों की अलमारी में ढूंढ कर भी उसको प्राप्त करने में सफलता प्राप्त नहीं की है। सम्भव है पोथी कभी वहाँ रही हो किन्तु सन् 1949 से अब तक के दीर्घ काल में वह नष्ट हो गई हो। अथवा अस्त-व्यस्त हो गई हो।

[3] एक हस्तलिखित पोथी प्रो० नजीर अशरफ नदवी के व्यक्तिगत संग्रह

---

1. यूसुफ-जुलेखा-अमीन गुजराती-पृष्ठ 15
2. " " " " 296
3. नवाये अदब-त्रैमासिक पत्रिका जनवरी सन् 1955 बम्बई-पृष्ठ 6

मे थी जो इस समय अन्जुमन इस्लाम उर्दू रिसर्च इन्स्टीट्यूट बम्बई के पुस्तकालय म आ गई है। यह वहाँ बडी दयनीय दशा मे पडी थी जिसे मैंने बडे परिश्रम से हस्तलिखित पोथियो के ढेर से ढूँढ कर अलग किया था। इस कार्य में मैं वहाँ के योग्य कार्य कर्त्ता श्री अब्दुल रज्जाक कुरैशी की सौजन्यता पूर्ण सहायता का आभारी हूँ। उनकी विशेष कृपा से उसके प्रथम पृष्ठ का चित्र भी प्राप्त हो गया है जो इसम सलग्न है। मैंने उसी का विधिवत अध्ययन किया है और समय-समय पर श्री कुरैशी साहब की सहायता प्राप्त की है।

इस पोथी मे कुल २९८ पृष्ठ हैं। प्रत्येक पृष्ठ पर १४ पक्तिया लिखी हुई है इसकी नाप ९' × ६' है इसके लेखन की तिथि अकित नहीं है किन्तु इसके कागज और रोशनाई को देखकर यह कहा जा सकता है कि यह २०० वर्ष पुरानी है। इसके लेखक का नाम हिदायतुल्लाह वल्द मुल्ला फैजुल्लाह है जो गनदवी गुजरात का रहने वाला था। उसकी लेखन शैली को देखकर यही कहा जा सकता है कि वह बहुत कम पढा लिखा व्यक्ति था। इसके कुछ शीर्षक लाल रोशनाई म हैं और कुछ काली मे। शीर्षक फारसी म दिये हुए हैं। कही-कहीं यूसुफ और जुलेखा लाल रोशनाई में लिखे हुए हैं। कभी-कभी एक ही शीर्षक मे भिन्न-भिन्न घटनायें आने पर उनके बीच म थोडा स्थान छोड दिया गया है। इस पोथी के स्वामी मिया फैजुल्लाह वल्द हिदायतुल्लाह बताये गये हैं। पोथी के अन्त मे लिखा हुआ है।

यह किताब हकीम हबीबुल्लाह वल्द इबादुल्लाह वल्द फैजुल्लाह वल्द हिदायतुल्लाह वल्द फैजुल्लाह सन् १९२२ से प्राप्त हुई है। मैंने अपने अध्ययन मे इसका किया प्रयोग है जो इन्स्टीट्यूट की कृपा से प्राप्त हुई थी। इसके लिए उसके कार्य कर्त्ताओ के आभारी हैं। इसके प्रथम पृष्ठ का चित्र सलग्न है।

[४] उक्त प्रतियो के आधार पर डा० मोहम्मद अब्दुल हमीद फारूकी ने उसका सम्पादन किया है। और उसको बम्बई विश्वविद्यालय मे पी० एच० डी० उपाधि के लिए प्रबन्ध के रूप म प्रस्तुत किया था। इस पर उनको १९४९ म उपाधि भी मिल चुकी है। मैंने उसकी एक प्रति बम्बई विश्वविद्यालय के पुस्तकालय मे देखी थी। डा० फारूकी साहब जो इस समय गुजरात कालेज अहमदाबाद मे उर्दू फारसी विभाग के प्रो० हैं ने अपना इस प्रबन्ध को मेरे पास भेज दिया था जिसका मैंने विधिवत उपयोग किया है। मैं डा० फारूकी का जीवन भर आभारी रहूँगा। अमीन गुजराती की इसी यूसुफ जुलेखा का मैंने विशेष रूप से प्रयोग किया है इसी कारण उद्धरण कही अप्रकाशित प्रबन्ध का और कहीं हस्तलिखित पोथी का दिया है। डा० फारूकी का उक्त प्रबन्ध भी अभी अप्रकाशित है। आशा है निकट भविष्य मे उसका प्रबन्ध हो जायगा।

[५] अमीन गुजराती की यूसुफ-जुलेखा की एक दुर्लभ प्रति कलकत्ता के एशियाटिक सोसाइटी आफ बंगाल में विद्यमान है जो कभी फोर्ट विलियम कालेज कलकत्ता के संग्रह में थी। यहाँ इसका नम्बर १०७ है। इसमें कुल १४१ फोलियो पन्ने हैं कीड़ों का प्रभाव है कहीं-कहीं पारदर्शक कागज लगाकर सुरक्षित किया गया है। इसकी नाप २१ से०मी० × ११ से०मी० × ३ से०मी० है। यह प्रति बड़ी विश्वसनीय और महत्वपूर्ण है क्योंकि इसके मूल काव्य की रचना तिथि के केवल ३१ वर्ष बाद ही लिखा गया था। पोथी के अन्त में लेखक का नाम और लेखन तिथि भी अंकित है। पोथी के प्रारम्भ में अंकित है—

"क्तबहू अब्दुल मुजनिब फकीर हकीर पुर तकसीर अरीजी अलल्लाह अज अफ बिन इबादिल्लाह शेख मोहम्मद लुतफुल्लाह बिन शेख अजमतुल्लाह अल अब्बासी अल बारह से नूर रती-।"

पोथी के अन्त में अंकित है—

"तम्मतिल किताब-वे औबिल्लाहिल मलिकुल वोहाब यूसुफ जुलेखा मिन तसनीफ शेख मोहम्मद अमीन गोहरिया गफरुल्लाह व तावा जम्बहू ब कलमे फकीरपुर तकसीर अज अफो मिन इबादिल्लाहे मोहम्मद लुतफुल्लाह बिन शेख अजमतुल्लाह कस्बा बारह से नूर मजाफ सूबा अहमदाबाद पर-बतारीख बीस्त व पंजुम शहरे शाबान ११४० हिजरी बमूजिब फरमाइश मशीअत मा आब शेख साहब व क़िबला जहाने खोदायेगान फैजरेसा शेख जैनुद्दीन" इसके ११ वें पृष्ठ का चित्र संलग्न है।

अमीन गुजराती की यूसुफ जुलेखा के सम्बन्ध में प्रो० नजीब अशरफ साहब जो डा० फारसी के निर्देशक रह चुके हैं के अनुसार यह कहा जा सकता है।[1]

१. अमीन की यूसुफ जुलेखा एक महत्वपूर्ण क्लासिकल मसनवी है।

२. भारत में दक्खिनी हिन्दी अथवा प्रादेशिक उर्दू के जन्म और विकास का विधिवत ज्ञान कराने वाली एक मूल्यवान कड़ी है।

३. मसनवी का विषय सामान्य होते हुए भी तत्कालीन सामाजिक रीति रिवाजों को समेटते हुए प्रेम काव्य का जो वातावरण इसमें प्रस्तुत किया गया है वह महत्वपूर्ण है और इसी कारण यह विशेष प्रसिद्ध हुई है अतः समाज का ऐतिहासिक पक्ष स्पष्ट करने में इसका विशेष स्थान है।

रचना तिथि —

कवि के स्वकथन के अनुसार इसकी रचना १६९७ ई० में हुई थी। उसने इस पवित्र काव्य को इतवार के दिन प्रातः काल को समाप्त किया था। कवि के अनुसार इसमें कुल ४११४ शेर हैं कवि स्पष्ट करता है-[2]

---

१. नवाये अदब-त्रैमासिक पत्रिका जनवरी १९५५ बम्बई-पृष्ठ ६

२. यू० जु० अन्जुमन इस्लाम उर्दू इन्स्टीट्यूट बम्बई की हस्तलिखित पोथी-पृष्ठ २९६, ९७

ग्यारह सौ के ऊपर नौ जो गुजरे-बरस हजरत मोहम्मद मुस्तुफा के
बयेता चालीस पर चौदह और सौ-है लिखी गीधरे के बीच मुन तो

× ×

जमादिउल अव्वल मे इतवार के रोज के रोज-इन्ही तारीख दूजी वे दिल अफरोज
सुवा के वक्त लिखा है अमी य-इलाही तेरा माहब्बत सब के तई दे
कि सब कोई करे इसके ऊपर प्यार-पढे दिन जवान त तो होय हुशयार।

काव्य सृजन का प्रधान उद्देश्य एवं आधार —

हजरत यूसुफ इस्लाम क एक पैगम्बर थे। इनका यह महत्व तौरात अथवा बाइबिल मे भी स्वीकारा गया है। हजरत यूसुफ और जुलखा की प्रेम कहानी बडी ही प्रसिद्ध तथा लोक प्रिय है। इसको विभिन्न भाषाओं म कवियो ने अपने काव्य का विषय बनाया है ऐस प्रख्यात कथानक म अपनी कल्पना का पुट देकर फारसी कवियो ने प्रेमाख्यान का रूप दे दिया है। इस प्रेम कहानी की रचना मसनवी पद्धति पर की गयी है। फारसी भाषा भारत मे सर्व साधारण के लिए बोध गम्य नहीं है। कुछ शिष्ट तथा राजन्य वर्ग ही फारसी से परिचित था। ऐसी स्थिति मे इस लोक प्रिय प्रेमाख्यान का आनन्द सामान्य जनता के लिए असम्भव था अत भारत में कदाचित शेख मोहम्मद अमीन गुजराती ने इसको दूसरी बार दक्नी हिन्दी या गूजरी म लिखा है इसके १० वर्ष पहले दक्नी कवि मीरा हाशमी ने इसको पद्य-बद्ध किया था जिसका परिचय पीछे दिया जा चुका है अतः सर्व साधारण को इस आख्यान से परिचित कराने के लिए कवि ने फारसी से गुजराती भाषा मे इसको लिखा है कवि ने प्रारम्भ में कह भी दिया है—[१]

हर एक जागे किस्सा है फारसी में-अमीं इसको उतारे गूजरी में
कै बूझे हर कदम इसकी हकीकत-बडी है गूजरी जग बीच न्यामत

काव्य के अन्त में कवि ने अपना उद्देश्य स्पष्ट कर दिया है—[२]

इलाही तू मुझे तोफीक जो दी-तो मैं की फारसी से गूजरी की
मेरा मतलब है यूं सब कोई जाने-हकीकत उसकी सब कोई पछाने
पढा होव जो काई फारसी को-वही जाने हकीकत ऐसे दिल सो
बन जो ना पढा होवे बेचारा-सो क्या बूझे अनू का इश्क सारा
मैं इसके वास्ते कैं ती ये गूजरी-हकीकत सब अदा होवे अनू की

मानव जीवन ही नहीं सारा ससार ही नश्वर है। अत इस असार ससार

---

१. यूसुफ जुलेखा-अमीन गुजराती-पृष्ठ १५
२. यूसुफ जुलेखा-अमीन गुजराती अंजुमन इस्लाम उर्दू रिसर्च इन्स्टीट्यूट की प्रति पृष्ट २६३

मे कवि के यश की स्थिरता के लिए कोई महान कार्य करना अनिवार्य है। इस दृष्टि से कवि का यह कार्य बहुत बडा एव महत्वपूर्ण है। कवि का विश्वास है कि यह काव्य इस ससार मे उसकी यादगार रहेगा। अत अपने गौरव की अमरता एव यादगार के उद्देश्य से इस महान काव्य की रचना की गई है। अन्त म कवि स्पष्ट रूप से कहता है–[1]

अमी ने गूजरी कैती सू यो कर–कि आये नही रहे दुनिया के भीतर
वजूद मे है सो सब हो जायेगा खाक–नही याद ये सू ढूँडा ज्यू ये खाक
निशानी तब रहेगी ऐ सोवन रे–जो कुछ बोला अमी मीठे वचन रे।

अत कवि ने स्वकथन के रूप मे व्यक्त कर दिया है कि वह अपने इस मीठे सरस काव्य को एक चिन्ह के रूप मे लिखकर ससार मे छोड रहा है। वास्तव मे यह काव्य उसके हृदय का स्वाभाविक उद्गार है अत उसे पूर्ण विश्वास है कि यह काव्य प्रशसनीय होगा और सर्व साधारण इसको स्वीकार करेगा। सहृदय पाठक इस सरस तथा सरल काव्य को अपने हृदय से लगायेगा। वह परमात्मा से प्रार्थना भी करता है कि पाठक के हृदय मे इस काव्य के प्रति स्वाभाविक रुचि उत्पन्न हो। वह अन्त मे कहता है–[2]

इलाही तू मेरे दिल का सो दरया–करम कर मारफ्त सीने सू भरया
उबल कर जब हुआ दरया ये जारी–जवा हर बुन ए निकले नतग भारी
इलाही जीता दे इन जौहरो कूँ–जगत मे जाय सब कोई अनू कूँ।

इस प्रकार परमात्मा के प्रति अपार प्रेम एव श्रद्धा उत्पन्न होने के बाद इस काव्य की रचना कवि ने की है। अत उसकी अभिलाषा है कि सुरुचि सम्पन्न पाठक इसको उसी विश्राम और श्रद्धा से पढ़ें। अत. वह निम्न पक्तियों से ऐसे पाठकों को सम्बोधित करते हुए कहता है––

सखुन मेरे सू कर बैठी इलाही–इसे बैठे कि अनू बैठी मिठाई।
शुक्र मिश्री के मानिन्द है सुखन कर–बनक ऊन है अगल शरमाये शक्कर,
इलाही खलक मे दिन दे मोहब्बत–कि उसके तई पडे सब का मशक्कत।
न छूटे बात सूँ इसके सऊबात–रखे सब लोग इस कूँ अपने सात।

अत कहा जा सकता है कि इस्लाम मे पूर्ण आस्था रखते हुए मूर्ति पूजा का विरोध, बहुदेवोपासना के स्थान पर एकेश्वरवाद और इस्लाम का प्रचार, अद्वितीय प्रेम कहानी को सर्व साधारण में सामान्य करके अपनी कीर्ति स्थापना के उद्देश्य से इसकी रचना की गई है।

इस आख्यान का मूल आधार कोरान शरीफ ही है। किन्तु मसनवी पद्धति

---

१. युसुफ-जुलेखा-अमीन-पृष्ठ २९६
२. युसुफ-जुलेखा-अमीन-पृष्ठ ११५

के लिए फारसी मसनवियों को अपनाया गया है इसके विपरीत प० परशुराम चतुर्वेदी सभी यूसुफ-जुलेखा का आधार सामी परम्परा की किसी प्राचीन प्रेम कहानी को ही मानते हैं।[१] किन्तु उन्होंने उसका स्पष्ट निर्देश नहीं किया है।

यूसुफ-जुलेखा—

महेवर खाँ उमर औरंगाबादी की एक मात्र रचना यूसुफ-जुलेखा प्राप्त हुई है। इसको प्राय किसी फारसी रचना का अनुवाद बताया जाता है किन्तु श्री नसीरुद्दीन हाशमी इससे सहमत नहीं हैं। उनका विचार है कि यह मसनवी किसी का अनुवाद नहीं है बल्कि विविध तफसीरों से सहायता लेकर उसको मौलिक रूप में रचा गया है।[२] काव्य को देखने से प्रगट होता है कि यह कवि की अपनी रचना है। यदि यह अनुवाद भी हो तो कवि अपनी भाषा और रचना प्रक्रिया के प्रति इतना सजग है कि यह उसकी मौलिक रचना प्रतीत होती है।

कवि की प्रस्तुत रचना, हाशमी, अमीन गुजराती के बाद की रचना है। सम्भव है कवि ने इन रचनाओं को देखा हो और उनसे सहायता ली हो। कवि ने स्वय व्यक्त कर दिया है कि उसने सुन्दर छन्दों को ही लिखने का प्रयास किया है। वह कहता है—

नात जो साफ़ तर थे सोलिया मैं—जो मुश्किल तर थे उनको नई लिया मैं[३]

यह काव्य दक्खिनी हिन्दी मे लिखा गया अंतिम काव्य है। यह भी बहुत प्रिय रचना थी। यही कारण है कि इसकी हस्तलिखित पोथियाँ दक्खिन भारत के विविध पुस्तकालयों में आज भी सुरक्षित हैं।

यूसुफ-जुलेखा की हस्तलिखित पोथियाँ—

इन पोथियों की खोज मे मैंने हैदराबाद की स्वय यात्रा की थी। सौभाग्य से इसकी दो हस्तलिखित पोथियाँ मुझको प्राप्त हो गयी थीं जिनका उपयोग मैंने अपने अध्ययन मे किया है। उनका विवरण निम्नलिखित है।

१. स्टेट सेन्ट्रल लाइब्रेरी हैदराबाद की प्रति—

पुस्तकालय में इसकी सख्या ४८८ है इसमें कुल ११४ पन्ने अथवा २२८ पृष्ठ हैं। प्रत्येक पृष्ठ पर १३ पंक्तियाँ हैं। इसका आकार ८×५ इन्च है। इसमें कुल ३००० शेर के लगभग हैं। प्रति मे काव्य की रचना तिथि लगभग १२५० हि०

१. हिन्दी के सूफी प्रेमाख्यान-पृष्ठ १४१
२. कुतुबखाना सालारजग मरहूम की उर्दू कलमी किताबो की फिहरिस्त-पृष्ठ ५२१, ५२२
३. यूसुफ-जुलेखा उमर-सालारजग हैदराबाद के पुस्तकालय की पोथी न० ३३ पृष्ठ १३५

१८३४ ई० है। यह पोथी सन् १२६३ हि०/१८४६ ई० म लिखी गई है। यह कवि की मृत्यु के ७५ वर्ष बाद की है। इसके लेखक का नाम जिआउद्दीन है। पोथी मजबूत जिल्द में बाँधकर सुरक्षित बना दी गई है। कागज अच्छा न होने के कारण लिखावट धुंधली होती जा रही है। रंग भी बदलता जा रहा है। पढ़ने म कठिनाई होती है। इसका उल्लेख श्री नसीरुद्दीन हाशमी साहब ने भी किया है।[1] मैंने हैदराबाद में व्यक्तिगत रूप से इसका अवलोकन किया था। वहाँ के कार्यकर्ता दाऊद ईमादी साहब से सहायता भी ली है।

२. सालारजंग हैदराबाद के संग्रहालय के पुस्तकालय की प्रति–

यह पोथी धार्मिक कहानियों के वर्ग में सुरक्षित है और इसकी संख्या ११ है। इसका आकार १६ से०मी० × १२ से० मी० है। पोथी के अन्त में काव्य की रचना तिथि १२०० हि० दी हुई है। इस प्रति की लेखन तिथि १२६४ हि० अंकित है। दोनों प्रतियों में रचना तिथियाँ भिन्न हैं। प्रत्येक पृष्ठ पर ११ पंक्तियाँ हैं। इसमें कुल १३६ पृष्ठ हैं। बाद में शीर्षक नहीं है। कथानक एक क्रम में दिया गया है। दो भिन्न घटनाओं के बीच स्थान छोड़ दिया गया है। यह परम्परा के प्रतिकूल है। सम्भव है रिक्त स्थानों में शीर्षक लिखने की योजना रही हो जो पूरा न हो सका हो। श्री नसीरुद्दीन हाशमी ने भी इसका उल्लेख किया है।[2] इसका लेख अत्यन्त साफ सुन्दर तथा पठनीय है। कागज मजबूत है और मजबूत जिल्द में बंधी है। मैंने इसका विशेष उपयोग किया है। इसके अंतिम पृष्ठ का चित्र साथ में संलग्न है। पोथी के अन्त में लेखन तिथि तथा लेखक का नाम कादिर हुसेन अंकित है।[3]
तम्मतुल्किताब बे ऊवली वोहाब अज दस्त कादिर हुसेन–
बतारीख बीस्त व चहारम माह जिलहिज १२६४ हि०/१८४७ ई० अज नबवी सल्ले अल्लाहु व सल्लम।

रचना तिथि –

इस सम्बन्ध में मतभेद पाया जाता है। अनेक ऐतिहासिक विवरण प्रस्तुत करते हुए श्री सखावत मिर्जा ने इसकी रचना तिथि ११७७ हि० अथवा १७६३ के पूर्व।[4] तथा स्टेट सेन्ट्रल लाइब्रेरी के आधार पर श्री नसीरुद्दीन हाशमी ने १२२० हि० अथवा १८३४ ई० निश्चित किया है।[5] स्टेट सेन्ट्रल की पोथी की लेखन तिथि

१. स्टेट सेन्ट्रल लाइब्रेरी में उर्दू मखतूतात भाग १–पृष्ठ ६१
२. सालारजंग की उर्दू कलमी किताबों की फिहरिस्त–पृष्ठ १२१, २२
३. यूसुफ–जुलेखा–उमर सालारजंग की पोथी ११–पृष्ठ १३६
४. 'उर्दू–अदब' अप्रैल सन् १९७० ई०–पृष्ठ ७९
५. स्टेट सेन्ट्रल लाइब्रेरी में दक्नी किताबों की फिहरिस्त–पृष्ठ ९१

१२६१ हि०/१८४६ ई० है जो कवि की मृत्यु के ७५ वर्ष बाद की है। अत कवि की मृत्यु ११८८ हि० अथवा १७७४ ई० मानी जावेगी ऐसी स्थिति में सन् १२१० हि० अथवा १८३४ ई० मे काव्य की रचना और कवि का जीवित रहना असम्भव है। इसी प्रकार सालारजग की पोथी पर रचना १२०० हि० अथवा १७८५ ई० अंकित है। यह भी संतोषजनक नहीं है। मृत्यु की प्रत्येक प्राप्त तिथियाँ ११८८ हि० अथवा १७७४ ई० के बाद की नहीं है। ऐसी स्थिति में १२०० हि० अथवा १७८५ ई० मे रचना तिथि होने म संदेह होता है। पोथी की वर्तमान स्थिति से वह २०० वर्ष प्राचीन प्रतीत होती है। कवि ने रचना तिथि का स्पष्ट उल्लेख न करके लेखन काव्य की राजनीतिक परिस्थितियाँ व्यक्त कर दी है—

खुद बन्दा का जमाना तग आया-तबाही का जहाँ मे रग आया
किये गलवा यहूदी औ नसारा-किये अहमद की उम्मत को इदारा[१]

× × × ×

उनो के हाथ से सारे तबाह हैं-वजुज तेरे पनह के ये पनाह है
छिपे कोने मे जो जो थे सिपाही-फलक के हाथ मे देखी तबाही
इन्हू का मुल्क कब्जा सो गया है-नसारा सख्त आजिज कर चुका है[२]
न खाने की मयस्सर नान उनको-न रहने को रहा वहलाव उनको
फलक का जुल्म उन पर जोर लाया-उन्हूँ की शर्म तुजकू है खुदाया

कवि के उक्त कथन से रचना तिथि और भी उलझ गयी है। मुसलमानो की दुर्दशा और अंग्रेजों के अत्याचारो से भिन्न-भिन्न कार्यों का बोध होता है। कवि औरंगाबाद का निवासी था अत वहीं की दशा से वह दुखी रहा होगा। इतिहास से सिद्ध है कि हैदराबाद तथा औरंगाबाद पर १९ वीं० शताब्दी के प्रारम्भ में पड़ोसी मराठा राजाओ और अंग्रेजों का अत्याचार बढ गया था।[३] औरंगाबाद पर सुल्तानों का शासन १२१८ हि० अथवा १८०३ ई० तक ही प्राप्त होता है। सम्भवत इसी समय इसकी रचना की गई हो। ऐसी स्थिति मे १२०० हि० की तिथि कुछ उपयुक्त मानी जा सकती है। १८ वर्ष तक अंग्रेजों के विविध प्रयास हो रहे थे। अतः विभिन्न दुख होने से देश की दशा दयनीय अवश्य हो गई होगी, जिससे कवि को विशेष दुख रहा होगा। किन्तु १२०० हि० के पूर्व तो कवि की मृत्यु हो गई थी। जैसा ऊपर कहा जा चुका है। दूसरी स्थिति पर सम्पूर्ण भारत पर अथवा मुगलो की पराजय और अंग्रेजों का अत्याचार भी सामने आता है। क्या कवि सारे भारत के मुसलमानों के दुख स चिन्तित था। या केवल औरंगाबाद के। यह प्रश्न भी

१. यूसुफ-जुलेखा-उमर सालारजग-पृष्ठ १३५
२. वही-पृष्ठ १३६
३. यूसुफ-जुलेखा-उमर सालारजग १३-पृष्ठ १०

विचारणीय है। अत: जब तक कवि की मृत्यु तिथि निश्चित न हो जाय काव्य की रचना तिथि के सम्बन्ध म निश्चित रूप से कुछ नही कहा जा सकता है।

प्रेरणा एवं उद्देश्य—

कवि उमर काव्य रुचि सम्पन्न व्यक्ति था। काव्य के प्रति यह आकर्षण उसको अपनी नानी से प्राप्त हुआ था। कवि 'जामी की यूसुफ-जुलेखा से विशेष प्रभावित रहा है और इस कथानक को 'कलाम पाक' म अहसनुल कसस कहा गया है। अत उसकी काव्य प्रतिभा भी उसी ओर आकर्षित होती है। इस कथानक को कवि न अपन मौलिक ढग से प्रस्तुत किया है। जामी के अतिरिक्त कलाम पाक की विविध तफसीरो और मुसलमानो मे प्रचलित अनेक रवायतो से भी सहायता ली है। अत. अपने काव्य के प्रारम्भ मे ही कवि स्पष्ट रूप स कहता है—

सुखन को गरचे हासिल है रसाई-वले जामी से हासिल है सफाई
है जाहिर कोई मैदाँ हर पताका-कहाँ दौड बगैर अज पंचौगाँ
गर्ज ताईद से ख्वाजा के नाजिम-हुआ तसनीफ पर जामी के आजिम
जो हैगा यारह मुल्ला का मुसन्निफ-कलामुल्लाह के मानी से वाकिफ[1]

× × × ×

सुखन से उसके भी मुझको मोहब्बत-हमेशा नज्म से रखता था आदत
हुआ यह यक बैक यह शौक पैदा-करूँ नामे को हिन्दी म हो बैदा
कहा इस फिक्र में दिल से ऐ नादाँ-सुखन से शौक जो रखना है हैराँ
सुखन बाकी है क्यो कहता नहीं तूँ-जबान जिस म क्यो लाता नहीं तू
सिकन्दर और दारा नही रहा है-सुलेमाँ और कसरा नही रहा है।[2]

इस प्रकार कवि इस लोकप्रिय रचना के द्वारा अपने को ससार म अमर बनाना चाहता है। अत कोरान मे अवतरित विश्व विश्रुत तथा सर्वोत्तम आख्यान को सर्वोत्तम शैली मे और अपने पूर्ववर्ती कवि जामी स प्रेरणा लेकर कवि व्यक्त कर रहा है। वह स्पष्ट कहता है—

क्या चहता है लिख एसी कहानी-है कुरान मे क्यो जिसके मानी
यही बेहतर है सुखन ताजा कहूँ मैं कुछ आगे मसनव रगी लिखूँ मैं
सुनाऊँ किस्सा यूसुफ-जुलेखा-करूँ आलम मं यह मसनव हो बैदा
लिखूँगा किस्सा अहसन है उम्मीद-कि पहुँची है तुजे जामी मे ताईद[3]

कवि यह घोषणा करता है कि वह इस आख्यान को सर्वोत्तम ढग से लिखने की चेष्टा करेगा। अत वह कहता है कि परमात्मा का नाम लेकर जो भी इसको

---

१. इम्पीरियल गजेटियर आफ इण्डिया भाग ३-पृष्ठ ४२२
२. सालारजग की पोथी न० ३१-पृष्ठ १०
३. " " " "

पढ़ेगा वह इसके मर्म को वास्तव में समझ लेगा। इसको सफलता पूर्वक समाप्त करने के लिए परमात्मा को धन्यवाद भी देना है। वह स्पष्ट रूप से व्यक्त करता है—

कहूँ मैं शुक्र जो है हक का मालूफ-है जिस पर खातमा नामे का मौकूफ
भरोसा नही था मेरा आसमा से-जो फुरसत हो गई इतनी जहाँ से
मैं इस नामे को खूबी से लिखूँगा-बयान वाकई जाहिर करूँगा
सियाही गरचे कागज पर चलेगी-कदम जिस मज में पौ कब चलेगी
सबब होता है जिस को कदम के-है फुरसत शर्त लिखने को रकम के
वहम्दुल्लाह इस इनकार के साथ-लिखा इस नामा अहमन को दिन रात
×   ×   ×   ×
कहूँ इसकी शरण थीं लड़ी है-फलक से छूट जमीं पर गिर पड़ी है
मुसलसल जो कि यह नामा पढ़ेगा-सच्चाई तबा की हासिल करेगा।[१]

अन्त में कवि पाठक वृन्द को विश्वास दिलाकर और काव्य की प्रशसा करके इसका प्रधान कारण व्यक्त करता है। कवि की नानी काव्य रुचि सम्पन्न थीं। उन्होंने कवि को आदेश दिया था कि इस काव्य की रचना करो। अत कवि ने उनको सतुष्ट करने के लिए और उन्ही के आदेश पर इसकी रचना की थी। वह कहता भी है—

खसूसन हैं मेरे मादर की मादर-मैं हूँ तिफ्ली से इनका साया परवर
इन्हूँ को इश्क है शीरी सुखन से-सुखन शीरी को रखते जान वतन से
इन्हूँ के वास्ते वक्त दिया मैं-सुखन दुशवार जो कोई था लिखा मैं।[२]

कवि अल्लाह का नाम लेकर काव्य का आरम्भ करता है—
इलाही गुंच उम्मीद का खोल-देखा आइना तूती को जबान खोल
तथा ह० मोहम्मद साहब को सलाम करके इसका अन्त कर देता है—
'उमर' अब खतम कर इस दास्ता को-सुखन गोई से साकत कर जबा को
नबी पर भेज सलवात व तहियात-रखो उनका नाम दर्द जात दिन रात।[४]

---

१. सालारजग की पोथी स० ३३-पृष्ठ १०
२. वही-पृष्ठ १३५
३.   "   "
४. वही-पृष्ठ "

यूसुफ-जुलेखा का कथानक

यूसुफ-जुलेखा प्रेमाख्यान का कथानक—

इस आख्यान की रचना फारसी मसनवी परम्परा के अनुसार हुई थी। कथानक का विकास विभिन्न घटनाओं के शीर्षकों के आधार पर किया है। प्रारम्भिक परम्परित प्रस्तावना के बाद ही वास्तविक कथानक का आरम्भ हुआ है। आख्यान को शुद्ध प्रेमाख्यान बनाने के उद्देश्य से कुछ कवियों ने जुलेखा को विशेष महत्व दिया है और कथानक का आरम्भ पश्चिम देश के बादशाह तैमूस के वैभव वर्णन के साथ हुआ है। इसी प्रसंग में जुलेखा के जन्म उसके पालन-पोषण, बाल्यावस्था, मनोरंजन, उसकी सुन्दरता का नखशिख वर्णन, युवावस्था और विविध मनोरंजक स्वप्नों का वर्णन किया गया है।

धार्मिक दृष्टिकोण अपनाने वाले कवियों ने कथा के नायक ह० यूसुफ को और उनके महान चरित्र को महत्व दिया है। इसीलिए कुछ कवियों ने ह० यूसुफ का पारिवारिक परिचय, तथा उनके जन्म से कथानक आरम्भ किया है। इस प्रकार कथानक वर्णन में दो प्रकार के दृष्टिकोण अपनाये गये हैं। मूल कथानक निम्नलिखित है—

कथानक—

कनआँ नगर में ह० याकूब रहा करते थे। वे अल्ला के पैगम्बर थे उनका जीवन एवं प्रकृति बड़ी गम्भीर और धर्मनिष्ठ थी। उनके कई बीवियाँ और पुत्र थे। बीवियों की संख्या के सम्बन्ध में कवियों में मतभेद है। उनका लौकिक तथा पारलौकिक जीवन बड़ा पवित्र तथा सम्पन्न था। सुखी दाम्पत्य जीवन व्यतीत करते हुए अल्लाह की इबादत में नित्य लीन रहा करते थे। नगर में तथा सामान्य व्यक्तियों में उनका पर्याप्त प्रतिष्ठा प्राप्त थी। ऐसे महात्मा के घर में पावन वातावरण में ह० यूसुफ का जन्म हुआ। ह० यूसुफ अपेक्षाकृत अधिक सुन्दर थे। सम्पूर्ण सांसारिक सौन्दर्य का अधिकांश भाग उनको प्राप्त था। ऐसा प्रतीत होता था

मानो परमात्मा की ज्योति उनमें समा गई हो। जब उनकी अवस्था दो वर्ष की थी तभी उनकी दयामयी जननी का अन्तकाल हो गया। पिता के सम्मुख उनके पालन-पोषण की एक समस्या खड़ी हो गई। उनकी बहन ने ह० यूसुफ का लालन-पालन किया। फूफी उनका देखकर विशेष प्रसन्न और सुखी रहा करती थीं उनकी अभिलाषा थी कि वे उन्हीं के पास निरन्तर रहें। इसी समय से पुत्र के माँगन पर अपने पिता का कमरबन्द उनको बाँधकर भेजा। बाद में उसी के लिए भाई के घर गयीं। बालक की कमर में वह बन्द देखा गया जिससे उनको चोर मान लिया गया उस समय की रीति थी कि चोर का कुछ दिनों तक दास बनकर सेवा करनी पड़ती थी। इसी कारण ह० यूसुफ पुन फूफी के घर आ गए। फूफी के अन्तकाल के बाद ही वे अपने पिता के पास आ सके थे।

ह० याकूब पुत्र के प्रति विशेष अनुरक्त थे। पिता को अपने इस पुत्र के सौन्दर्य में ईश्वर की ज्योति का आभास होता था। उनको विश्वास था कि ईश्वरीय ज्योति गुप्त रूप से इसमें आकर समा गयी है। इसीलिए जो भी उनको देखता अनुरक्त हो जाता था।

दूसरी ओर पश्चिम देश में तैमूस नाम का बादशाह राज्य करता था। अपनी शक्ति और ऐश्वर्य से उसने दूर-दूर तक अपना अधिकार स्थापित कर लिया था अपनी धन-सम्पदा, शक्ति तथा ऐश्वर्य के कारण बहुत ही विख्यात हो गया था। दारा और सिकन्दर भी उसके ऐश्वर्य के बराबर नहीं थे। उसका कोष भी पर्याप्त सम्पन्न था। इसी सम्पन्न राज्य परिवार में रूपमती जुलेखा का जन्म हुआ था। ईश्वर ने उसको भी पर्याप्त रूपराशि प्रदान किया था। वह परम सुन्दरी जुलेखा सहेलियों के बीच रागरंग पूर्ण सुखी जीवन व्यतीत करते हुए युवावस्था को प्राप्त हो गयी।

एक सुहावनी रात्रि में जुलेखा ने स्वप्न में एक रूपवान अपरिचित दिव्य-पुरुष को देखा और उस पर अनुरक्त हो गयी। प्रातःकाल उसकी दशा दयनीय हो गयी। उसको प्रेम का बाण अत्यन्त गहराई से बिंध गया था। उसने जोगिन का वेष बना लिया और स्वप्न पुरुष को प्राप्त करने के लिए चिन्तित रहने लगी। उसको रात में नींद नहीं आती थी। रात दिन सेज पर पड़ी रहती और सिसिक-सिसिक कर रोया करती थी। उसकी यह दशा देखकर परिवार के लोग आश्चर्य चकित थे दासियों ने इसका समाचार उसके पिता को सुना दिया। पिता अपनी पुत्री की इस दयनीय स्थिति को जानकर बड़ा चिन्तित हुआ और उसके दिन भी कठिनाई से बीतने लगे। दासियाँ उसकी दशा देखकर परस्पर विचारने लगीं। उसकी व्यक्तिगत बूढ़ी दासी रात में उसके पास जाती है और दयनीय दशा का कारण पूछती है। जुलेखा ने अपने स्वप्न तथा उस दिव्य रूपवान व्यक्ति का वर्णन किया। दासी ने उसकी बातों को सुना और बुद्धि पटुता से काम लिया। उसने इस

स्वप्न को भूत का धन्धा बनाया क्योंकि भूत कभी प्रगट होकर सामने आते हैं और कभी गुप्त हो जाते हैं और वे इस प्रकार निरन्तर स्वप्न दिखाया करते हैं अतः उसने स्पष्ट कह दिया कि ऐसे शैतानी स्वप्न पर विश्वास नहीं करना चाहिए। जुलेखा ने दासी के इस कथन पर आपत्ति की और भूत तथा स्वप्न को ज्योति की तुलना ठिकरी और गोली से किया। दासी के समझाने का कोई प्रभाव उसके ऊपर नहीं पड़ा। दासी के इस व्यवहार से सारा समाचार जानकर पिता ने सतर्कता से विह्वल पुत्री के देखभाल की आज्ञा दी।

इस प्रकार एक वर्ष तक प्रेम विह्वल जुलेखा विरह पूर्ण दयनीय जीवन व्यतीत करती रही। उसकी दशा पागलों की सी हो गयी थी। वह कभी हँसती थी, कभी रोती थी और कभी बकती थी। एक रात पुनः उसका वही ज्योति दिखाई पड़ी। स्वप्न में जुलेखा उसके चरणों में गिर पड़ी उसने अनेक प्रकार से अपनी विरह दशा का नम्र निवेदन किया। उसने उसका दामन पकड़कर पूछा कि वह ज्योति किस योनि से सम्बन्ध रखती है और क्यों बार-बार दर्शन दिया करती है। उसने उनका प्रत्यक्ष दर्शन देने की अभिलाषा प्रगट की। उस अपरिचित व्यक्ति ने कहा-"मैं एक मानव हूँ मैं भी तुमसे प्रेम करता हूँ और तुम्हारे सौन्दर्य से प्रभावित होकर बार-बार तुम्हारे दर्शन के लिए आया करता हूँ। मेरा प्रेम तुम्हारे प्रेम से दो गुना है। तू भी यत्नपूर्वक प्रेम भावना करती रहो।" जुलेखा ने जब इस प्रेम भरी बातों को सुना तब उसका हृदय कुछ शीतल हुआ वह इनी सुख स्वप्न में मग्न थी ही तब तक विरह ने उसकी नींद को भंग कर दिया अतः उसकी विशेष अभिलाषा पूरी न हो सकी। जागने पर उसने अपना सारा वस्त्र फाड़ डाला और फूट-फूट कर रोने लगी। वह न बोलती थी, न चलती थी और निरन्तर अपने में समाई रहती थी और किसी अदृश्य से बातें करती रहती थी। उसकी विचित्र दशा देखकर सभी दासियों ने उसको घेर लिया। पिता को भी उसके पागलपन की खबर मिल गयी। पिता ने देश के तान्त्रिकों, ज्योतिषियों, विद्वानों को बुलाकर सारा समाचार बताया। सभी ने अपना-अपना उपाय किया कुछ लोगों ने इसे प्रेम का लक्षण बताया, जादूगरनियों ने अपना मन्त्र पढ़ा किन्तु उस पर किसी का वश न चला। बाद में उसको पागल घोषित कर दिया गया और पागलों का उपाय करने का सुझाव दिया गया। इसके बाद उसके पैरों में सोने की जंजीर पहना दी गयी और वह महल के कमरे में बन्द कर दी गयी। जुलेखा इस प्रकार के कठोर व्यवहार करने वालों को स्वयं पागल और बुद्धिहीन कहने लगी। वह बार-बार कहती थी कि मुझे स्वयं में कैद किया गया है। मेरा मन कहीं दूर ले गया है। और मुझे ही चोर समझा जा रहा है। इस प्रकार वह रोने लगी। प्रियतम का नाम पता न जानने के कारण पश्चाताप भी करने लगी इसके साथ ही वह अपने विरह की गम्भीरता प्रेम की सच्चाई और प्रियतम की गम्भीरता एवं दिव्यता का उच्च स्वर से गान करने लगी।

एक रात वह विरह मे व्याकुल होकर प्रियतम का गुणगान कर रही थी। वह रात बिस्तर पर अपने आप बातें कर रही थी कि मैं कब तक बावली रहूँगी। अब अगर वह सपने मे आया तब मैं पाव पकड़कर उसका नाम और ठिकाना पूछूँगी उसकी दासी ने भी ऐसा करने का सुझाव दिया था। इसी बीच उसको नींद लग गयी तब तक वह सूर्य पुन. दृष्टिगत हुआ और उसका पूर्व स्वप्न प्रियतम पुनः दिखलायी दिया। उसने उनका दामन पकड़ लिया। उनके रूप गुण की प्रशंसा करने के बाद उसने ईश्वर की सौगन्ध देकर उनका नाम निवास बताने की प्रार्थना की। उस दिव्य पुरुष ने कहा--"मेरा नाम अजीज है और मिस्र मेरा देश है।" मिस्र का निवासी जानकर वह उसी प्रकार प्रसन्न हो गयी जैसे सूखे वृक्ष वर्षा का जल पाकर हरे भरे हो जाते हैं। उसका सारा पागलपन दूर हो गया और वह अपनी पूर्वावस्था में आ गयी। स्वय खड़ी होकर दासियो से कहने लगी कि मेरा पागलपन दूर हो गया है। दासियो ने पिता के पास इसका समाचार भेजा, पिता बहुत ही प्रसन्न हुआ। उसके बन्धन खोल दिये गये। मगलचार होने लगा। सहेलियों के साथ जुलेखा आनन्द बधाईयो मे लीन हो गयी। इसी आनन्द के भीतर जुलेखा ने अपने प्रेम और प्रियतम का भी उल्लेख किया, उसने मिस्र का भी बहुत स्मरण किया।

जुलेखा के रूप गुण की चर्चा चारो ओर फैल गयी थी। उसके रूप लोभियों ने विवाह का निवेदन किया और अनेक प्रकार से सेवा का वचन दिया। जुलेखा को इनमे से किसी का नाम और प्रस्ताव अच्छा नहीं लगा। सहेलियो तथा जुलेखा द्वारा पिता को अपनी प्रिय पुत्री की मनोकामना का पता चल गया था। अत. सभी के दूतो को निराश लौटा दिया क्योंकि वह पुत्री की अभिलाषा के अनुसार अजीज मिस्र से उसका विवाह करना चाहता था किन्तु बिना मागे पुत्री का विवाह करने के पक्ष मे वह नहीं था। उधर जुलेखा ने यह निश्चित कर लिया था कि यदि उसका विवाह उससे नहीं किया जायेगा तब वह आत्म हत्या कर लेगी या जीवन भर अविवाहित रहेगी। पुत्री का यह दृढ निश्चय जानकर पिता लाचार हो गया। ऐश्वर्य और पद मे कम होने तथा बिना प्रस्ताव के ही मिस्र मे दूत भेजने का निश्चय किया पिता ने एक दूत बुलाकर शादी के पैगाम का पत्र मिस्र के अजीज के पास भेजा। अजीज मिस्र वहाँ का मन्त्री था अत बादशाह का पैगाम सुनकर बहुत प्रसन्न और कृतकृत्य हुआ। उसने इस प्रस्ताव को स्वीकार कर लिया। कार्य मे व्यस्त होने के कारण मिस्र छोड़कर जाने मे उसने लाचारी व्यक्त की और जुलेखा को ही भेज देने की प्रार्थना की। अत. दूत प्रसन्नतापूर्वक अजीज का प्रस्ताव लेकर वापस आ गया और सारी बातचीत प्रगट कर दी। पिता ने पर्याप्त दहेज देकर अनेक सहेलियो के साथ उसको विदा कर दिया। अपने कुटुम्ब को रोता छोड़कर जुलेखा जिज्ञासा एव प्रसन्नता पूर्वक चलकर शीघ्र ही मिस्र देश में पहुँच गयी।

अजीज उसके स्वागत के लिए सुन्दर वस्त्रों से विभूषित हो परिवार की

औरतों को साथ लेकर चल पड़ा। विभिन्न प्रकार के उत्सव मनाये गये। गाने बजाने नृत्य का कार्यक्रम चला। जुलेखा को नगर के बाहर एक शिविर में ठहराया गया था। अजीज जुलेखा को महल में लाने के लिए वहाँ आया। जुलेखा भी अजीज के दर्शन के लिए उत्कण्ठित हो उठी। दासी ने शिविर में एक छिद्र बना करके जुलेखा को अजीज का दर्शन करा दिया। अजीज पर दृष्टि पड़ते ही जुलेखा ने अनुभव किया कि उसे धोखा हुआ है। वह उसके स्वप्नों का दिव्य पुरुष न था उसने पुनः आह भरना शुरू किया और आँसू बहाकर रोया। अपनी इस असफलता से जुलेखा को बड़ी निराशा हुई उसको प्राचीन कथा का पुनः स्मरण हो आया उसको उसके प्रति पश्चाताप और लज्जा का भी अनुभव हुआ। अतः लज्जित होकर उसने पृथ्वी पर मस्तक टिका दिया। अल्लाह ने उसका सिजदा स्वीकार कर लिया और जोर से उसे आवाज सुनाई पड़ी, जिसमें आकाशवाणी हुई-पतिव्रताओं की लज्जा स्वयं परमात्मा सुरक्षित रखता है, यद्यपि इससे तुम्हारी मनोकामना पूर्ण नहीं होगी किन्तु इसी से और यहीं से तुम्हारी अभिलाषा पूरी हो जायगी। अतः किसी प्रकार की चिन्ता न करो अजीज सम्भोग का स्वाद नहीं जानता है क्योंकि वह इसमें असमर्थ है। अतः अजीज से तेरे सतीत्व पर किसी प्रकार का धब्बा नहीं आ सकता।" इस वाणी को सुनकर जुलेखा ने पूर्ण रूप से प्रभु को मस्तक झुकाया और व्यथा से व्याकुल होते हुए भी उसे कुछ सन्तोष हुआ इसके पश्चात जुलेखा सजधज के साथ महल में लायी गयी। शानदार उत्सव मनाया गया। महल में विभिन्न प्रकार की दासियाँ उसके स्वागत और सेवा के लिए तैयार रहा करती थीं। किन्तु जुलेखा को कुछ अच्छा नहीं लगता था। अजीज के पुरुषत्व विहीनता के कारण वह अपने वास्तविक प्रियतम के दर्शन के लिए और भी व्याकुल रहने लगी। प्रियतम को शीघ्र लाने के लिए वह पवन से नित्य प्रार्थना करने लगी। प्रियतम के आगमन की प्रतीक्षा में नित्य सन्ध्या हो जाया करती थी। इस प्रकार विरह का व्याकुलतापूर्ण जीवन व्यतीत करने लगी।

ह० यूसुफ के अलौकिक रूप पर उनके पिता याकूब स्वयं मोहित थे और उनको अपनी आँखों की पुतली के समान समझते थे। उसकी अपेक्षा अन्य पुत्रों के प्रति पर्याप्त उदासीन थे। ह० याकूब के घर के सामने एक आश्चर्यजनक वृक्ष था उससे सभी लोग अनेक प्रकार से लाभान्वित होते थे। इस वृक्ष के समान संसार में कोई अन्य वृक्ष नहीं था। सभी देवता भी उसकी रखवाली करते थे। ह० याकूब के प्रत्येक पुत्र के जन्म के साथ इस वृक्ष में भी एक डाली निकलती थी। जब पुत्र बड़ा हो जाता था तब इसी डाल को काट कर उनके लिए लाठी बना दी जाती थी जिसकी सहायता से वह बकरी चराता था। ह० यूसुफ के जन्म के समय उसमें कोई डाल नहीं निकली जिससे पिता विशेष चिन्तित हुए। जब हजरत यूसुफ सात वर्ष के हुए तब उन्होंने पिता से निवेदन किया कि उनके लिए स्वर्ग से लाठी

प्राप्त करने के उद्देश्य से अल्ला से प्रार्थना करें। पिता ने उसके लिए प्रार्थना की। ह० जिबरील ने एक हरी लाठी स्वर्ग से लाकर उनको दे दिया वह लाठी बड़ी ही आश्चर्यजनक थी। उसको देखकर भाइयों के हृदय में ईर्ष्या पैदा हो गयी और वे रात दिन उससे जलने लगे।

इसी मध्य जबकि ह० याकूब रात्रि में उपासनारत थे ह० यूसुफ बेसुध हो जाते और उनके नेत्रों में नींद का मधुर प्रभाव दिखलाई पड़ता था। उनको इस स्थिति में देखकर पिता विशेष चिन्तित हुए। जागने पर उन्होंने इसका कारण पूछा उन्होंने बताया—"कि मैंने रात में चाँद, सूर्य और ग्यारह सितारों को देखा है जो सिजदा कर रहे हैं। पिता ने इस स्वप्न को अपने हृदय में रख लिया और किसी अन्य से कहने के लिए वर्जित कर दिया। फिर भी स्वप्न की बात भाइयों तक पहुँच गयी। इससे और भी ईर्ष्या करने लगे। उन लोगों ने समझा कि पिता की मति नष्ट हो गयी है इसी कारण वे बालक के साधारण स्वप्न से उसकी भारी महिमा की बात करते हैं और इस बालक को सिर पर चढ़ा लिया है। इस प्रकार वे ह० यूसुफ को मार डालने अथवा कहीं हटा देने की युक्ति सोचने लगे।

इसी उद्देश्य से वे सभी मिलकर पिता के सामने आते हैं और चिकनी चुपड़ी बातें करके ह० यूसुफ को सैर सपाटे के लिए जंगल में ले जाने का प्रस्ताव रखते हैं। उन लोगों ने बहुत प्रकार से अनुनय विनय का वर्णन किया और उनकी सुरक्षा का वचन दिया। ह० यूसुफ के भोलेपन, जंगल के एकान्त, भाइयों की ईर्ष्या, वन पशुओं की भयंकरता से भयभीत होकर पिता के मन में विभिन्न प्रकार की शंकायें उत्पन्न होने लगी फिर भी भाइयों की प्रार्थना और सुरक्षा के वचन पर उनको वन में मनोरंजन के लिए जाने की अनुमति दे दी। यही पर पिता का पुत्र से वियोग हो जाता है।

कपटी भाई ह० यूसुफ को प्राप्त करके वन में आते हैं जब तक वे पिता की दृष्टि के सम्मुख थे तब तक कोई उनको कंधे पर बिठाता कोई गोद में लेता था। किन्तु दृष्टि ओझल होने पर वही भाई उनके साथ अत्याचार करने लगे और विभिन्न प्रकार की शारीरिक यातनाओं से उनको कष्ट पहुँचाने लगे। भाइयों की इस निर्दयता से उसकी बड़ी दुर्दशा हुई। उनको घसीटते हुए तीन मील जंगल में ले गये। वहाँ उनको एक भयंकर अंधकारमय कुआँ दिखाई दिया। पानी पीने के बहाने ह० यूसुफ को उसी कुयें में गिरा दिया। यूसुफ के गिड़गिड़ाने का कोई भी प्रभाव उनके ऊपर नहीं पड़ा। पानी के सतह के ऊपर एक पत्थर था। ह० यूसुफ उसी पत्थर के ऊपर बैठ गये। वहाँ पहुँचने से और उनकी दिव्य ज्योति से उसकी दुर्गन्ध और अन्धकार समाप्त हो गया। उसका जल अमृत के समान हो गया। नीम की डाली गन्ने के समान मीठी हो गयी। पिता ने उनके गले में एक तावीज पहना दिया था जिससे उनको विशेष कष्ट नहीं हुआ। अल्लाह की आज्ञा से हजरत जिबरईल

हजरत इब्राहिम का कुर्ता स्वर्ग से ले आते हैं और उनको पहना देते हैं जिससे नमरूद की अग्नि की भांति उनके कष्ट शीतल हो गये। इसके अतिरिक्त एक विशिष्ट प्रकार का गुणवान तावीज उनकी भुजा पर पहना दिया और परमात्मा का यह सदेश दिया कि शीघ्र ही वे कुएँ से निकल जायेंगे। अल्लाह का सदेश प्राप्त करके वे बहुत प्रसन्न हुए और उसका सिजदा किया। उनका सारा कष्ट दूर हो गया। इस प्रकार वे कुछ दिन तक कुएँ मे पड़े रहे।

वहाँ मदायिनियो का एक काफिला आ रहा था। मार्ग मे भटककर वह उधर आ गया था। कुएँ के आसपास की हवा पर्याप्त सुगन्धित पाकर विश्राम करने के लिए उनका एक दास वहाँ जाता है और रस्सी के सहारे डोल पानी मे डालता है। ह० जिब्र-ईल के सुझाव पर वे डोल मे बैठ जाते है। इस प्रकार वे कुएँ के बाहर निकाल लिये जाते हैं। काफिले के सभी लोग उनकी ज्योति का देखकर मोहित हो जाते हैं और उनकी सुन्दरता का अनेक अनुमान लगाते हैं। उनको ले जाकर शिविर मे छुपा देते हैं। इसी बीच ह० यूसुफ के भाई कुएँ पर आते हैं और कुएँ मे उनको न देखकर काफिले के पास पहुँच जाते हैं। ह० यूसुफ को अपना भागा हुआ गुलाम बताते हैं और इब्रानी भाषा मे उत्तर न देने के लिए ह० यूसुफ को कड़ा निर्देश देते हैं। अत ह० यूसुफ भय के कारण मौन हो जाते हैं। भाइयों ने काफिले के मालिक के हाथ कुछ रुपये मे बेच दिया। इस प्रकार आइने मे रूप देखकर अपने को अद्वितीय, अमूल्यवान समझने वाले यूसुफ कुछ खोटे रुपयों मे ही स्वयं काफिले के गुलाम बन जाते हैं। काफिले वाले उनको लेकर मिस्र चले जाते हैं। रास्ते मे उन्होने दादा की कब्र को सलाम किया और कुछ दूर पर माता की कब्र पर गिरकर मुक्ति की प्रार्थना करने लगे। काफिले के दासों ने उनको बहुत पीटा जिससे प्रकृति भी बलान्त हो गयी और एक भयकर तूफान आया जो हजरत यूसुफ के प्रार्थना करने पर ही शान्त हुआ। इससे काफिले वालों ने उनके महत्व को जान लिया और हजरत यूसुफ ने यह समझ लिया कि दास के साथ अत्याचार करने से कितना कष्ट होता है। क्योंकि उन्होंने एक बार अपने पारिवारिक जीवन म क्रोधित होकर एक दास को पीटा था। काफिले के लोग उनको लेकर मिस्र मे आ गये।

ह० यूसुफ को बेचने के बाद भाइयो ने उनके कुर्ते को बकरी के खून मे तर करके विलाप करते हुए पिता के सामने उसको रख दिया वे सभी भेड़िया द्वारा उन्हें खा जाने की झूठी घटना गढ़ देते हैं। पिता ने उस कुर्ते को देखकर शका की, क्योकि वह कहीं से फटा नहीं था। अपनी बात की पुष्टि मे भाई एक भेड़िया को पकड़कर लाते हैं। ह० याकूब के पूछने पर अल्लाह उसका मुख खोल देता है और वह मानव वाणी मे कहता है कि वह मिस्र देश का रहने वाला है और अपने कुटुम्बी से मिलने के लिए वह यहाँ आया है। वह बिल्कुल निरपराध है भाइयों ने ही उनके

साथ अत्याचार किया है। मेहिये की इस बात को सुनकर पिता कुछ सन्तुष्ट हो गये। प्रिय पुत्र के वियोग मे तडपने लगे। नगर के बाहर रोदन भवन बनवाकर उसमें रहने लगे। रोते-रोते उनकी नेत्र ज्योति समाप्त हो गयी और वे अन्धे हो गये। रात-दिन उदासता म पुत्र की कुशलता के लिए कामना करते रहे और मिश्र में आने तक उनकी वही दशा बनी रही।

उधर मिस्र मे हजरत यूसुफ के रूपगुण की प्रशंसा सुगन्ध से मिश्र में शीघ्र ही फैल गयी। बादशाह और अजीज मिस्र के पास भी इसका समाचार पहुँचा। बादशाह ने अजीज क द्वारा मालिक क पास ह० यूसुफ को दरबार में लाने का आदेश दिया। अजीज उनको देखकर मोहित हो गया और शीघ्र ही मूर्छित हो गया होश आने पर उसने उनके पाव पर सर रख दिया। पर्याप्त धन देकर उनको खरीदने की अभिलाषा उनके मन म उत्पन्न हुई किन्तु बादशाह का आदेश सुनकर वह चला गया।

नगर के सभी सुन्दर नर-नारियों को दरबार में उपस्थित होने का आदेश दिया गया। उधर मालिक ह० यूसुफ को नील नदी में स्नान कराके पूर्ण रूप से सुसज्जित करके मिस्र नगर के ले गया। सारे नगर के लोग उनके रूप पर मोहित हो गये उनकी रूप छटा से सारा वातावरण निखर उठा। भानु सदृश यूसुफ की ज्योति से सभी ओझल हो गये, सभी के नेत्र चकाचौंध हो गये। गली-गली मे उनकी चर्चा होने लगी। परदे वाली औरतें भी परदा त्याग कर आ गयीं किसी ने दूसरे का कपडा पहन लिया और किसी ने उलटा पहन लिया। इस प्रकार जिसने भी उनको देखा बेसुध हो गया। कुछ लोग भीड मे दबकर मर भी गये। मालिक द्वारा दर्शन के लिए फीस निश्चित किये जाने पर भी भीड कम नहीं हुई। लोग जैसे पागल हो गये थे। कुछ लोग घर बार छोडकर उनके साथ हो गये। इस प्रकार वहाँ केवल ह० यूसुफ का जलवा दिखायी पड रहा था।

जुलेखा का हृदय महल में बैठे बैठे घबरा रहा था। और अपने प्रियतम की याद में व्याकुल हो रही थी। उसकी अभिलाषा वन में सैर करने को हुई पति से आज्ञा माग कर घूमने के लिए निकल पडी। मार्ग मे एक स्थान पर उसे जन भीड दिखलायी पडी। उसने एक व्यक्ति से इसके सम्बन्ध में पूछा। मालूम हुआ कि एक सुन्दर दास बिकने के लिए आया है जिसकी सुन्दरता की समता सूर्य भी नहीं कर सकता है। कौतूहल वश जुलेखा भी वहाँ आती है। और ह० यूसुफ को देखकर मूर्छित हो जाती है। सभी दासियाँ चिन्तित होती हैं लोगों की भीड इकट्ठा हो जाती है जल छिडकने पर होश आता है सहेलियाँ उसे घर ले जाती हैं। पूछे जाने पर उसने दासी स बताया कि यह वही पुरुष है जिसको उसने स्वप्न में देखा था। यही उसका स्वामी और प्रियतम है। इसीलिए वह अपना घर छोडकर मिस्र मे आयी थी।

मिस्र देश में ह० यूसुफ का बाजार गर्म हो गया। सारे मिस्र के लोग उनको खरीदना चाहते थे। कुछ लोगों की अभिलाषा यही थी कि उनका नाम खरीदारों की सूची में आ जाय। जुलेखा ने अपने पति से उनको खरीदने के लिए कहा। बादशाह स्वयं उनको खरीदना चाहता था। जुलेखा के सुझाव पर अजीज ह० यूसुफ को पुत्र बनाने के उद्देश्य से बादशाह से उनको खरीदने की अनुमति प्राप्त कर लेता है। जुलेखा ने अपना सारा धन देकर उनको खरीदवा लिया। उनको देखकर वह नित्य प्रसन्न रहती है और परमात्मा को धन्यवाद देती है क्योंकि बहुत दिनों के बाद उसकी मनोकामना के अनुसार उसका प्रियतम मिला है।

उनको खरीदने के बाद मिस्र के एक समृद्ध व्यापारी बादशाह की पुत्री बाजिया उनके रूप गुण को सुनकर मोहित हो जाती है और उनको खरीदने के लिए पर्याप्त धन लेकर आती है। उनको साक्षात देखकर ही और भी मोहित हो जाती है उनके बिक जाने का समाचार सुनकर उसको थोड़ी निराशा हुई उसने ह० यूसुफ से उनके रचयिता का परिचय पूछा उसका विश्वास था कि इतने सुन्दर पुरुष को बनाने वाला भी अद्वितीय सुन्दर होगा। उसके उत्तर में सम्पूर्ण सृष्टि के रचयिता अल्लाह की व्यापकता और उसके गुणों का विस्तार से वर्णन किया। उन्होंने सांसारिक नश्वर प्रेम को व्यर्थ बताया और उसे ईश्वर की ओर आकर्षित हो जाने का सुझाव दिया। बाजिया उनके एकेश्वरवाद से प्रभावित होकर उसी ओर उन्मुख हो जाती है और उसी पर ईमान लाती है। अपना अपार धन दान देकर अल्लाह की इबादत में लीन हो जाती है।

ह० यूसुफ को प्राप्त करके जुलेखा नित्य प्रसन्न रहने लगी। उनकी सेवा करके उसको आत्मीय सन्तोष मिलता था। नित्य नया वस्त्र पहनाकर और उनको सुसज्जित करके और उनके निखरे सौन्दर्य को देखकर आनन्दित होती थी। नित्य नये पकवान और फल का प्रबन्ध करती थी। फूलों की सेज सजाती थी। वह अपने प्रियतम को सभी प्रकार से सन्तुष्ट करके अपनी मनोकामना पूरी करना चाहती थी। एक दिन जुलेखा ने अपनी दासी से अपनी बेकरारी और अभिलाषा का वर्णन किया। प्राचीन काल में जब ह० यूसुफ के भाइयों ने उनको विभिन्न यातनायें देकर कुयें में फेंका था उस समय उसकी दशा बड़ी दयनीय और मन चञ्चल हो गया था। इस घटना का वर्णन करके वह ह० यूसुफ के साथ अपने आध्यात्मिक तथा आत्मीय सम्बन्धों की घनिष्टता का परिचय देना चाहती थी।

पुरुषत्व विहीन पति के कारण जुलेखा काम वासना से पूर्ण रूप से प्रभावित थी। एक अद्वितीय सुन्दर दास को रात-दिन अपने निकट पाकर वह सम्भोग के लिए व्याकुल हो उठी और इसके लिए बार-बार विभिन्न संकेत करने लगी। ह० यूसुफ उसका मनोवांछित उत्तर न देकर या तो मौन रहते या तो अस्वीकार कर देते। उसने उस पर पश्चाताप भी किया कि मैंने इसको क्यों खरीदा। वह कहते

नहीं पहुनती थी दीवारों से बातें करती रहती थी। वह बार-बार यही कहती कि अभी तक तो मैं बच्चा समझकर चुप रही किन्तु अब वह जवान हो गया किन्तु मेरे प्रति तनिक भी प्रेमभाव नहीं रखता। उसकी अन्तरग दासी ने उसकी उदासी का कारण पूछा जुलेखा ने अपनी सारी स्थिति प्रगट की और उससे उसका उपाय भी पूछा। एक दिन बूढ़ी दासी ने ह० यूसुफ से एकान्त में स्वामिनी की दयनीय स्थिति और उनकी मनोकामना का निवेदन किया। उत्तर में उसको एक जघन्य अपराध कहा गया। उन्होंने मुझको खरीदा है और पुत्र की तरह पाला है, अजीज मिस्र के बहुत आभार हैं, मैं उनकी अमानत में खयानत कैसे कर सकता हूँ। मैं नबियों के उच्च परिवार का एक सदस्य हूँ मुझको अपनी, अपने पूर्वजों और स्वामी की प्रतिष्ठा का पूर्ण ध्यान है अल्लाह ऐसे अपराध को कभी माफ नहीं करेगा। जुलेखा स्वयं अपना प्रस्ताव सुनाती है। ह० यूसुफ ने कहा यदि तुम मुझसे प्रेम करती हो तो मेरी भी अभिलाषाओं का ध्यान रखो। मैं इस पर किसी प्रकार सहमत नहीं हो सकता। दासी के परामर्श पर जुलेखा अपनी सहेलियों को सुन्दर भड़कीले पारदर्शी वस्त्रों में सजाकर एक मनमोहक दिलकुशा बाग में ह० यूसुफ को मोहित करने के लिए भेजती है। सहेलियाँ विभिन्न कामासेजक हाव भाव से उस मोहक वातावरण में उनको सम्भोग के लिए प्रेरित करती है। ह० यूसुफ दृष्टि नीची किये उनकी बातें सुनते रहे बाद में उनको भी एकेश्वरवाद का उपदेश दिया। सहेलियों पर इस उपदेश का प्रभाव पड़ा। व ह० यूसुफ की मुरीद बन जाती हैं और अल्लाह पर ईमान लाती हैं तथा उसकी उपासना में लीन हो जाती हैं। ह० यूसुफ को इस पर बड़ा सन्तोष होता है और जुलेखा को अपनी असफलता पर बड़ी निराशा हुई।

दासी की सहायता से जुलेखा एक सात खण्ड महल तैयार कराती है उसमें अनेक मनमोहक कामुक चित्र बनवाती है। ह० यूसुफ और जुलेखा के विभिन्न मुद्राओं में युगल रति चित्र प्रत्येक खण्ड की चारों दीवारों छत और फर्श पर बनाए जाते हैं। एक दिन जुलेखा मनमोहक कामुक वस्त्रों में पूर्णरूप से सुसज्जित होकर ह० यूसुफ को महल में बुलाती है और सम्भोग की मनोकामना व्यक्त करती है और इस प्रकार उनको सातवें महल में ले जाकर उनका वस्त्र पकड़कर कामुक हो जाती है। ह० यूसुफ अजीज मिस्र और अपने परिवार का हवाला देते हैं और अल्लाह के भय का स्मरण करते हैं। कामुक जुलेखा विष देकर पति को मार डालने का सुझाव देती है किन्तु ह० यूसुफ रंच मात्र भी प्रभावित न होकर निरन्तर नीचे ही देखते रहे। अन्त में जुलेखा कटार निकाल आत्म हत्या पर तैयार हो जाती और यह कहती भी है कि इस अपराध का दण्ड तुम्हें ही भुगतना पड़ेगा। एक स्वामिभक्त सेवक की भाँति स्वामिनी की प्राण रक्षा के लिए वे उसका हाथ पकड़ लेते हैं और उसकी प्रत्येक मनोकामना की पूर्ति के लिए तैयार हो जाते हैं। जुलेखा इस पर बहुत प्रसन्न होती है और विविध प्रकार से उनको प्रेम करती है। जुलेखा के इस प्रेम और

कामुक स्पर्श से कुछ प्रभावित होने लगते हैं और उनमे भी काम वासना का उदय होने लगता है। उस समय उनको अल्लाह का साया दिखलाई पड़ता है और बाद मे पिता की मूर्ति लाठी लिए दिखलाई पड़ती है उसी समय उनको महल में एक पर्दा दिखलाई पड़ता है और वे जुलेखा से उसका रहस्य जानने की इच्छा प्रगट करते हैं जुलेखा परदा हटाकर अपने अराध्य देव की मूर्ति दिखाती है और ये स्पष्ट करती है कि उसने उस पर इसी लिए पर्दा डाल रखा है कि उसका देवता इस जघन्य पाप को न देख सके। ह० यूफुफ ने कहा कि तुम इस मानव निर्मित पत्थर की मूर्ति को अपना आराध्य देव मानती हो और उससे भयभीत होती हो, जो स्वयं अपनी सहायता नहीं कर सकता मेरा अल्लाह तो सर्वशक्तिमान है सवव्यापक है और सबकुछ देखने वाला है ऐसी स्थिति म मुझे भी उससे डरना चाहिए अत व वहाँ से भाग जाते हैं और बिस्मिल्लाह बोलकर प्रत्येक ताले पर हाथ मारते हैं जिससे ताले टूट जाते हैं और दरवाजे खुल जाते हैं। जुलेखा उनका पीछा करती है और पीछे से उनके कुर्ते का दामन पकड लेती है जो फटकर उसी के हाथ मे रह जाता है। भागते हुए सातवें द्वार पर अजीज उनसे मिल जाते है और उनकी बेचैनी का कारण पूछते हैं। ह० यूसुफ बहाना बनाकर सारी बात छिपा देते हैं। अजीज हाथ पकडकर महल मे उनको ले जाते हैं और वहाँ जुलेखा की अस्त–व्यस्त दशा देखकर उसका कारण पूछते है। जुलेखा को यह भ्रम हो जाता है कि ह० यूसुफ ने सारी बात बता दिया होगा अत वह उन पर बलात्कार का दोष लगाकर कारावास मे भेज देने का सुझाव देती है। ह० यूसुफ उसका विरोध करते हैं और उसी को दोषी बताते हैं किन्तु अजीज ने ह० यूसुफ को अनेक प्रकार से डांटकर उनको जेल मे भेज दिया। परमात्मा वहाँ उनकी सहायता करता है। किसी सम्बन्धी का दुध–मुहा बालक अकस्मात बोलकर ह० यूसुफ की सफाई देता है। उसने कुर्ते क फटने और उसकी स्थिति को अपराधी की कसौटी बताया उसके अनुसार कुर्ता यदि पीछे से फटा हो तो अपराधी जुलेखा है और आगे से फटा है तो ह० यूसुफ, वास्तव म कुर्ता पीछे से फटा था। इस प्रकार जुलेखा अपराधी मानी गई। अत ह० यूसुफ को पुन. महल म बुला लिया गया और वे सम्मानपूर्वक रहने लगे।

जुलेखा का यह दूषित चरित्र और ह० यूसुफ के साथ उसका व्यवहार नगर की प्रतिष्ठित स्त्रियों म सामान्य चर्चा का विषय बन गया। नारियाँ जुलेखा को ताना देने लगीं और इस प्रकार उसके अतिशय कामुकता की निन्दा होने लगी। औरतो का मुँह बन्द कराने के लिए और वहाँ वास्तविक स्थिति से अवगत कराने क लिए उनको निमन्त्रित किया और सुन्दर भोजन का प्रबन्ध किया गया। सबके सामने एक चाकू और सन्तरा तथा नीबू दिया गया और निश्चित समय पर उसे काटने का निर्देश दिया गया। जुलेखा ह० यूसुफ को सजाकर उनके सामने से जाती है। नारियाँ उसके सौन्दर्य को देखकर मोहित हो गईं और अपना अपना हाथ काट बैठीं।

नींबू काटते समय सभी ने अपना हाथ काट लिया और उनसे खून प्रवाहित होकर जब उनका शरीर और वस्त्र लाल हो गया तभी उनको इसका अनुभव हुआ। जुलेखा उनके इस व्यवहार पर हँसने लगी और नारियाँ बहुत लज्जित हुई। उन लोगो ने कहा कि यह अतिशय सुन्दर दास सामान्य मानव नहीं कोई फरिश्ता है। ऐसे सुन्दर रूप को पाकर कोई भी विचलित हो सकता है। अतः उन लोगों ने जुलेखा को निर्दोष बताया।

नारियाँ जुलेखा की सहायता करने का निश्चय करती हैं और वे स्वयं ह० यूसुफ को अपने कामुक प्रदर्शनों से आकर्षित करने का विविध प्रयास करती है किन्तु ह० यूसुफ पर उनका कोई प्रभाव नहीं पड़ा। ह० यूसुफ उनके इस अपवित्र व्यवहार से बहुत दुखी होते हैं और यह स्पष्ट कह देते हैं कि महल के इस अपवित्र वातावरण मे जीवन बिताने से अच्छा कारावास मे रहना है। नारियाँ ह० यूसुफ को कारावास में भेजने का सुझाव देती हैं उनका विश्वास था कि विभिन यातनाओं से ही उनको मार्ग पर लाया जा सकता है।

जुलेखा एक बार पुनः ह० यूसुफ को समझाती है और जेल अथवा प्रेम दो प्रस्ताव सामने रखती है। ह० यूसुफ ने जेल जाना स्वीकार कर लिया। जुलेखा अपनी निन्दा और सम्मान का हवाला देकर अजीज से उनको जेल में भेजवा देती है और चारों ओर ढिंढोरा पिटवाकर उनके जघन्य अपराध की घोषणा कर देती है। ह० यूसुफ जेल मे जाकर प्रसन्न जीवन व्यतीत करने लगते हैं। जेल और जेल के अधिकारी तथा अन्य कैदी उनको पाकर कृत-कृत्य हो जाते हैं। जेल का उच्च अधिकारी उनको सम्पूर्ण कैदियों का स्वामी बना देता है। इस कारण अधिकारी को लौकिक एवं पारलौकिक उपलब्धि हुई। जेल में भेजकर जुलेखा बहुत दुखी हुई और रात दिन मछली की भाँति तड़पने लगी। वह रात्रि में स्वयं कारावास में जाकर अपने प्रियतम के दर्शन का प्रयास करती और उनकी सुख सुविधा की समुचित व्यवस्था का आदेश भी देती। बाद मे वह दासो को भेजकर उनका समाचार मगवाती और अपने महल की छत और खिड़की से रात दिन कारावास की ओर देखती रहती। इस प्रकार वह प्रियतम के लिए पागल सी हो गई। दासियाँ उनकी इस दयनीय स्थिति मे उसकी सहायता करती उसका दिन तो किसी प्रकार बीत जाता किन्तु रात मे वह अधिक विरह व्यथित हो जाती। तारे गिन-गिन कर रात बिताती प्रियतम के खान-पान की चिन्ता से व्यथित होती कुछ दिन तक सुन्दर भोजन पकाकर कारावास में भेजती रही और स्वयं खाना पीना भी छोड़ दिया। रात दिन अपने आराध्य देव से प्रियतम मिलन की प्रार्थना करती। इस प्रकार वह विरह का दयनीय जीवन व्यतीत करने लगी।

कारावास में बादशाह के दो दरबारी अपराधी आये हुए थे एक रसोइयाँ दूसरा पिलाने वाला था। ह० यूसुफ दोनों के संरक्षक बनाये गये हैं। एक रात दोनों

ने स्वप्न देखा और प्रातः काल जागने पर बहुत उदास हुए। ह० यूसुफ ने उनकी उदासी का कारण पूछा दोनों ने स्वप्न का वर्णन किया और उसका फल जानने की इच्छा प्रकट की। ह० यूसुफ में दैवी शक्ति से स्वप्न व्याख्या का गुण विद्यमान था। उन्होंने उन दोनों के स्वप्न की विधिवत व्याख्या कर दी। पिलाने वाले का स्वप्न यह था कि उसने स्वप्न में अंगूर के तीन गुच्छे देखे हैं और वह उनका रस निचोड़ रहा है। ह० यूसुफ ने यह स्पष्ट किया कि तीन दिन में वह दरबार में उपस्थित होगा और अपने पद पर पुनः प्रतिष्ठित होकर बादशाह को शराब पिलायेगा। उन्होंने यह भी कहा कि जब उसकी मुक्ति हो जायगी तो बादशाह को स्वयं उनका स्मरण दिलायेगा और मुक्ति का सुझाव देगा। रसोइया का स्वप्न था कि उसके सिर पर पकी रोटियों की तीन टोकरियां हैं और चिड़िया ऊपर से रोटियां खा रही हैं। ह० यूसुफ ने इसकी व्याख्या इस प्रकार दी कि तीन दिन में उसको दरबार में शूली पर चढ़ा दिया जायगा और उसका मांस चिड़िया नोच-नोच कर खायेंगी। तीन दिन के बाद यह दोनों व्याख्यायें बिल्कुल सत्य हुईं किन्तु पिलाने वाला उनके वचन को भूल गया और वे कुछ दिन तक कारावास में ही पड़े रहे।

इसके पश्चात् मिस्र के बादशाह ने रात्रि में दो स्वप्न देखे और उन दोनों की प्रकृति बिल्कुल समान थी। पहला स्वप्न था कि नील की घाटी में सात मोटी और सुन्दर भेड़ चर रही हैं दूसरी ओर से सात दुबली और कुरूप भेड़ें निकलती हैं और पहली सात को निगल जाती हैं। दूसरा स्वप्न था कि सात मोटी और हरी बालें हैं और उसके बाद सात पतली और मुरझाये बालें निकलीं और पहली सात को चाट गयीं। प्रातः काल वह बहुत उदास हुआ मिस्र के सभी ज्योतिषियों, विद्वानों धार्मिक नेताओं को बुलाकर इसकी व्याख्या की अभिलाषा व्यक्त की सभी ने इस स्वप्न को असाध्य कहा और कोई उसकी व्याख्या नहीं कर सका। उसी समय पिलाने वाले को अपने कारावास के जीवन, स्वप्न और उसका फल तथा ह० यूसुफ की याद आ गई। उसने इसका उल्लेख बादशाह से किया। बादशाह ने ह० यूसुफ को दरबार में उपस्थित करने का आदेश दिया। पिलाने वाला कारागार में जाकर ह० यूसुफ के सामने बादशाह के स्वप्न और उनकी मनोकामना का वर्णन किया। ह० यूसुफ ने इस स्वप्न को सच्चा बताया और उसकी व्याख्या करनी चाही। उन्होंने यह स्पष्ट कर दिया कि पहले नगर की महिलाओं को बुलाकर स्वयं उनके अपराधों की जांच की जाये जिसके कारण उनको जेल में भेजा गया है। नगर की महिलाओं ने दरबार में ह० यूसुफ को निरपराध घोषित किया। स्वयं जुलेखा जिसकी कामवासना अब तक अपने अपराध को स्वीकार कर लेती है। ह० यूसुफ सुन्दर वस्त्रों में और पूर्ण रूप से सज-धज कर दरबार में उपस्थित होते हैं और बादशाह के दोनों स्वप्नों की व्याख्या प्रस्तुत करते हैं। उन्होंने कहा कि सात वर्ष

मिस्र में खूब वर्षा होगी कृषि हरी भरी रहेगी अनाज अधिक पैदा होगा सारा देश धन-धान्य से पूर्ण रहेगा पुन सात वर्ष देश में भयंकर अकाल पड़ेगा, एक बूंद भी पानी नहीं बरसेगा सभी लोग भूख और प्यास से तड़पने लगेंगे, सारा देश त्राहि-त्राहि करने लगेगा। उन्होने इस भयंकर स्थिति का सुझाव भी सामने रखा जो बादशाह को पसन्द आया। अमीरों के विरोध करने पर भी बादशाह ने ह० यूसुफ को अपना मन्त्री बना लिया और उनको पूर्ण रूप से सजाकर नगर में उनके अधिकार और महान पद की घोषणा करा दी। अजीज मिस्र को इससे हार्दिक कष्ट हुआ और इसी शोक में उसकी मृत्यु हो गयी। अनाथ जुलेखा दयनीय जीवन व्यतीत करने लगी।

सुकाल के सात वर्षों में यूसुफ ने मिस्र में नवीन कृषि व्यवस्था का आरम्भ किया सभी प्रकार की भूमि का सदुपयोग किया। छोटे-छोटे राज्यों को मिलाकर एक केन्द्रीय शासन की व्यवस्था की। सम्पूर्ण उपज का नियन्त्रण अपने हाथ में रखा और उपज का निश्चित भाग वसूल करके उसको सरकारी भण्डार में जमा करा दिया। इस प्रकार सारे देश मे अन्न का पर्याप्त भण्डार जमा करा दिया। देश की अर्थव्यवस्था म आमूल परिवर्तन हो गया। प्रजा सुख का जीवन व्यतीत करने लगी। देश की सुरक्षा व्यवस्था का समुचित प्रबन्ध होने के कारण चारों ओर शान्ति का वातावरण छा गया। अकाल के सात वर्षों में देश की बडी दुर्दशा हुई किन्तु हजरत यूसुफ ने सरकारी अन्न भण्डार से लोगों को पर्याप्त भोजन सामग्री वितरित करायी और मनमाने मूल्य पर बेचने लगे। मिस्र के अतिरिक्त अन्य देशों के लोग भी अन्नखरीदने के लिए यहाँ आने लगे।

पति की मृत्यु के पश्चात सुख सुविधा का जीवन व्यतीत करने वाली जुलेखा की दशा बडी दयनीय हो गयी किन्तु उसका मन निरन्तर प्रियतम में लीन रहता। उसका खाना पीना छूट गया था। वह कभी प्रियतम का नाम जपती कभी छाती पीटती थी और कभी अंगुली से भूमि पर खत लिखकर पवन के माध्यम से प्रियतम को सन्देश भेजती थी। जो कोई भी प्रियतम का नाम लेता अथवा उनका समाचार बताता उसको वह पर्याप्त धन दिया करती थी। इस प्रकार प्रियतम के नाम पर अपनी सारी धन सम्पदा लुटाकर वह दीन भिखारी हो जाती है। सहेलियाँ और दासियाँ उसका साथ छोड देती हैं। वह वियोग में रोते-रोते बूढ़ी हो जाती है उसके बाल श्वेत हो जाते हैं। नगर के बाहर एक मार्ग के किनारे झोपडी बनाकर जीवन बिताने लगती है। रोते-रोते उसकी नेत्र ज्योति समाप्त हो जाती है और वह बिल्कुल अन्धी हो जाती है आस-पास के बालक ह० यूसुफ के आगमन का झूठा समाचार सुनाकर उसको चिढाते हैं। एक दिन अपनी मूर्तियों से प्रार्थना करती हुई नेत्रों की ज्योति मागती है उसम उसको निराशा होती है अत उनसे क्रुद्ध होकर उनको अशक्त जानकर तोड डालती है। अपनी झोपडी के एकान्त में सर्व शक्तिमान

परमात्मा से प्रार्थना करती है और बार-बार मस्तक झुकाकर उसको सिजदा करती है और ह० यूसुफ के मार्ग पर खड़ी होती है। वहां ह० यूसुफ की सवारी आती है। जुलेखा चिल्ला-चिल्लाकर उस परमात्मा की प्रशंसा करती है जिसने एक दास को बादशाह के समान बना दिया है।

ह० यूसुफ उसकी प्रार्थना सुन लेते हैं और अपने सेवक को उस वृद्धा नारी को दरबार में उपस्थित करने का आदेश देते हैं। नारी की उस पुकार से ह० यूसुफ के हृदय को बड़ी ठेस लगी और अपने सेवक के साथ स्वयं झोपड़े में जाकर उसका परिचय पूछते हैं जुलेखा ने अपनी दशा का कारण बताया और अपने प्राचीन संबंधों का उल्लेख किया। ह० यूसुफ ने उसकी मनोकामना पूछी उसके मन में सम्भोग की कामना अब भी विद्यमान थी और अपनी नेत्र ज्योति एवं यौवन की अभिलाषा व्यक्त की। उसकी प्रार्थना को सुनकर ह० यूसुफ विचार व्यथित हो जाते हैं। ह० जिबरईल उनकी सहायता के लिए स्वर्ग से आते हैं और अल्लाह द्वारा स्वर्ग में दोनों के विवाह का शुभ समाचार सुनाते हैं। उन्होंने स्पष्ट किया कि संसार में भी दोनों का विवाह हो जाना चाहिए। ह० यूसुफ उसके लिए प्रार्थना करते हैं जुलेखा को नेत्र ज्योति प्राप्त हो जाती है और पुर्नयौवन मिल जाता है वह सोलह वर्षीय नवयुवती बन जाती है और महल में लायी जाती है सहेलियाँ उसका पूर्ण शृंगार करती हैं और बड़े धूमधाम से इस्लामी रीति के अनुसार दोनों का निकाह होता है। विवाह के पश्चात दोनों सम्भोग सुख से तृप्त हो जाते हैं। और ह० यूसुफ-जुलेखा से कौमार्य सुख का अनुभव करते हैं और इस रहस्य को जुलेखा स्पष्ट भी कर देती है।

अधिकांश कवियों ने इसी स्थान पर अपने प्रेमाख्यान का अन्त कर दिया है। ऐसे कवियों में फारसी कवि जामी का नाम विशेष रूप से लिया जा सकता है। मीरां हाशिमी ने भी दोनों के विवाह के बाद ही काव्यान्त कर दिया है। कुछ कवियों ने ह० यूसुफ के प्रारम्भिक स्वप्न की सार्थकता प्रमाणित सिद्ध करने के लिए भाइयों को दरबार में लाने तथा माता-पिता और भाइयों द्वारा सिजदा कराने का भी प्रसंग जोड़ दिया है। अधिकांश कवियों ने ह० यूसुफ की मृत्यु के पश्चात जुलेखा के करुण अन्त के साथ काव्य का अन्त किया है। शेख निसार और मोहम्मद नज़ीर का नाम इस दृष्टि से विशेष उल्लेखनीय है। अमीन गुजराती ने दोनों की मृत्यु के पश्चात उत्पन्न प्रभाव को चित्रित करने के लिए कुछ अधिक प्रसंगों की योजना की है। इस प्रकार कथानक का विकास आगे होता है।

मिस्र के साथ कनआनों में भी भयंकर अकाल आया हुआ था मिस्र में अपरिमित अन्न भण्डार की सूचना प्राप्त करके ह० याकूब अपने दस पुत्रों को अन्न खरीदने के लिए भेजते हैं। वे सभी मिस्र के दरबार में उपस्थित होते हैं। ह० यूसुफ उनको पहचान लेते हैं किन्तु भाई उनको नहीं पहचान पाते। ह० यूसुफ उनका

परिचय पूछते हैं और पुन: अपने छोटे भाई बिनयामीन को लेकर यहाँ आने का सुझाव देते हैं उनको पर्याप्त अन्न देकर विदा करते हैं और सभी की बोरियों में उनका धन भी रख देते हैं। पर्याप्त अन्न प्राप्त करके ह० याकूब और उनके परिवार के लोग प्रसन्न होते हैं। दूसरी बार दुगुना धन लेकर ग्यारह भाई मिस्र आते हैं पूर्ण सुरक्षा का वचन लेकर ही ह० याकूब ने बिनयामीन को जाने दिया था ह० यूसुफ अपने छोटे भाई को देखकर बहुत प्रसन्न होते हैं और उन सब की दावत का प्रबन्ध करते हैं और दो-दो व्यक्ति एक साथ बैठकर भोजन करने का आदेश देते हैं। वे स्वयं बिनयामीन के साथ बैठकर खाना खाते हैं और इसी बीच दोनों भाई एक दूसरे को पहचान लेते हैं। कटोरे की चोरी लगाकर बिनयामीन को अपने पास रख लेते हैं जिससे भाइयों की बड़ी दयनीय स्थिति हो जाती है। उनमें कुछ तर्क-जन्य उत्पन्न हो ही रही थी तब तक वे ह० यूसुफ की महान शक्ति और अपनी असहायता को जानकर मौन हो जाते हैं अपनी लाचारी और पिता की व्याकुलता का वर्णन करते हैं। भाइयों की यह दयनीय स्थिति देखकर ह० यूसुफ अपने को प्रकट कर देते हैं। सभी भाई एक दूसरे से मिलकर बहुत प्रसन्न होते हैं। ह० यूसुफ अपना कुर्ता पिता के चेहरे पर मारने के लिए देते हैं और समस्त परिवार को मिस्र में लाने का आदेश देकर भाइयों को भेज देते हैं भाई सारा समाचार पिता को सुनाते हैं। कुर्ते को स्पर्श से ह० याकूब की नेत्र ज्योति प्राप्त हो जाती है। उनका सारा परिवार मिस्र में आ जाता है। ह० यूसुफ और मिस्र का बादशाह 'रय्यान' सभी का स्वागत करते हैं और उन सभी को मिस्र के सर्वोत्तम क्षेत्र में बसा दिया जाता है। सभी सुख पूर्वक रहने लगते हैं। वे सभी ह० यूसुफ के सामने सिजदा करते हैं जिससे उनके प्रारम्भिक स्वप्न की सार्थकता प्रमाणित हो जाती है। कुछ दिनों के बाद ह० याकूब की मृत्यु हो जाती है सारे देश में शोक मनाया जाता है ह० यूसुफ अपने पुत्रों के साथ विलाप करते हैं और उनके शरीर में सुगन्धित पदार्थ लगाकर दफना देते हैं।

बहुत दिनों तक सुखी दाम्पत्य जीवन व्यतीत करने के बाद ह० यूसुफ एक रात अपने माता पिता को स्वप्न में देखते हैं जिसमें उन्हें स्वर्ग में बुलाया गया था। इसका वर्णन ह० यूसुफ अपनी प्रियतमा जुलेखा से करते हैं। इसको सुनकर जुलेखा बेहोश होकर गिर पड़ती है। इसी बीच ह० जिबरईल स्वर्ग से एक दिव्य सेब लेकर उपस्थित होते हैं और सूँघने का आदेश देते हैं। उसको सूँघते ही ह० यूसुफ की मृत्यु हो जाती है उनके शरीर में सुगन्धित पदार्थ लगाकर दफना दिया गया और सारे परिवार और राज्य में सात दिन तक शोक मनाया गया।

होश आने पर जुलेखा को जब प्रियतम की मृत्यु का समाचार मिला तो वह तड़पती हुई उनकी कब्र पर गयी और कब्र से लिपटकर अनेक प्रकार विलाप करने लगी पूर्व जीवन की सम्पूर्ण घटनाओं प्रियतम के सम्बन्धों और अपनी विरह और

दाम्पत्य जीवन का स्मरण करके वह व्याकुल हो गयी। प्रियतम को भूमि के भीतर लेटे होने के कारण उसने उनको इस रूप में नहीं देख पाया। उत्तेजित होकर उसने अपनी अँगुलियों से दोनों नेत्र निकालकर कब्र पर फेंक दिया। थोड़ी देर के बाद कब्र पर विलाप करते हुए उस चिर विरहिणी की जीवन लीला समाप्त हो जाती है। और अन्त में अपने प्रियतम से मिल गयी। उसके पुत्रों ने अपनी प्रेम विह्वला-माता को पिता की कब्र में ही दफ़ना दिया।

मरने के बाद भी उसके हृदय में विरह की अग्नि जल रही थी उसकी अग्नि से ह० यूसुफ का शरीर जलने लगा। इस कारण सम्पूर्ण पृथ्वी दहकने लगी देश का सारा जल समाप्त हो गया और भयंकर सूखे के कारण देश त्राहि-त्राहि करने लगा। पण्डितों की सलाह से ह० यूसुफ की लाश निकाल कर नील नदी में डुबो दी गयी। उनकी सुगन्ध नील के जल के साथ चारों ओर प्रवाहित हो गयी और उनकी दैवी शक्ति लेकर अकाल की भयंकरता समाप्त हो गयी। लाश नील नदी में पड़ी रही और चार सौ वर्ष बाद ह० मूसा के समय जब इसराइलियों का निष्कासन मिश्र से हुआ तब लाकर बैतुलमुकद्दस में दफना दी गयी।